प्रथम संसद्
१९५२–१९५७

स्मृति ग्रंथ

विषय-

पृष्ठ

लोक-सभा सचिवालय, नई दिल्ली

परिशिष्टों की सूची

1057 L.S.—(a)

चित्र-सूची

फलक :

आमुख

भारत के लिये लोकतन्त्र की कल्पना नवीन नहीं है। वस्तुतः स्वशासन का तत्व हमारे पुरातन युग में भी विद्यमान था। लगभग ७ वर्ष हुए, देश ने एक संविधान अंगीकृत किया जो व्यक्ति की स्वाधीनता और समानता तथा विधि के शासन के सिद्धान्तों पर आधारित था। हमने सरकार का लोकतन्त्रात्मक स्वरूप इसलिये अपनाया कि यह हमारे लोगों की प्रतिभा के अनुकूल था। हमारे देश की पहली संसद् सार्वजनिक वयस्क मताधिकार के आधार पर १३ मई, १९५२ को गठित हुई। यह लोकतन्त्र के इतिहास में स्वतः एक महत्वपूर्ण तथा अद्वितीय अनुभव था। इसके पहले कभी भी इतने विशाल निर्वाचक-वर्ग ने अपने मताधिकार का प्रयोग नहीं किया था। यह उन लोगों की राजनीतिक जागृति को एक चुनौती थी, जिन्होंने अभी हाल ही में पूर्ण राष्ट्रत्व प्राप्त किया था। हम इस चुनौती के अनुकूल सिद्ध हुये, यह संविधान-निर्माताओं के राजनीतिक बुद्धि-परिपाक के प्रति एक श्रद्धांजलि है।

प्रथम संसद् का कार्य-काल समाप्त हो रहा है और दूसरी संसद् का निर्माण हो रहा है। प्रत्येक दृष्टि से प्रथम संसद् की सफलतायें हमारे राष्ट्र के इतिहास में स्वर्ण-अक्षरों में अंकित रहेंगी। इसके कार्य के प्रति एक उपयुक्त श्रद्धांजलि के रूप में इस प्रकाशन में प्रथम संसद् के महत्वपूर्ण कार्यकलापों का एक चित्र देने का प्रयास किया गया है। यह आशा की जाती है कि हमें जो सफलतायें प्राप्त हुई हैं, उनकी एक झलक पाठकों को इसमें मिल जायेगी और साथ ही साथ उन्हें यह भी पता चल जायेगा कि एक आधुनिक संसदीय संस्था के कार्यकलाप में कितना वैविध्य होता है।

नई दिल्ली,
२५ मार्च, १९५७

म० अनन्तशयनम् अय्यंगार
अध्यक्ष, लोक-सभा

संसदीय लोकतंत्र का भविष्य*

लोकतंत्र उद्देश्य की पूर्ति का एक साधन है। हमारा उद्देश्य क्या है? प्रत्येक व्यक्ति सुखी जीवन व्यतीत कर सके, संभवतः यही हमारा उद्देश्य है। इस 'सुखी जीवन' में अनिवार्य भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ ही व्यक्ति की सर्जनात्मक वृत्तियों के विकास का अवसर भी सम्मिलित है।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखने पर संसदीय लोकतंत्र विगत डेढ़ सौ अथवा दो सौ वर्षों के विकास की कहानी है। अभी कुछ ही समय व्यतीत हुआ होगा, जब थोड़े व्यक्तियों को ही मतदान का अधिकार था। अनेक देशों में वयस्क मताधिकार का आरम्भ पिछले तीस वर्षों के भीतर ही हुआ है। समस्याओं के हल की दिशा में यह पद्धति कहां तक उपयुक्त सिद्ध होगी, इस अल्प अवधि में यह बताना कठिन है। किसी भी कार्य की अन्तिम कसौटी यह है कि देश अथवा जनता की समस्याओं का हल कहां तक होता है। यह सच है कि सरकार के द्वारा ही समस्याओं का हल निर्भर नहीं है। यह प्रश्न बहुत कुछ जनता के स्तर, उनके प्रशिक्षण, शिक्षा-दीक्षा, और शक्ति आदि अनेक बातों पर यह आधारित है। सरकार तो अन्तर्भूत गुणों के विकास में सहयोग प्रदान कर बाधाओं को दूर करते हुए उन्हें आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित कर सकती है।

लोकतंत्र की व्याख्या भूतकाल में मुख्यतः राजनैतिक लोकतंत्र के रूप में ही की गई है। इसमें सामान्यतया प्रत्येक मतदाता को प्रतिनिधित्व प्राप्त रहता है। लेकिन दुःखी और निराश अथवा क्षुधित और अभावग्रस्त व्यक्ति का प्रतिनिधित्व अकेले मत में ही सन्निहित नहीं है। आर्थिक लोकतंत्र का प्रसार, समानता, जीवन की अच्छाइयों का दूसरों में प्रचार और तीव्र विषमता की भावना दूर करना—इन सब बातों की जब तक पूर्ति नहीं हो जाती तब तक राजनैतिक लोकतंत्र अपूर्ण है।

हमारी सम्मति में आज अनेक ऐसी महत्वपूर्ण समस्यायें हैं, जो इस आणविक युग के प्रारम्भ में पुरानी हो सकती हैं। अणुशक्ति के प्रादुर्भाव से मानव जीवन में एक महान परिवर्तन हो गया है अथवा शीघ्र ही उसकी सम्भावना है। अणुशक्ति हमें इस बात का निर्णय करने के लिये विवश कर देती है कि हम उस शक्ति का प्रयोग किस प्रकार करने जा रहे हैं और इन समस्याओं का सामना नये ढंग से किस प्रकार किया जाये।

हम लोकतंत्र में विश्वास रखते हैं। मेरी इस धारणा का सर्वप्रथम कारण यह है कि यह उद्देश्य की पूर्ति का उपयुक्त माध्यम है—समस्यायें हल करने का शान्तिपूर्ण साधन है; दूसरे, यह दबाव डालने के उन तरीकों को दूर कर देता है जिनका प्रयोग अन्य प्रकार की सरकारों के अन्तर्गत व्यक्ति पर किया जाता है। यह स्व-अनुशासन है। इसका अभिप्राय है कि जो लोग सहमत नहीं हैं—संभवतः अल्पसंख्यक लोग—वे भी इसे स्वीकार करते हैं। क्योंकि संघर्ष की अपेक्षा स्वीकार कर लेना श्रेयस्कर है। और यदि आवश्यकता हुई तो शान्तिपूर्ण ढंग से इसमें परिवर्तन कर स्वीकार कर लेना ही उचित है। यदि यह शान्तिपूर्ण तरीका नहीं है तो फिर यह लोकतंत्र नहीं हो सकता; यह कुछ और है।

दूसरे, लोकतंत्र व्यक्ति को विकास करने का पूर्ण अवसर प्रदान करता है। किन्तु इस अवसर का अभिप्राय अव्यवस्था और उच्छृंगलता की वह स्थिति नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनमानी करे। ऐसा करने से समाज में अराजकता फैल जायेगी। किसी भी सामाजिक संगठन में परस्पर सूत्रबद्ध होने के लिये अनुशासन की आवश्यकता होती है लोकतंत्र के उचित विधान में अनुशासन के लिये हम स्वयं उत्तरदायी हैं। अनुशासन के अभाव में लोकतंत्र स्थिर नहीं रह सकता है।

---

*२५ फरवरी, १९५६ को नई दिल्ली, में "संसदीय लोकतंत्र" गोष्ठी के अवसर पर प्रधान मंत्री द्वारा दिये गये, उद्घाटन भाषण के उद्धरण। 'इण्डियन ब्यूरो आफ पार्लियामेंटरी स्टडीज' की अनुमति से साभार उद्धृत।

लोकतंत्र की संसदीय पद्धति की चर्चा करते समय हमें मालूम होता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में सरकार की प्रवृत्ति यह रही है कि कम से कम शासन किया जाये अथवा न्यूनतम विधान बनाये जायें। लेकिन आज सरकार को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है वे इतनी अधिक हैं कि बहुधा इस बात में संदेह होता है कि इन समस्याओं के निबटाने में सामान्य संसदीय प्रक्रिया पर्याप्त होगी। आजकल संसद् को कठिन परिश्रम करना पड़ता है। विगत युग की अपेक्षा यह काम बहुत अधिक है। सरकारी कार्य और संसद् का कार्य दिनोंदिन जटिल होता जा रहा है और इस बात में थोड़ा संशय होने लगता है कि संसदीय लोकतंत्र का कार्य-संचालन किस प्रकार होगा और किस प्रकार समस्यायें हल होंगी। प्राधिकारों का कुछ न कुछ वितरण आवश्यक जान पड़ता है। अच्छे ढंग से कार्य संचालन के लिये इस तरह की तदबीर आवश्यक है, अन्यथा अनेक समस्यायें हल नहीं हो सकेंगी। हल न की गई समस्यायें बड़ी खतरनाक होती हैं। शासन के स्वरूप में शनैः शनैः सर्वत्र परिवर्तन हो गया है। किसी देश का ढांचा पुंजीवादी है तो किसी का समाजवादी या इन दोनों के मध्य का—यह परिवर्तन से बच नहीं सका है। इन देशों की सरकारें आज पर्याप्त सीमा में सामाजिक कार्यों की पूर्ति करती हैं। किसी की मूलभूत नीति चाहे कुछ हो सरकार का सामाजिक कार्यों में लिप्त होना अनिवार्य सा है। फिर, संसदीय लोकतंत्र को कैसा रूप दिया जाये कि वह संतोषजनक, प्रभावशाली ढंग से और यथासमय शासन के कार्य और उत्तरदायित्व का भार वहन कर सके। यह सब काम किया जा सकता है किन्तु इसके लिये पर्याप्त समय की आवश्यकता है। तब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या प्राधिकार का अवक्रमण सम्भव है ताकि इन समस्याओं को शीघ्रतापूर्वक एवं प्रभावशाली ढंग से हल किया जा सके ?

संसदीय लोकतंत्र सर्वत्र आर्थिक लोकतंत्र की दिशा में प्रवृत्त हो रहा है। इसके अनेक रूप हो सकते हैं। जिस अंश में इससे आर्थिक समस्यायें हल होती हैं उतनी ही सीमा में राजनैतिक क्षेत्र में भी सफलता मिलती है। क्योंकि यदि ऐसा नहीं हुआ तो राजनीतिक ढांचा कमजोर होकर छिन्न-भिन्न हो जायेगा।

इंगलैंड और ब्रिटिश संसदीय संस्थाओं से दीर्घ काल तक हमारा सम्बन्ध रहा है। स्वाभाविक है कि हमारी विचार-पद्धति भी ब्रिटिश संसदीय संस्थाओं के अनुरूप हो गई है। भारत में हमें इनका प्रभाव दिखाई देता है। अवसर उपस्थित होने पर हमने उक्त संसदीय रूप और विधियों का यहां प्रयोग किया। इसका कारण केवल यही नहीं था कि हमारी विचार शैली वैसी ही थी, अपितु हमारा विश्वास यह था कि वे औचित्ययुक्त हैं और हमारी विचार शैली एवं जीवन-व्यवस्था से उनका समायोजन हो जायेगा। हमें इस दिशा में सफलता मिली है और मेरा विश्वास है कि भविष्य में भी हम इसमें सफल रहेंगे।

किन्तु भारत में हमें अन्य देशों की अपेक्षा एक और बात पर पर विचार करना पड़ता है। पश्चिमी यूरोप—इंगलैंड तथा अन्य देशों में भी, पिछले सौ वर्ष अथवा इससे भी अधिक समय में संसदीय प्रणाली का विकास हुआ। बहुधा—बड़े-बड़े संघर्ष हुए, कभी-कभी उनके नष्ट भ्रष्ट होने का खतरा उत्पन्न हुआ, किन्तु किसी भी प्रकार उन्होंने इन सब अवस्थाओं को पार कर आगे कदम बढ़ाया। किन्तु भारत में हमने विगत तीस या चालीस वर्षों में—और विशेष रूप से स्वातंत्र्य संग्राम की अवधि में—एक ऐसे आन्दोलन का प्रवर्तन किया, जो सर्वथा अनूठा था। इसका उद्देश्य शान्तिपूर्ण ढंग से कार्य करना था, और अधिकांशतः यह शान्तिपूर्ण ही था। इसका स्वरूप क्रान्तिकारी था। शान्तिपूर्ण लक्षणों से आबद्ध होते हुए भी यह क्रान्तिकारी आन्दोलन ही था। इसका परिणाम यह हुआ कि लोगों के मस्तिष्क में पिछले बीस या तीस वर्षों में प्रतिक्रिया की भावना उत्पन्न हो गई। एक पीढी के पश्चात् उनकी प्रवृत्ति में परिवर्तन हो गया। क्योंकि हम शान्तिपूर्ण ढंग से कार्य करने के अभ्यस्त हो गये थे। हमें परिवर्तन करने में विशेष कठिनाई नहीं हुई। जहां तक मुझे स्मरण है, कदाचित् अन्य किसी देश में ऐसा नहीं हुआ। हमारे जीवन में कटुता और संघर्ष की घड़ियां नहीं आईं और हमने अपने आपको परिवर्तित स्थितियों के अनुसार सहज ही ढाल लिया।

यह अणु युग है। हमारे पूर्व विचार और दर्शन आज थोथे हो गये हैं। सब कुछ बदल गया है। स्वाभाविक है कि इस चतुर्दिक परिवर्तन का प्रभाव शासन व्यवस्था पर भी पड़ेगा और विभिन्न शासन-तंत्र उस से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। मैं अनुसंधान की इसी भावना को लेकर इस पर विचार कर रहा हूं। अच्छी वस्तु का विनाश मुझे रुचिकर नहीं है। मैं इससे पूर्णतः अवगत हूं कि जीवन और समाज की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार हमें इसे ढालना है।

लोकतन्त्र जीवन-पद्धति के रूप में*

गम्भीर बीमारी के कारण श्री ग० वा० मावलंकर आज इस सभा की अध्यक्षता नहीं कर रहे हैं, इस कारण मैं यहां उपस्थित हूं। श्री मावलंकर को संसदीय परम्परा और प्रक्रिया का विशाल अनुभव है तथा उनकी उपस्थिति से आप लोगों को निःसन्देह समुचित पथप्रदर्शन प्राप्त होता।

कतिपय राजनीतिज्ञ के दृष्टिकोण से अलग होकर उनके आधार और संसदीय लोकतंत्र के आदर्शों और सिद्धान्तों पर विचार करने में भी कभी-कभी बुद्धिमानी होती है। यद्यपि हमारी परम्पराएँ ब्रिटेन के हाउस आफ कामन्स पर आधारित हैं, तथापि भारत की विशिष्ट अवस्था के अनुरूप हम अपनी परम्पराएँ स्थापित कर रहे हैं।

इस सम्मेलन का उद्देश्य विधान मण्डलों में राजनीतिक दलों का कार्य, सरकार और जनता में संसद् का सम्बन्ध, द्वितीय सदन इत्यादि विषयों पर चर्चा करना है और मुझे विश्वास है कि यह चर्चा उपयोगी सिद्ध होगी।

'लोकतंत्र' (डेमोक्रेसी) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के दो शब्दों से हुई है जिनका अर्थ है 'जनता' और 'शक्ति' इसका शाब्दिक अर्थ है जनता का शासन? हम इस पर विभिन्न दृष्टिकोण से विचार कर सकते हैं—साधारण जीवन में, शासन के ढांचे के रूप में, सामाजिक और आर्थिक पहलू के विकास के माध्यम के रूप में और समस्याओं के हल की दिशा में एक उपाय के रूप में—इन सब पर हमें विचार करना है। मैं इनमें से प्रत्येक पहलू पर कुछ सामान्य विचार व्यक्त करूंगा।

१

एक हिब्रू पैगम्बर ने कहा है: "विचारशक्ति के अभाव में समाज नष्ट हो जाता है।"[1]

लोकतंत्र हमें दूरदर्शिता से पूरित करता है यह हमें जीवन की एक प्रणाली का ज्ञान कराता है और हमसे कुछ आदर्श अथवा विशिष्ट व्यवहार की अपेक्षा रखता है। संविधान का चतुर्थ भाग और प्रस्तावना में निर्धारित लक्ष्य तथा आधार इस दिशा में हमारे मार्ग दृष्टा हैं।

व्यक्ति की गरिमा और मानव जीवन की पवित्रता लोकतंत्र का मूलभूत सिद्धांत है। व्यक्ति को विश्व-शक्तियों के निस्सहाय शिकार के रूप में देखने की हमारी आदत सी हो गई है। ये शक्तियां अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर जा रही हैं। विश्व अप्रकट होता जा रहा है और व्यक्ति उस में खोता जा रहा है। व्यक्ति शोक और दुःख, आनन्द और चिन्ता, क्षमा और घृणा की भावना से भरा हुआ है। विकल मानव ही विश्व की प्रगति का आधार है। समाज द्वारा परित्यक्त व्यक्ति—अपराधी और गतिच्युत व्यक्तियों के भीतर भी एक मानव हृदय होता है। राज्य का कर्त्तव्य यह देखना है कि मानव की दृष्टि में मानवीय गुणों का प्रकाश धुंधला न होने पाये। लज्जालु स्वभाव वाले उत्साह से पूरित दूर देश में स्थित एकाकी युवक का वर्णन करते हुए जान मेसफील्ड ने लिखा है:

> मैंने कंकरीली जमीन में भी पुष्प खिलते देखे हैं;
>
> भोंडी आकृति वाले व्यक्तियों के दयापूर्ण कार्यों का सादय किया है;
>
> घुड़दौड़ में निकृष्ट अश्व द्वारा 'स्वर्ण कप' प्राप्त करने की बात भी सुनी है;
>
> इसीलिये मैं विश्वास भी करता हूं।

---

*नई दिल्ली में २५ फरवरी, १९५६ को आयोजित "संसदीय लोकतंत्र" गोष्ठी में उप-राष्ट्रपति द्वारा दिये गये भाषण का पाठ। 'इण्डियन ब्यूरो आफ पार्लियामेंटरी स्टडीज' की अनुमति से साभार उद्धृत।

[1] "सिटी आफ गाड" में आगस्टाइन ने कहा है "राष्ट्र उन युक्ति संगत मनुष्यों का एक संगठन है जो अपनी अभीष्ट वस्तुओं का शान्तिपूर्ण उपयोग करने की दृष्टि से एकता के सूत्र में आबद्ध है, अन्तः राष्ट्र का गुण जानने के लिये इन वस्तुओं का ज्ञान आवश्यक है।"

यदि हम आत्मा की वास्तविक स्वतंत्रता से 'समझौता' कर लें, तो हमारी अन्य समस्त स्वतंत्रतायें अन्तर्धान हो जायेंगी ।

साम्यवादी घोषणा पत्र (कम्युनिस्ट मेनीफेस्टो) में कार्ल मार्क्स ने पूंजीवादी व्यवस्था की शिकायत की है कि यह "विपुल बहुमत, यंत्र सदृश कार्य करने के लिये प्रशिक्षण मात्र" है। मार्क्स का मत है कि यह सर्वहारा की मानवता को विनष्ट कर देती है। व्यक्तिगत मामलों को गोपनीय रखने और स्वविकास का अधिकार लोकतंत्र की एक महती अभिलाषा है ।

आपस्तम्ब ने लिखा है कि 'आत्मलाभान्न परं विद्यते, आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्'[1] आत्मा के हित के लिये विश्व का भी परित्याग किया जा सकता है । सम्पूर्ण विश्व को प्राप्त कर अपनी आत्मा को खो देने वाले व्यक्ति को क्या लाभ हो सकता है ।

आज जब कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने ऐतिहासिक नियतिवाद को फैशन की वस्तु में बदल दिया है और महापुरुषों को किन्हीं अवैयक्तिक शक्तियों का दास अथवा उपकरण बताया जाता है, इतिहास में व्यक्ति के महत्व पर जोर देना श्रेयस्कर है । एच० ए० एल० फिशर के शब्दों में इतिहासकार के लिये केवल यही एक सुरक्षित नियम है कि हमें "मानव-नियति के विकास में अनिश्चित एवं अदृश्य तत्व का महत्व स्वीकार करना पड़ेगा" । यूक्लिड की रचना का अनिवार्य सिद्धांत मानवीय कार्यों पर लागू नहीं होता है । इतिहास निर्माण में मनुष्य का यथार्थ योग है । 'राजा कालस्य कारणम्' । यद्यपि हम दृढ़ नियतिवादिता को अस्वीकार करते हैं, तथापि मानव को भूत से सर्वथा पृथक नहीं मान सकते । सम्भव है मानवीय स्वर क्षीण हो, किन्तु उसका अस्तित्व मानने से इंकार नहीं किया जा सकता । हम विधि के हाथों में कठपुतली मात्र नहीं हैं। हमें अपना व्यक्तित्व समूह में नहीं खो देना चाहिये, प्रत्युत वातावरण से प्रेरणा प्राप्त कर और उससे परिपूरित हो हमें वाह्य तत्वों से मुक्त होना चाहिये । मानव की निर्बन्ध भावना और प्रेरणा के कारण ही हम सुन्दर से सुन्दर वस्त्र, भोजन और आवास का उपभोग कर सकते हैं तथा अभाव और असम्मान की दुनियां से दूर रह सकते हैं। मानव की प्रगति का सम्पूर्ण इतिहास उन नायकों और महात्माओं, कवियों और कलाकारों, मार्गद्रष्टाओं और अनुसंधान कर्त्ताओं का वृत्तांत है जिन्होंने सद्वृत्ति, सच्चाई अथवा सौन्दर्य में झांकने का उत्तरदायित्व उठाया है और जान हथेली पर रख कर अपने अपने स्वतंत्र मत तथा निर्णय उद्घोषित किये हैं। क्योंकि उनका विश्वास था कि यदि वे ऐसा नहीं करते तो आत्मद्रोह के दोष के भागी होते[2] ।

व्यक्ति का सम्मान लोकतांत्रिक समाज का नैतिक आधार है। इस दिशा में कोई दास और कोई स्वामी नहीं है ।

तोक्वेली ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के बारे में लिखते हुए सौ से भी अधिक वर्ष पूर्व कहा था : "इस जमाने तक यह बात मान ली गई है कि निरंकुशता घृणित है, भले ही वह किसी भी रूप में प्रकट हो । आधुनिक युग में 'वैधिक अत्याचार' और 'निष्कलुष अन्याय' जैसी बातें उद्भूत हुई हैं। जनता के नाम पर उनका प्रयोग किया जाता है ।" तोक्वेली का कथन है कि "दुनिया में ऐसा कोई देश नहीं है जहां अमेरिका के सदृश विचार-स्वातंत्र्य और चर्चा करने की आजादी इतनी कम हो ।" इसके आगे उन्होंने लिखा है कि "यदि अमेरिका में वर्तमान में महान् लेखकों का उद्भव नहीं हुआ है, तो इसका कारण बड़ी सरलतापूर्वक बताया जा सकता है : विचार-स्वातंत्र्य के अभाव में साहित्यिक मनीषी पैदा नहीं हो सकते हैं और अमेरिका में विचार स्वातंत्र्य नहीं है ।"

२

जनवाक्यं तु कर्त्तव्यं नरैरपि नराधिपैः : जनता और शासकवर्ग द्वारा जनता की मांग पूरी होनी चाहिये । जनता की इच्छा कैसे मालूम की जाये । निरा शोरगुल और नारेबाजी तो जनता की मांग नहीं है ।

---

[1] धर्म सूत्र १.७.२

[2] जब दोनों को जीवित जलाया जा रहा था उस समय लेटिना ने रिडले को सम्बोधन करते हुए कहा था, "मित्र रिडले, प्रसन्न रहो और मनुष्य की तरह कार्य करो । आज हम इंगलैंड में एक ऐसी ज्योति प्रज्वलित करेंगे, जो, परमात्मा की कृपा से, कभी नहीं बुझेगी ।"

जन-मस्तिष्क की अभिव्यक्ति के ज्ञान का सर्वोत्तम साधन संसदीय लोकतंत्र है। जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा किया गया शासन ही लोकतंत्र है। आधुनिक युग में जनता का प्रत्यक्ष शासन सम्भव नहीं है। प्रत्येक ग्राम पंचायत प्रतिनिधित्व पर आधारित है। इसमें लोगों को विधान में संशोधन एवं परिवर्तन करने का अधिकार है। जब तक एक विधान मौजूद है और जब तक जनता के प्रतिनिधि इसमें परिवर्तन नहीं करते हैं, इसका पालन करना सब के लिये अनिवार्य है। विभिन्न दलों के सम्पूर्ण सदस्यों को स्वीकृत समान आधार के अभाव में संसद् का कार्य नहीं चल सकता है। शान्तिपूर्ण ढंग से सरकार में परिवर्तन करने के लिये संसदीय लोकतंत्र अवसर प्रदान करता है। बारम्बार होने वाले निर्वाचन इस बात के द्योतक हैं कि अपने प्रतिनिधियों को हटाने का लोगों को पूर्ण अधिकार है।

हम ने व्यापक वयस्क मताधिकार स्वीकार किया है। इसके लिये व्यापक शिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा का प्रसार होने पर ही मतदाता राष्ट्रीय प्रयोजन और कर्त्तव्य को समझ सकेंगे और अपने मत का प्रयोग स्वार्थ की पूर्ति के लिये नहीं प्रत्युत लोकहित की दृष्टि से करेंगे। यद्यपि सामान्य अर्थ में हमारे मतदाता शिक्षित नहीं हैं तथापि उन में पर्याप्त समझ और सत्य तथा न्याय के प्रति हार्दिक स्नेह है।

कई बार नवनिर्मित आदर्शों का प्रचार करने वाले लोगों के प्रयत्न से इन सिद्धांतों से च्युत करने का प्रयत्न किया जाता है। वर्गवादिता के समर्थक और समूहों के प्रति निष्ठा रखने वाले व्यक्ति इस प्रकार का प्रयत्न करते हैं। जनसमूह की भावनाओं का लाभ उठाकर विभिन्न धारणायें पैदा की जाती हैं उन्हें विशिष्ट वर्गों के रूप में चित्रित किया जाता है, रिश्वत दी जाती है तथा उन्हें भूल-भुलैया में डाल दिया जाता है। यदि बुद्धि प्रधान राष्ट्र बड़ी सरलतापूर्वक तानाशाही सरकारों के समक्ष नतमस्तक हो जाते हैं, तो इससे केवल यह प्रकट होता है कि लोग कितनी सरलता से व्यक्तिगत उत्तरदायित्व को तिलांजलि दे देते हैं।

यदि लोगों को सामाजिक एवं आर्थिक मामलों पर दृढ़ मत का निर्माण करना है, तो उन्हें निश्चित जानकारी से साहचर्य स्थापित कर प्रश्न के सभी पहलुओं पर ध्यान देना चाहिये। जानकारी के स्रोत स्वार्थी हितों से प्रभावित एवं नियंत्रित न होने पायें। जनता को विचार तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होनी चाहिये। सर्वाधिकारवादी समाज में सत्तारूढ़ दल जानकारी, संचार और मनोरंजन के सम्पूर्ण साधनों पर नियंत्रण कर विचार शैली को केन्द्रित कर देता है। विरोधी पक्ष को खामोश कर दिया जाता है और लोग वही बात सुनते हैं जो सरकार कहना चाहती है। संसद् का कार्य सामाजिक असंतोष की भावना को दबाना नहीं, प्रत्युत अभिव्यक्त करना है। सच्चे लोकतंत्र में घृणित विचार भी उस समय तक सहन करने पड़ते हैं, जब तक उनका प्रतिरोध करने की स्वतंत्रता हमारे पास है। भयानक विचारधाराओं को प्रश्रय देने का अपराध हमें नहीं करना चाहिये। आधुनिक उक्ति का प्रयोग करते हुए कहा जा सकता है कि अपरम्परावादी विचारकों को बहुधा 'विच्छिन्न' कर दिया गया था। दक्षिण फ्रांस में एल्बीजेन्सेस के विरुद्ध जिहाद नाजियों द्वारा यहूदियों की हत्या के समान ही बर्बर कृत्य था। केवल हिंसाजनक कृत्यों के अपराधियों पर ही रोकथाम और बंधन होना चाहिये। विचार निजी विषय है; कार्य सार्वजनिक वस्तु है।

संसद् जनता और राज्य के बीच सम्पर्क स्थापित करती है। यहां हम वातावरण की अनुभूति प्राप्त करते हैं और उसकी सर्जना भी करते हैं। नेता लोकमत का अनुसरण ही नहीं करते, प्रत्युत उसका मार्गदर्शन भी करते हैं। बर्क के शब्दों में 'हमारे प्रतिनिधि के उद्यम पर ही हमारा अधिकार नहीं है, हमें इसके निर्णय को भी सुनना चाहिये। और यदि प्रतिनिधि अपना निजी निर्णय छोड़कर हमारी सम्मत्ति के अनुसार ही कार्य करता है, तो वह विश्वासघाती है।" यदि हम इस आधार पर लोकमत के पिछलग्गू बन जायें कि हमें उनके मत प्राप्त करने हैं तो फिर संसद् में हमारे उद्गार गढ़े हुए, निरर्थक और अन्तर्गत होंगे। कार्य की लोकप्रियता नहीं, वरन् औचित्य ही कसौटी है। अधिकांश मामलों में यदि हम गलत काम करें, तो हम लोकप्रिय नहीं रहेंगे। अत्यधिक बल प्रयोग करने से राजनैतिक साहस के कार्यों में उत्साह नहीं रह जायेगा।

संसत्सदस्यों का चुनाव करते समय हमें अत्यधिक सावधानी से काम लेना चाहिये। उन्हें "ब्यूरो ऑफ पार्लियामेंटरी स्टडीज" सरीखी संस्थाओं में प्रशिक्षण

भी दिया जाना चाहिये । हमारे प्रतिनिधियों के लिये यह आवश्यक है कि उन्हें संविधान का—जिसे कि जनता तथा सरकार के बीच समझौता कहा जा सकता है—बोध हो । उन्हें संविधान में उल्लिखित निदेशक तत्वों का भी ज्ञान होना चाहिये, जो हमारे उस राष्ट्रीय धर्म अथवा औचित्य के प्रतीक हैं—सभी कर्त्तव्यों और अधिकारों का आधार हैं और जो लोगों के धर्म निरपेक्ष एवं आध्यात्मिक विकास और उनके अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति में योग देते हैं ।

हमने राजाओं के दैवी अधिकार वाले सिद्धांत का आमूल उच्छेदन कर दिया है, निर्वाचित बहुमतीय सरकारों के पास भी दैवी अधिकार जैसी कोई बात नहीं है । लोकतंत्रात्मक सरकार, अर्थात् बहुमत पर आधारित सरकार, गम्भीर दुरुपयोग का माध्यम भी बन सकती है । लार्ड ऐक्टन ने एक बार कहा था । "....सम्पूर्ण जनता द्वारा शासित, अत्यधिक संख्या और अत्यधिक शक्ति सम्पन्न वर्ग की सरकार अमिश्रित एक राज्यवादी सरकार की भांति ही दोषयुक्त है और लगभग उन्हीं कारणों ने इसे उन संस्थाओं की आवश्यकता है, जो इसके विरुद्ध इसी का संरक्षण करेंगी और लोकमत की अंकुशहीन क्रांतियों से बचा कर विधि की स्थायी सत्ता का समर्थन करेंगी ।" सबल लोकतंत्र के लिये विचार तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आवश्यक है । इसमें अल्पसंख्यक मत के प्रति सम्मान की भावना निहित है । वास्तविक लोकतंत्र में विरोधी पक्ष का शाश्वत स्थान है । भले ही यह अधिक संख्या में न हों, किन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि यह राजनीतिक सूझबूझ में कम है । यह समझौतों के लिये किसी को विवश न कर सके, किन्तु यह हमें विचार करने के लिये अवश्य विवश करती है । विरोधी पक्ष को प्राधिकारवादी पद्धतियों से कुचलना लोकतंत्र के लिये खतरनाक है । महात्मा बुद्ध, सुकरात और ईसा इसके उदाहरण हैं । राज्य मुंह पर ताला लगा सकता है, किन्तु उनके भीतर की अग्नि को नहीं बुझा सकता। सुकरात और ईसा तथा अनेक अन्य महापुरुषों की वाणियों पर प्रतिबन्ध लगाने से तत्कालीन शीतयुद्ध में भयानक जोखिम उठानी पड़ी थी । तानाशाही और धर्मान्धता कुछ सदियों पूर्व हमें विष-पात्र, क्रास, फांसी प्रपीड़न स्थल और बन्दी शिविर दिखाई देते हैं । हमने बुद्ध का विनाश नहीं किया और न विभिन्न मतावलम्बियों के साथ ही ऐसा किया । सच तो यह है हम ने जनता को मत अथवा बलिदान के झंझावात में नहीं डाला – हम ने स्वतंत्रता की अनुमति दी । यही प्रगति का मार्ग है । विश्व की सब से अधिक हानि केवल इस प्रकार की धारणा से हुई कि हम सत्य हैं । यदि हम अपरम्परागत विचारों का शंखनाद फूंकने वाले और मानव की आत्मा को दबोचने वाले व्यक्तियों को आतंकित करते हैं तो हम स्वयं को लोकतंत्रात्यक नहीं कह सकते । अन्य मतावलम्बियों के प्रति हमारा व्यवहार ही लोकतंत्र का मापदंड है ।

कोई सरकार केवल इसीलिये लोकतंत्रात्मक नहीं बन जाती कि बहुमत ने इसके पक्ष में मत दिया है । केवल एक ही दल के पक्ष में मत देते समय यह लोकतंत्रात्मक नहीं है । इसकी कसौटी इस बात में है कि क्या हमने अपनी जनता को लोकतंत्रात्मक अधिकार दिये हैं, क्या यह अपने विपक्षियों को विचार, अभिव्यक्ति और संस्था-निर्माण करने की स्वतंत्रता प्रदान करती है । यदि कोई दल अपने विरोधियों को सहन नहीं कर सकता और अपने स्वयं के अन्दर भी मत वैभिन्न्य की इजाजत नहीं देता है, तो मतदाताओं के मत प्राप्त कर लेने पर भी वह दल लोकतंत्रात्मक नहीं है ।

मूल भूत अधिकारों के सम्बन्ध में संविधान के भाग ३ में नागरिक स्वतंत्रता अथवा अधिकारों का वर्णन है । अधिकार एक प्रकार की मर्यादा है, जो सरकार ने नागरिकों की रक्षा के लिये, अपने ऊपर स्थापित की है । सरकार भी उनमें दखल नहीं कर सकती। अतः हम अत्याचार से सुरक्षित हैं । उचित विधियों द्वारा विनियमित स्वातंत्र्य ही सर्वोत्कृष्ट राजनैतिक व्यवस्था होती है । यदि सब व्यक्तियों को ये अधिकार प्राप्त हैं तो उनका भी कर्त्तव्य है कि वे दूसरों के अधिकारों का सम्मान करें । दूसरों के अधिकार में हस्तक्षेप करते ही हमारे अधिकार की इतिश्री हो जाती है । भाषण की स्वतंत्रता का अर्थ यह नहीं है कि हम श्रोताओं को अपनी बात सुनने के लिये बाध्य कर सकें । यह दूसरों के अधिकार में हस्तक्षेप है । लोकतंत्र का अर्थ है शक्ति का वितरण—विकेन्द्रीकरण । स्वतंत्र न्यायपालिका, स्वतंत्र लेखापरीक्षा और सेवा आयोग सरकार को निरंकुश अथवा आतंकपूर्ण कार्य करने से रोकते हैं । इन संस्थाओं की कार्यपालिका के हस्तक्षेप अथवा राजनीतिक दबाव से रक्षा करना आवश्यक है । लोक जीवन का प्रमाप विकसित एवं निर्धारित करने

के लिये यह एकमात्र पद्धति है। अन्यथा 'प्रभुता प्राप्त' भले आदमी भी कठोर हृदय और निरंकुश हो जाते हैं। आतंक आदत का रूप धारण कर लेता है, बीमारी का मूर्त रूप हो जाता है।

अरस्तू के शब्दों में समाज का उद्देश्य सद्जीवन की संवृद्धि करना है। किसी बड़े शासक का गुणगान करना उसका काम नही है। आतंकपूर्ण परिस्थितियों में सद्-जीवन असम्भव है। अतः शक्ति पर विधि की लगाम होनी चाहिये, अरस्तू के शब्दों में विधि की मान्यता ही ईश्वर और तर्क के प्रति निष्ठा है और यह विचार रखना कि मनुष्य ही नियायक है, पशु प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करना है। चूंकि कोई व्यक्ति इस योग्य नही है कि उसे अपरिमित अधिकार दे दिया जाये, अतः सामान्य समझ ही विधि का सम्बल है। सिसरो का कथन है कि सरकार केवल निरंकुश शक्ति ही नही है। "समाज अकारण एकत्रित मानव समुदाय ही नहीं है।" उनके विचार में यह एक "ऐसा राष्ट्रमंडल है जो विधि को स्वीकार करने में और उस से उद्भूत व्यावहारिक लाभ के उपभोग की दृष्टि से परस्पर एकता में आवद्ध हो गया है।" कार्यहित, मानव धर्म की वृद्धि में ही राजनैतिक शक्ति का औचित्य है। आततायी शक्ति के आधार पर शासन करता है, संसद् विधि में विश्वास रखती है। प्रसिद्ध राजनीतिक विचारक एडमण्ड बर्क ने कहा था "निरंकुश शक्ति का प्रदाता और प्राप्त कर्ता दोनों समान रूप से अपराधी हैं। विश्व में जहां भी उसका आभास हो इसका विरोध करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। राजनीति के क्षेत्र में यह कहना दुष्टता है कि एक व्यक्ति निरंकुश शक्ति धारी हो सकता है।" हम आततायी अथवा समूह नही चाहते हैं। स्पिनोजा के शब्दों में पशुओं अथवा कठपुतलियों को तर्क प्रधान मानव में परिणत करना सरकार का उद्देश्य नही है प्रत्युत उनके मस्तिष्क और शरीर को सुरक्षापूर्वक विकसित होने का अवसर प्रदान कर उनकी तर्क वुद्धि को अवाधित रूप में नियोजित करना है। वस्तुतः, सरकार का सच्चा उद्देश्य स्वतंत्रता है।

लोकतंत्रात्मक सरकार निष्कलुप और सुव्यवस्थित प्रशासन पर निर्भर करती है। सरकार सब से बड़ी नियोजक बनने वाली है क्योंकि गैर-सरकारी क्षेत्र का विस्तार हो रहा है। हमे सही प्रकार के अधिकारी भरती करने हैं। प्रत्येक व्यक्ति को सरकारी पद प्राप्त करने का समान अधिकार होना चाहिये और चुनाव का आधार प्रभाव न हो कर योग्यता हो।

अनुरोध, तर्क और विरोधी विचारधाराओं का परस्पर समायोजन ही लोकतंत्रात्मक दृष्टिकोण है। मतभेद की दशा मे "मुझसे सहमत हो अन्यथा मै तुम पर प्रहार करुंगा" अथवा "हम सब एक साथ बैठकर, एक दूसरे की बात समझ कर इस पर निर्णय करें" कहा जा सकता है। इसमें से द्वितीय प्रस्थापना ही लोकतंत्रात्मक दृष्टिकोण है। सकी मान्यता है कि घृणा से प्रेम श्रेयस्कर है, संघर्ष से सहयोग श्रेयस्कर है, उत्पीडन से सहमति श्रेयस्कर है। आधुनिक जगत मे हिंसा के प्रश्रय का अभिप्राय लोकतंत्रात्मक पद्धति से विमुख और भविष्य के प्रति विश्वासघात करना है।

हमारे सामने अनेक समस्यायें हैं। आत्मिक स्वतंत्रता अनुभव करने के लिये भौतिक एवं सामाजिक बंधनों से मुक्ति आवश्यक है। जीवन में अर्थव्यवस्था को समुचित और क्रमवद्ध कर तथा सामाजिक सम्बन्धों का उचित सवर्द्धन कर हम स्वयं को भौतिक और सामाजिक बंधनों से मुक्त कर सकते हैं। हमारे देश में लाखों व्यक्ति जंजीरों और बेड़ियों से भी अधिक क्रूर दासता से बंधे हुए हैं। मनुष्यों को उन वस्तुओं की भांति समझा जाता है जिनका बाजार में क्रय-विक्रय किया जाता है। संविधान के अनुच्छेद अथवा संविधि पुस्तक में उल्लिखित विधियां ही सामाजिक परिवर्तन के परिचायक नही हैं। निर्धन व्यक्ति इधर-उधर घूमते हैं, उन्हें कोई काम नही मिलता, वेतन नही मिलता, और वे भूखों मरते हैं। उनके जीवन में कष्ट और दुःखों की अविरल धारा प्रवाहित होती रहती है। ऐसे लोग संविधान अथवा उसकी विधियों पर गर्व नहीं कर सकते। सदियों से संचित निर्धनता के परिणामस्वरूप हम निर्धन हो गये हैं। जब तक हम अपने देश के नागरिकों को निर्धनता, भूख, गरीबी और अज्ञान से मुक्त नहीं कर पाते, तब तक लोकतंत्र से हमें संतुष्टि नहीं हो सकती। हमें अनुरोध और सहमति के आधार पर सामाजिक तथा आर्थिक क्रांति पैदा करनी चाहिये। हमारा विश्वास है कि तर्क, समझौता और बहुमत की सहायता से हम सामाजिक परिस्थितियों में सुधार कर सकते हैं। हमारे यहां सामाजिक समझौते और मध्यस्थता सम्बन्धी संस्थायें होनी चाहिये। कार्मिक संघों को राज्य का उपकरण मात्र नहीं

समझना चाहिये। राष्ट्रीय हित की अपेक्षा वर्गवाद की भावना को महत्व देने के अनुमति इन संघों को न दी जाये। जो संस्थायें आर्थिक उन्नति और सामाजिक न्याय के मार्ग में बाधक हैं, उन्हें दूर कर दिया जाये।

यह सच है कि समाज अपराधों से अपना बचाव करे, क्योंकि हिंसा विधि-विरुद्ध और घातक है। हमें अपराध के स्रोत को ही समाप्त कर देना चाहिये। हमें ऐसी परिस्थितियां पैदा करनी चाहियें, जिनमें स्त्री-पुरुष साथ साथ रह कर काम कर सकें और विश्वास एवं सुरक्षा की भावना से भविष्य का सामना कर सकें।

लोकतंत्र नवीन जीवन का आह्वान है। हमने जिस आदर्श की कल्पना की है, उसे जीवित और मूर्त रूप प्रदान करने की आवश्यकता है। १९४७ में जो कुछ हुआ, वह क्रांति का सूत्रपात था; हमें इसको पूर्णता प्रदान करनी है। यदि हमारा संविधान उस सर्जनात्मक समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के अनुसार अपने आपको नहीं ढालता है जिसमें "सब व्यक्तियों के निर्बन्ध विकास के लिये प्रत्येक व्यक्ति का निर्बन्ध विकास आवश्यक है" तो यह विनष्ट हो जायेगा। लोकतंत्र के दो पहलू हैं, व्यक्ति का निर्माण और विश्व को एकसूत्र में पिरोना। स्वतंत्रता को सर्वाधिक महत्व देने पर ही नवीन समाज की स्थापना सम्भव है। हम एक नये समाज की कल्पना कर रहे हैं, जिसमें व्यक्तित्व की पावनता ही सिद्धांत रूप में रहेगी और सम्पूर्ण विश्व सहकारिता का एकक बन जायेगा, प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण विकास के लिये अवसर की समानता मिल सके और सब व्यक्तियों को समान अवसर प्रदत्त करने की दृष्टि से संसार के सब पदार्थ वितरित किये जा सकें। अनेक व्यक्तियों के मस्तिष्क में सम्पूर्ण मानव जाति के समाज का पुनीत विचार प्रवुद्ध हो रहा है। यदि सृजनात्मक समाज, अविभाज्य लोकतंत्र, का विचार क्षीण हो गया तो समाज का ह्रास हो जायेगा। यदि इस विचार का सम्बल हमें प्राप्त है तो हम आगे बढ़ते जायेंगे। सृजनात्मक लोकतंत्र की स्थापना के लिये हमें अपने हृदय में लोकतंत्रात्मक भावना पैदा करनी चाहिये। गांधी जी ने हमें बताया है कि आत्मा में ही शक्ति विद्यमान है। शक्ति दूसरों की हत्या करने वाले शस्त्रों में नहीं प्रत्युत मरने के लिये उद्यत रहने की भावना में है। महाभारत में लिखा है:

नैव राज्यं नरादासीन्न :
दण्डो न च दाण्डिक :
धर्मेणैव प्रजाः सर्वाः
रक्षन्ति स्म परस्परम्।

लोगों की समृद्धि का कारण संविधान अथवा उत्पीड़न या विधि-विधायक नहीं, प्रत्युत उनका धर्मानुकूल आचरण और परस्पर सहकारिता है।

प्राक्कलन समिति का कार्य

ब० गो० मेहता, संसत्सदस्य

हमने देश को एक सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाया है, अतः हम, भारत के नागरिक, संसद् की सहायता से कार्यपालिका पर नियंत्रण रखते हैं। संसद् सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न निकाय है जिसके निर्णय को सामान्यतया चुनौती नहीं दी जा सकती है। किन्तु प्रभुता सम्पन्न एवं उच्च निकाय होने पर भी यह स्वयं कार्यपालिका के बिना कार्य नहीं कर सकती है। फिर भी यह अत्यन्त गरिमामय और प्रतिष्ठाजनक ढंग से, कार्यपालिका पर पर्याप्त अंश में नियंत्रण रखती है। संसदीय लोकतंत्र का आधार सामान्यतः इन तीन बातों में निहित है प्रथम, नीति सम्बन्धी किसी विषय पर पूर्ण, निर्बंध और निर्भीक चर्चा; दूसरे, उदार मस्तिष्क से भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण समझने के लिये इच्छा का विकास; और तीसरे, आवश्यक अंग के रूप में ऐसे समझौते की उत्पत्ति, जो नीति निर्धारित करने में वृहद् मात्रा में समभाव पैदा कर सके और जिसका सम्पूर्ण जनसमुदाय पर प्रभाव पड़ सके। संसदीय लोकतंत्र को शासित करने वाले ये ही मुख्य सिद्धान्त हैं।

हमारी संसदीय संस्था को कार्य करते हुये आठ वर्ष से अधिक समय हो गया है, किन्तु यह अभी भी विकास के प्रथम चरण में है। अभी इसे उन स्वस्थ परम्पराओं का निर्माण करना है, जो लोकतंत्रात्मक गणराज्य के अनुरूप हों और विकासोन्मुख पद्धति के लिये सदैव शक्ति का स्रोत बन सके।

वित्तीय नियंत्रण

लोकतंत्र में, वित्तीय नियंत्रण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके माध्यम से ही जनता विधानमण्डलों में अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों की सहायता से कार्य-पालिका पर नियंत्रण रखती है।

वित्तीय नीति की क्रियान्विति और विभागों के कार्य की जांच के लिये 'ट्रेजरी' सरकार का एक साधन है। इस के कार्य इतने अधिक और इतने विविध हैं कि उनकी सही-सही परिभाषा करना असम्भव है। हेनरी हिग्ज ने लिखा है कि "'ट्रेजरी' हमारे ऊपर नियंत्रण करता है, हम इससे आतंकित हैं और हमें इससे लाभ भी होता है परन्तु फिर भी इसकी परिभाषा नहीं की जा सकती है।" लार्ड मार्ले कहा करते थे कि "हाथी की परिभाषा तो नहीं की जा सकती, किन्तु हम उसे देखते ही एकदम पहचान लेते हैं*।" ट्रेजरी का नियंत्रण एक ऐसा अजेय नियंत्रण है, जिसे संसद् तथा राज्य विधान मण्डल अंगीकृत कर अपने सम्पूर्ण महत्वपूर्ण अंगों में प्रयुक्त करते हैं।

संसद् को निम्न वित्तीय विषयों पर नियंत्रण रखना चाहिये :

(१) कर तथा अन्य राजस्व प्राप्ति;

(२) व्यय;

(३) उधार; और

(४) लेखे।

करों पर नियंत्रण आदि

संविधान के अनुच्छेद २६५ में लिखा है कि "विधि के प्राधिकार के सिवाय कोई कर न तो आरोपित और न संगृहीत किया जायेगा।" अतः नवीन कर सम्बन्धी प्रस्तावों के लिये संसद् का अनुमोदन प्राप्त करना कार्य-पालिका का कर्तव्य है। प्रस्तावों को स्वीकार करना, उनमें रूपभेद करना अथवा उन्हें रद्द करने का अन्तिम अधिकार लोक-सभा को प्राप्त है।

*पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन खंड २ (१९२४) पृष्ठ १२२

1057 LS—3

व्यय पर नियंत्रण

अनुच्छेद २६६(३) में लिखा है कि "भारत की या राज्य की संचित निधि में से कोई धन विधि की अनुकूलता से, तथा इस संविधान में उपबंधित प्रयोजनों और रीति से, अन्यथा विनियुक्त नहीं किये जायेंगे।" इस निदेश के अनुसार भारत सरकार की अनुमानित प्राप्तियों तथा व्यय का एक विवरण प्रतिवर्ष संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखा जाता है [अनुच्छेद ११२(१)]। वार्षिक वित्तीय विवरण पर संसद् के दोनों सदनों में वाद-विवाद होता है, किन्तु इस पर स्वीकृति केवल लोक-सभा द्वारा दी जाती है। लोक-सभा को मांगों में कमी करने की शक्ति है, किन्तु वह अनुदान में सीधे ही वृद्धि नहीं कर सकती। मांगों पर मतदान के पश्चात्, अनुदान के रूप में मंजूर की गई रकम और संचित निधि पर 'भारित' व्यय (भारत के संविधान के अन्तर्गत) का विनियोग करने के लिये लोक-सभा द्वारा विनियोग अधिनियम पारित किया जाता है। विनियोग विधेयक धन विधेयक है, अतः लोक-सभा का उस पर पूरा अधिकार है। कटौती प्रस्ताव का निन्दा प्रस्ताव के समान ही परिणाम होता है, अतः यह लोक-सभा का प्रभावशाली शस्त्र है। चूंकि विनियोगों पर मतदान वर्ष में केवल एक बार किया जाता है, इस लिये इसे प्रत्येक वर्ष संसद् की स्वीकृति प्राप्त करनी पड़ती है।

उधार पर नियंत्रण

कार्यपालिका सरकार द्वारा ऋण प्राप्ति के लिये संसद् की स्वीकृति भारत में आवश्यक नहीं है, किन्तु ब्रिटेन में यह आवश्यक है। संसद् विधि द्वारा एक सीमा निर्धारित कर सकती है, जिसके अन्तर्गत सरकार ऋण ले सकती है; किन्तु इस प्रकार की सीमा नियत नहीं की गई है। ऋण के लिये संसद् की स्वीकृति प्राप्त करना सरकार के लिये आवश्यक नहीं है। बजट प्रस्तुत करते समय सरकारी ऋणों के मोटे प्रस्तावों का ज्ञान संसद् को करा दिया जाता है।

लेखाओं पर नियंत्रण

नियंत्रक महालेखा परीक्षक संसद् की ओर से भारत संघ के लेखाओं की परीक्षा करता है। वह संविहित प्राधिकारी है और कार्यपालिका से स्वतंत्र होता है। वह राष्ट्रपति के अनुमोदन से लेखाओं का रूप निर्धारित करता है। संघ के लेखाओं के सम्बन्ध में उसके प्रतिवेदन राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं और संसद् के प्रत्येक सदन के सामने रखे जाते हैं।

वित्तीय समितियां

सामान्य वित्तीय नियंत्रण का कार्य संसद् की वित्तीय समितियों अर्थात्, प्राक्कलन समिति और लोक लेखा समिति के सुपुर्द किया जाता है। प्राक्कलन समिति का निर्वाचन सम्पूर्णतः लोक-सभा द्वारा किया जाता है और अध्यक्ष द्वारा इसके निर्वाचित सदस्यों में से सभापति का नामनिर्देशन किया जाता है। इसकी वर्तमान सदस्य संख्या ३० है और समिति अध्यक्ष के सामान्य निदेश के अन्तर्गत लोक-सभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

लोक लेखा समिति में दोनों सदनों के सदस्य होते हैं, किन्तु अधिकांश लोक-सभा के सदस्य ही हैं। संसद् के समक्ष रखे गये प्रतिवेदन में नियंत्रक महालेखा परीक्षक द्वारा जो भी आलोचना की जाती है, लोक लेखा समिति उनकी जांच करती है और अपनी उपपत्तियां तथा सिफारिशें सदन के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। अनधिकृत व्यय, संसद् द्वारा स्वीकृत अनुदान के अतिरिक्त राशि, निर्धारित प्रयोजनों के अतिरिक्त अन्य कार्यों पर खर्च, निरर्थक और बेकार कार्यों में रुपया लगाना तथा अन्य वित्तीय अनियमितताओं पर समिति विचार करती है। इन प्रतिवेदनों के बारे में संसद् के प्रति कार्यपालिका के उत्तरदायित्व की भावना से वित्तीय प्रशासन को व्यवस्थित रूप मिलता है।

मार्गदर्शक सिद्धान्त

अनेक बार विदेशी प्रशासकों ने हम पर यह आरोप लगाया है कि प्रशासन के प्रति हमारा दृष्टिकोण अनुपयोगी और बाधक होने के साथ-साथ सफलताओं को दुर्बोध बना देने वाला है। जैसा श्री पाल एच० एपलबी ने कहा है :

> "सरकार विरोधी दृष्टिकोण को परित्यक्त कर स्वतंत्र एवं क्रान्तिकारी भारत द्वारा नियोजित परिणामों के लिये समुचित उत्तरदायित्व की भावना पदा करने में भारतीय नेताओं

को पर्याप्त कठिनाई का सामना करना पड़ा है। औपनिवेशिक शासन से बदल कर इस नवीन शासन में भाग लेने में संसद्विज्ञों की अपेक्षा असैनिक कर्मचारियों की कठिनाई सर्वथा नगण्य थी। इस कार्यवाही का एक विचित्र किन्तु स्वाभाविक निष्कर्ष यह हुआ कि असैनिक कर्मचारियों के प्रति अविश्वास की भावना पैदा हो गई तथा नवीन भारत के महान् उद्देश्यों की पूर्ति में उनका योग कम हो गया। असैनिक कर्मचारिवर्ग एक ऐसा अनिवार्य उपकरण है, जो कार्य को गति प्रदान कर सकता है; किन्तु यदि इसमें विश्वास का अभाव रहा, तो उसके काय इतने प्रभावी सिद्ध नहीं होंगे।"

हम अपनी कमियों से सर्वथा परिचित हैं। एक शताब्दी के विदेशी शासन के परिणामस्वरूप हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया। मैं श्री एपलबी की सम्मति के बारे में एक बात और बता देना चाहूंगा कि इस दष्टिकोण का उत्तरदायित्व संसद्विज्ञों और असैनिक कर्मचारियों दोनों पर ही है। यह संतोप की बात है कि प्रशासन के दोनों भाग इस तथ्य से सुपरिचित हैं और इस प्रकार की प्रवृत्तियों को रोकने का वे भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अभी सुधार के लिये गुंजाइश है, किन्तु उसे पूरी तरह समाप्त करने में अभी समय लगेगा। प्राक्कलन समिति के सभापतित्व के अनुभव के आधार पर मैं इस बात से आश्वस्त हो गया हूं कि वित्तीय समितियों की बैठकें, जो संसद्विज्ञों और सरकारी अधिकारियों को एक दूसरे के निकट लाती हैं, इस प्रकार की प्रवृत्तियों को दूर करने में सहायक सिद्ध होती हैं।

यह लोक-सभा का सौभाग्य है कि उसे दादा साहब मावलंकर सरीखा प्रथम अध्यक्ष मिला। उन्होंने वित्तीय समितियों के संचालन के लिये कुछ अत्यन्त स्वस्थ परम्पराएं स्थापित की थीं।

प्राक्कलन समिति को सम्बोधित करते हुए उन्होंने एक बार कहा था, "हमें इस बात का प्रयत्न करना चाहिये कि सरकारी अधिकारियों के साथ हमारा व्यवहार बहुत अच्छा हो। जब हम उनसे कोई पूछताछ करें तो ऐसी भावना नहीं आनी चाहिये कि मानो वे हमारे विरोधी हैं और हम वकीलों की भांति उनसे जिरह कर रहे हैं*।"

अध्ययन मण्डल (स्टडी ग्रुप्स)

अध्ययन मण्डल के महत्व की चर्चा करते हुये स्वर्गीय दादा साहब मावलंकर ने कहा था :

> "यदि हम वस्तुतः लोकतन्त्र का विकास करना चाहते हैं, तो यह समस्या भाषणों से हल नहीं होगी। मतों की संख्या से भी हमारी समस्या का सम्बन्ध नहीं है। हमारी यथार्थ समस्या ऐसे व्यक्ति उपलब्ध करना है जो हमारी समस्याओं को समझ कर निर्माणकारी सुझाव प्रस्तुत कर सकें। जब आप अध्यक्ष मण्डल बना कर कठिनाइयां समझेंगे तो स्वभावतः आप सृजनात्मक विचारधारा की ओर प्रवृत्त हो जायेंगे। इस प्रकार के अध्ययन और समझ से हम ऐसे अधिकारी तैयार कर सकते हैं, जिन्हें सहज ही मंत्रिवर्ग की 'द्वितीयपंक्ति' की संज्ञा से सम्बोधित किया जा सकता है।"†

न्यायिक दृष्टिकोण

स्वर्गीय दादा साहब मावलंकर ने प्राक्कलन समिति द्वारा सरकार को प्रतिवेदित की जाने वाली अपनी रिपोर्टों में न्यायिक दृष्टिकोण को विकसित करने के लिये अमूल्य परामर्श दिया था। उन्होंने कहा था :

> "हमें पूर्वधारणा रख कर किसी समस्या पर विचार नहीं करना चाहिये। मैं किसी भी विषय के सम्बन्ध में न्यायिक दृष्टिकोण अपनाने का आग्रह करता हूं। हमें सत्य की खोज का प्रयत्न करना चाहिये। अनेक

*प्राक्कलन समिति के समक्ष १२ दिसम्बर, १९५० को दिया गया भाषण।

†प्राक्कलन समिति के समक्ष ७ मई, १९५१ को दिया गया भाषण।

वार ऐसा न करने की हमारी प्रवृत्ति होती है। यह मानव स्वभाव की कमजोरी है कि हम उन्हीं तथ्यों की खोज करते हैं जो एक विशिष्ट दृष्टिकोण की पुष्टि करते हैं। तथ्यों पर आधारित किसी भी उचित बात का अधिकांश प्रभाव सरकारी अधिकारियों पर पड़ेगा। जहां तक संसदीय समितियों का सम्बन्ध है, उनके प्रतिवेदनों में एक भी ऐसा तथ्य नहीं होना चाहिये जिसके समर्थन में साक्ष्य नहीं जुटाया जा सके। हमारे प्रतिवेदन इस प्रकार के होने पर ही हमारी प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। यदि कोई ऐसी निराधार बात कह दी गई है, जो बाद में वापस लेनी पड़े तो समिति की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचेगी। कुछ न कहना श्रेयस्कर है। जो कुछ भी हम क , वह ठोस तथ्यों पर आधारित हो।"†

प्राक्कलन समिति का महत्व

वित्तीय समितियों के सदस्यों के लिये आचरण संहिता निर्धारित करने के लिये हम दादा साहब मावलंकर के अत्यन्त कृतज्ञ हैं। उक्त आदर्शों के अनुरूप कार्य करना हमारा पुनीत कर्तव्य रहा है। भारतीय संसद् के पिता के प्रति यह उपयुक्त श्रद्धाञ्जलि होगी।

प्राक्कलन समिति के कृत्य ये हैं :—

(क) प्राक्कलनों से सम्बन्धित नीति से संगत क्या मितव्ययतायें, संघटन में सुधार, कार्यपटुता, या प्रशासनिक सुधार किये जा सकते हैं, इस सम्बन्ध में प्रतिवेदित करना ;

(ख) प्रशासन में कार्यपटुता और मितव्ययता लाने के लिये वैकल्पिक नीतियों का सुझाव देना;

(ग) प्राक्कलनों में अन्तर्निहित नीति की सीमा में रहते हुये धन ठीक ढंग से लगाया गया है या नहीं इसकी जांच करना; और

(घ) प्राक्कलन किस रूप में संसद् में उपस्थित किये जायेंगे, इसका सुझाव देना।

स्वभावत: एक प्रश्न उत्पन्न हो सकता है। क्या मितव्ययता, सुधार, कुशलता और प्रशासनिक सुधार के प्रश्न पर विचार करने की कोई आवश्यकता है, जब कि स्वयं प्रशासन में कुछ ऐसी शाखायें हैं जो इस प्रकार के कार्यों से सम्बन्धित हैं और जब कि वित्त मंत्रालय एवं केबिनेट सचिवालय अपनी पर्याप्त शक्ति लगा कर इन समस्याओं को हल करने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं? इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्रशासन ने सम्पूर्ण आवश्यक अवरोध और प्रति-अवरोध लगा रखे हैं और अनेक अनुभवी और दक्ष प्रशासक इस प्रयोजन के लिये [illegible] किये गये हैं। हम इस तथ्य से अवगत हैं कि यह कार्य विभिन्न मंत्रालयों में अविरत रूप से चल रहा है, किन्तु फिर भी हमें लाल फीताशाही, समन्वय का अभाव, विभागवाद की चरम भावना, और इन सबसे ऊपर मानवीय दृष्टिकोण का अभाव यत्र-तत्र दिखाई देता है। प्राक्कलन समिति का कार्य उस पुलिसमैन की भांति नहीं है जो डंडा लटका कर फूला नहीं समाता और न यह कुछ नेत्र वाले लेखा परीक्षक की भांति ही है। प्राक्कलन समिति का कार्य सर्वथा भिन्न है। इस कार्य की तुलना उस 'जूरी' के कार्य से की जा सकती है, जिसे केवल सामान्य समझ के आधार पर अत्यन्त जटिल और दुर्धर्ष कानूनी मामले का फैसला देने के लिये कहा जाये। प्राक्कलन समिति के सदस्यों की भी यही दशा है। इसके सदस्य सामान्यतया अपने विषय में साधारण जानकारी रखते हैं, वे प्रशासन के नियम और विनियमन तथा उसकी बारीकियों से अनभिज्ञ हैं किन्तु परीक्षा के लिये प्रस्तुत किये जाने वाले किसी भी विषय के प्रति उनका दृष्टिकोण अध्ययन पूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण रहता है। जब सरकारी पदाधिकारी साक्षी के रूप में समिति के सामने उपस्थित होते हैं तो सदस्य उनसे समस्या के सम्पूर्ण पहलू समझने का प्रयत्न करते हैं और फिर सामान्य निर्णय के आधार पर अपने निष्कर्ष स्थापित करते हैं। यही कारण है कि कभी कभी उनकी सिफारिशें अनुपयुक्त प्रतीत होती हैं; किन्तु सही दृष्टिकोण धारण करने पर वे अन्तर्ग्रस्त विषयों का उत्तम हल सिद्ध होती हैं और विद्यमान नियमों एवं विनियमनों में परिवर्तन की आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है।

---

†प्राक्कलन समिति के सदस्यों के समक्ष ७ मई, १९५१ को दिया गया भाषण।

अतः जनता के समस्त वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली लोक-सभा के निर्वाचित सदस्यों से निर्मित प्राक्कलन समिति का दृष्टिकोण सर्वदा जनतांत्रिक दृष्टिकोण है और उसके मूल में सामान्य समझ की प्रबल आधारभित्ति है ।

इस दृष्टि से प्राक्कलन समिति के प्रतिवेदन प्रशासन पर गहरा नियंत्रण रखते हैं। वे एक नैतिक अंकुश का कार्य करते हैं, क्योंकि प्रशासन इस तथ्य से अवगत होता है कि समिति प्रत्येक विभाग के कार्य की भरपूर जांच करेगी और यह कि समिति द्वारा की जाने वाली आलोचना तथा स्वीकृत सिफारिशों के मामले में प्रशासन संसद् के प्रति उत्तरदायी है। इन सबसे प्रशासन में उच्च स्तर के निर्वहन की भावना को बल मिलता है। इस प्रकार यह सुनिश्चित हो जाता है कि कर दाताओं द्वारा दिये गये धन का समुचित एवं कुशलतापूर्वक उपयोग किया जायेगा और कर दाता अपने द्वारा दिये जाने वाले करों के बदले में यथोचित लाभ भोग सकेगा।

अधीनस्थ विधान

निं० चं० चटर्जी, संसद् सदस्य

जबसे लार्ड हेवर्ट ने "न्यू डेस्पाटिज्म" नामक पुस्तक प्रकाशित की तब से वे सभी विचारशील व्यक्ति, जिनका यह विश्वास है कि लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था को सन्तोषजनक ढंग से चलाने के लिये संसद् की प्रभुता को बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है, प्रत्यायोजित विधान की ओर अधिक ध्यान देने लगे हैं। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान में कार्यपालिका को विधि बनाने की शक्ति प्रदान की गई थी। इस शक्ति में परिवर्तन करने की सम्भावना काफी अधिक है। ब्रिटिश संसद् और हमारी संसद् में यह अन्तर है कि वह किसी भी अभिकरण के लिये कोई भी शक्तियां प्रत्यायोजित कर सकती है।

लार्ड हेवर्ट की भर्त्सना ने इंगलैण्ड के लार्ड चांसलर को इस बात के लिये विवश कर दिया कि वह मंत्रियों की शक्तियों सम्बन्धी एक समिति नियुक्त करे जो विधि बनाने की शक्तियों और संसद् से उनके सम्बन्ध पर विचार करे। डोनोमोर समिति ने १९३२ में प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और सिफारिश की कि प्रत्येक सदन में एक स्थायी समिति को न केवल समस्त अधीनस्थ विधान बल्कि विधान बनाने की शक्ति का प्रत्यायोजन करने वाले प्रत्येक विधेयक का भी परीक्षण करना चाहिये।

यह मान लिया गया कि विधान बनाने की शक्तियों के प्रत्यायोजन करने की प्रथा को हटाया नहीं जा सकता, क्योंकि विधान सम्बन्धी असंख्य परिवर्तनों का ब्योरा तैयार करना संसद् के लिये कठिन होगा, विधायिनी शक्तियों की सीमाओं, अनुसचिवीय प्रक्रिया के तरीके और जनता के संरक्षण के परित्राण के बारे में कई उपयोगी सुझाव दिये गये। संसद् ने निम्नलिखित आधारों पर अधीनस्थ विधान का समर्थन किया ;

(१) संसद् के पास समय की कमी,

(२) आधुनिक विधान का मूल विषय प्रायः टैक्निकल प्रकार का होता है,

(३) सम्बन्धित लोगों से परामर्श के परिणाम और उनके अनुभव से लाभ उठा सकने की गुंजाइश।

अधीनस्थ विधान पर संसद् के नियंत्रण में निम्नलिखित दो त्रुटियां पाई गईं :

(१) संसद् द्वारा विधायिनी शक्तियों का प्रत्यायोजन कर दिया जाता है जबकि दोनों सदनों के सदस्य पूरी तरह से इसका महत्व भी नहीं समझ पाते हैं।

(२) संसद् द्वारा प्रदत्त शक्तियों की संसद् की ओर से छानबीन की जाने की कोई कार्यशोधक व्यवस्था नहीं है।

भारत में संसदीय लोकतन्त्र के हित में यह बहुत ही अच्छा हुआ कि लोक-सभा के अध्यक्ष ने अधीनस्थ विधान पर संसदीय नियन्त्रण की आवश्यकता को पूरी तरह अनुभव किया। १ दिसम्बर, १९५३ को अध्यक्ष महोदय ने अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति नियुक्त की। प्रारम्भ से ही मुझे इस समिति में कार्य करने का अवसर मिला।

मार्च १९५४ में संसद् के समक्ष जो पहला प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया, उसमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण सिफारिश यह थी कि उस विधेयक के साथ, जिसमें विधायिनी शक्तियों के प्रत्यायोजन की प्रस्थापनायें हों, हर हालत में एक ऐसा ज्ञापन होना चाहिये, जिसमें उन प्रस्थापनाओं का ब्यौरा और क्षेत्र बताया गया हो। समिति ने विधायिनी शक्तियों का प्रत्यायोजन करने की प्रथा में एकरूपता लाने के लिये भी कुछ सिफारिशें कीं।

सितम्बर १९५४ में समिति ने लोक-सभा के समक्ष अपना दूसरा प्रतिवेदन रखा। समिति ने कई विधेयकों और संविहित आदेशों का परीक्षण करके बताया कि

"संसदीय लोक" तंत्र गोष्ठी के अवसर पर पढ़ा गया पत्र। इंडियन ब्यूरो आफ पार्लिआमेंटरी स्टडीज की अनुमति से साभार उद्धृत।

विधान बनाते समय नियम बनाने के प्राधिकार की सीमा का कहां उल्लंघन किया गया है। तीसरा प्रतिवेदन मई १९५५ म प्रस्तुत किया गया।

भारत संसद् ने कई नये सुधार किय हैं। अध्यक्ष महोदय ने विरोधी दल के सदस्य को समिति का सभापति नियुक्त किया। यह एक प्रशंसनीय सुधार है और यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि इस समिति ने मंत्रियों के किसी प्रकार के नियंत्रण के बिना अपना कार्य किया है। समिति के सदस्यों ने किसी भी दल के बन्धन में न रहते हुए बड़े उचित ढंग से काम किया और उन्होंने कभी भी दल गत भावना से किसी समस्या को हल करने का प्रयत्न नहीं किया। संसद् द्वारा विहित प्राधिकार के उल्लंघन की सम्भावनाओं को रोकने का जो कर्तव्य समिति को सौंपा गया था, वस्तुतः हमने उसे बड़े सन्तोषजनक ढंग से पूरा किया है। उपस्थित सदस्यों की सामान्य सम्मति से विभिन्न मामलों का निर्णय किया जाता है और सभापति को मत लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जुलाई १९५५ में जब मैं राष्ट्रमंडल विधि सम्मेलन के सिलसिले में इंगलैण्ड गया हुआ था, उस समय मुझे सर सीसिल कार के साथ प्रत्यायोजित विधान के जटिल प्रश्न पर बातचीत करने का अवसर मिला और मुझे इस विषय में सर्वमान्य विशेषज्ञ के अनुभवों से काफी लाभ हुआ। समिति विशेष-कर इस नियम का पालन करने का अनुरोध करती है कि समस्त अधीनस्थ विधान सभा-पटल पर रखा जाये और कर्तव्य-उपेक्षा के प्रत्येक कार्य की निन्दा की जाये।

साधारणतः हमें मंत्रालयों का सहयोग प्राप्त हुआ है। जब कभी हमें पदाधिकारियों को बुला कर सर-कार द्वारा प्रस्थापित किये गये अधीनस्थ विधान के औचित्य के बारे में पूछताछ करने का अवसर मिला, उन्होंने सहयोग की भावना प्रकट की। जब कभी हमने किसी मंत्रालय अथवा नियम बनाने वाले प्राधिकारियों को यह बताया कि वे नियम विहित सीमाओं का उल्लंघन करते हैं अथवा वे संविधि के उद्देश्य के अनुकूल नहीं हैं, तो उस विभाग अथवा सम्बन्धित पदाधिकारियों ने हमारी राय स्वीकार कर ली और त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न किया। समिति ने विधेयकों की बड़े गौर से छानबीन की, ताकि न्यायालयों के क्षेत्राधिकार पर कोई प्रभाव न पड़े। यदि नियम बनाने वाले प्राधिकार की ओर से न्यायिक पुनर्विलोकन के अपवर्जन का प्रयत्न किया गया, तो ऐसी हालत में कार्यपालिका की निरंकुशता गम्भीर रूप धारण कर लेगी।

दिसम्बर, १९५४ में अध्यक्ष महोदय ने समिति के समक्ष भाषण दिया और इस बात पर काफ़ी चर्चा हुई कि संसदीय लोकतन्त्र को प्रभावी बनाने के लिये समिति को किस ढंग से कार्य करना चाहिये। अध्यक्ष महोदय ने जो बातें कहीं उन्हें मैं यहां दोहराता हूं। ये बातें संसद् के प्रत्येक सदस्य और ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को याद रखनी चाहियें, जो इस देश में लोकतन्त्र को सफल बनाना चाहता है।

"आजकल जबकि शासन में काफी परिवर्तन हो चुके हैं और शीघ्रता से हो रहे हैं, ससद् के कर्तव्य में भी वैविध्य आ गया है। हमारी धारणा के अनुसार एक कल्याणकारी राज्य के प्रशासन का सम्बन्ध नागरिकों के जीवन के प्रत्येक पहलू से होता है। अतः स्वाभाविक है कि विधान का क्षेत्र विस्तृत हो जायेगा और अधिक विधियां बनाना आवश्यक होगा।

"ऐसी अवस्था में विधान बनाने वाली किसी एक संस्था के लिये यह सम्भव न होगा कि वह प्रत्येक विधि और सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं आदि को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक प्रत्येक नियम अथवा विनियम पर विचार करके उसका अनुमोदन करे। संसद् के पास काम इतना अधिक होता है कि उसे यह सब करने के लिये समय भी नहीं मिलता। उसे कार्य-पालिका का पर्यवेक्षण करना होता है; वित्त पर नियंत्रण रखना होता है; कार्यपालिका के मार्गदर्शन के लिये सामान्य नीतियां निर्धारित करनी होती हैं और इसके अतिरिक्त अन्य कई कार्य करने होते हैं। अतः विधान के मामले में भी संसद् एक रूपरेखा तैयार कर सकती है और उसका ब्यौरा कार्यपालिका को विधान में अभिव्यक्त की गई विधान मण्डल की इच्छानुसार तैयार करना होता है।

"इससे यह आवश्यक हो गया है कि विधान बनाने की संसदीय शक्ति को इस विधान द्वारा लागू की जाने वाली सीमाओं और क्षेत्र में रहते हुए प्रत्यायोजित करके कार्यपालिका को सौंप दिया जाये। विगत अनुभव से यह पता चलता है कि शासन चलाने में संसद् द्वारा निर्धारित किये गये कतिपय सिद्धान्तों की तुलना में कार्यपालिका द्वारा बनाये गये नियमों का अधिक हाथ होता है। ब्रिटेन

के अनुभवी संसद्वेत्ताओं का कहना है कि विधान द्वारा कार्यपालिका में इस प्रकार निहित की गई नियम बनाने की शक्ति से एक प्रकार की "नवीन निरंकुशता" पैदा होने लगी है। इस नवीन निरंकुशता पर नियन्त्रण करके उसे निर्धारित सीमा में रखने और उचित रूप से कार्य कराने के लिये संसद् इस समिति के द्वारा कार्यवाही करती है। इसलिये आप समिति के सदस्य होने के नाते एक प्रकार से संसद् के कर्तव्यों के अभिरक्षक हैं और आपको देखना होता है कि संसद् द्वारा प्रदत्त शक्तियों को किस प्रकार व्यवहार में लाया जा रहा है और प्रशासन को संसद् द्वारा निर्धारित की गई सीमाओं में रखना होता है।"

मैं आपको यह आश्वासन दिलाता हूं कि समिति के सदस्य अपने उत्तरदायित्व को पूरी तरह समझते हैं। उन्होंने जनता के अभिरक्षकों के तौर पर कार्य करने का प्रयत्न किया है और मैं समझता हूं कि हमें नियम बनाने की शक्ति के ठीक ठीक प्रयोग के सम्बन्ध में निदेश देने में सफलता प्राप्त हुई है।

हम मानते हैं कि शक्ति का प्रत्यायोजन आवश्यक भी है और इसमें जोखिम भी है। हमने नियम बनाने की शक्ति के अनुचित प्रयोग के मूल जोखिम को यथासम्भव घटाने का प्रयत्न किया है। प्रायः नीति और ब्यौरे में अन्तर का पता लगाना काफी कठिन होता है परन्तु हमारे प्रक्रिया नियमों में इस विषय पर कुछ उपयोगी उपबन्ध रखे गये हैं। हम यह नहीं कहते कि उनमें और आगे कोई सुधार नहीं हो सकता। हमने कार्यपालिका अथवा प्रशासन का विरोध नहीं किया है बल्कि संसद् द्वारा नियुक्त की गई एक उत्तरदायी निकाय के रूप में दलगत विचारों को छोड़ कर स्वतन्त्र और तटस्थ रूप से अधीनस्थ विधान की छानबीन की है, जिससे जनता के हित सुरक्षित रहें और जहां तक सम्भव हो प्राधिकार का दुरुपयोग न हो और संसद् की प्रभुता पर भी कोई आघात न पहुंचे।

प्रथम संसद् द्वारा उदात्त परम्पराओं की स्थापना

श्री व० वा० गांधी, संसद् सदस्य

हमारे देश के और अन्य कई देशों के अनुभवी पर्य-वेक्षकों का, जिन्होंने प्रथम संसद् को कार्य करने देखा है और इसके कार्य संचालन का अध्ययन किया है, कहना है कि यह संसद् कई प्रकार से प्रशंसनीय है।

इस वारे में उन सब का एक मत है कि यह संसद् राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर इस ढंग से कार्यवाही करती और विधान वनाती है जैसे कि उसका निर्माण हुए साढ़े चार वर्ष नहीं वल्कि कई वर्ष हो चुके है।

इस संसद् द्वारा किये गये विधान कार्यो की तुलना संसार की किसी भी अन्य संसद् के कार्यों से की जा सकती है। तेरहवें सत्र में किये गये कार्य की मात्रा और उसके ऐतिहासिक और सामान्य महत्व को देखते हुए प्रेस और अन्य लोगों ने इस सत्र को इस संसद् का एक महान् सत्र घोषित किया।

इसी सत्र में राज्य पुनर्गठन विधेयक और संवि-धान (नवां संशोधन) विधेयक पारित करके भारत का नया मानचित्र तैयार करने का महान् कार्य सम्पन्न हुआ। यह ठीक है कि उसमें काफी समय तक संघर्ष चलता रहा, जिसमें सभी दलों ने हर प्रकार के मत व्यक्त किये। परन्तु यह कोई अप्रत्याशित बात न थी।

विरोधी दल के एक नेता श्री फ्रेंक एन्थनी ने इस सत्र के वारे में जो कुछ कहा उसे कोई भी व्यक्ति दुहराये विना नहीं रह सकता। उन्होंने कहा "यह एक रोमांचकारी महत्वपूर्ण और वास्तव में ऐतिहासिक सत्र था"।

शुभारंभ

हर एक संसद् में दल और गुट होते हैं। यह दल और गुट इस प्रकार कार्य करते हैं कि उनमें एक वहुसंख्यक दल अथवा सरकारी दल होता है और एक विरोधी दल होता है। दोनों दल अर्थात् वहुसंख्यक दल और विरोधी दल अलग-अलग कई दलों और गुटों में मिला कर वनाये जा सकते हैं। विरोधी दल का काम साधारणत: आलोचना और वहुसंख्यक दल के प्रस्तावों का विरोध करना होता है। सभी संसदों में ऐसा ही होता है और होना भी यही चाहिये।

कुछ एक संसदों में ऐसा होता है—और वह भी उन संसदों में जहां काफी समय से लोकतन्त्रवादी ढंग से कार्य हो रहा हो—कि वहुसंख्यक दल और विरोधी दल अपनी दलगत भावनाओं को छोड़ कर राष्ट्रहित और वैदेशिक नीति के लिये एकमत होकर कार्य करते हैं।

यह देख कर वड़ा सन्तोष होता है कि भारत की प्रथम संसद् के दलों ने कई अवसरों पर अपनी दलगत भावनाओं को दवा कर संसदीय प्रक्रिया, वैदेशिक मामलों के वारे में इस देश की नीति और संविधान के संशोधनों के प्रश्न पर विचार किया है।

इस देश में लोकतन्त्र के भविष्य और प्रत्येक नाग-रिक की स्वाधीनता के वनाये रखने के लिये यह एक वड़ा शुभ लक्षण जान पड़ता है कि हमारी संसद् में केवल एक ही नहीं, वल्कि सभी दल देश के संविधान का आदर करते हैं और इसका प्रमाण हमें संविधान का संशोधन करने वाले विधेयकों के वाद-विवादों से मिलता है।

विनोद का अस्तित्व

संसदीय कार्य वड़ा गम्भीर कार्य होता है परन्तु सभा में विभिन्न प्रतिभाशाली व्यक्तियों के होने के कारण ऐसे अवसर कम नहीं होते जवकि भाषणों में निर्दोष विनोद की वातें कही जायें। अधिकतर प्रश्नकाल में ऐसे कई मज़ाक किये जाते हैं जिन से सभी लोग आनन्द उठाते हैं,

---

लेखक और फ्री प्रैस जर्नल के सम्पादक की अनुमति से उद्धृत

1057 LS—4

सभी दलों में योग्य सदस्य हैं। ऐसे भी व्यक्ति हैं जिन्होंने विधि शास्त्र, विज्ञान, संवैधानिक प्रक्रिया, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, कृषि, समाज-कल्याण जैसे सभी विषयों में ख्याति प्राप्त की है जिनमें देश की संसद् की अभिरुचि हो सकती है।

अन्य देशों में संसदीय वाद-विवाद में जोरदार भाषण देने की प्रथा लगभग समाप्त हो चुकी है परन्तु हमारी संसद् में अब भी दो या तीन ऐसे सदस्य हैं जो जोरदार भाषण देकर सभा को प्रभावित करना पसन्द करते हैं। परन्तु अधिकतर भाषणों में केवल काम की और प्रभावित करने वाली बात कही जाती है और भाषा की सुन्दरता के बजाय तर्क पर अधिक जोर दिया जाता है। कुछ एक सदस्यों के भाषण सुन कर बड़ी प्रसन्नता होती है। अंग्रेजी और हिन्दी, दोनों भाषायें बोली जाती हैं और एक दो सदस्यों का अंग्रेजी भाषा का उच्चारण बिल्कुल आक्सफोर्ड का सा है।

जिस प्रकार केवल एक अच्छा इंजन अथवा हवाई जहाज़ प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं होता। उसके लिये एक योग्य चालक की भी आवश्यकता होती है। उसी प्रकार सभा के लिये एक अच्छा अध्यक्ष होना भी आवश्यक होता है। अध्यक्षों के बारे में इस संसद् का भाग्य बड़ा अच्छा रहा है। संसद् के प्रथम अध्यक्ष स्वर्गीय ग० वा० मावलंकर की अद्भुत योग्यता को केवल इसी देश के ही नहीं, अपितु अन्य कई देशों के अनुभवी संसदवेत्ता भी स्वीकार करते हैं।

हमारे वर्तमान अध्यक्ष श्री म० अ० अय्यंगार एक अनुभवी संसदवेत्ता हैं, जिन्हें संसदीय प्रक्रिया के बारे में अपार ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त है। इसके अतिरिक्त उनकी विनोदशीलता प्रशंसनीय है। इन दो विख्यात पुरुषों ने अध्यक्ष बन कर महान परम्परायें स्थापित की हैं, जिनसे एक ऐसी संसद् ठीक ढंग में काम चला सकेगी, जिसमें बहुसंख्यक और विरोधी दोनों दलों को उपयुक्त परित्राण मिलेगा और किसी दल के साथ पक्षपात नहीं होगा।

महिला सदस्य

लगभग २० महिला सदस्यों ने इस संसद् के कार्य में अपना उपयुक्त स्थान बना लिया है। न केवल जब सभा में सामाजिक समस्याओं पर विचार हो रहा होता है, बल्कि राजनैतिक और आर्थिक मामलों पर वाद-विवाद के दौरान में भी महिला सदस्यों के भाषण सुनने में आते हैं। ये महिलायें बहुत अच्छी तरह से अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकती हैं और संसार की किसी भी संसद् में रखे जाने पर वे उसका सम्मान बढ़ा सकती हैं।

और सब बातों के अतिरिक्त मैं सब से अधिक महत्व इस बात को देता हूं जिसने इस संसद् को एक महान संसद् बना दिया है, वह यह है कि बहुत गरमा गरमी के समय भी जबकि एक दल दूसरे दल की नीति की कड़ी शब्दों में आलोचना करता है उस समय भी सदस्यगण बड़ी सहनशीलता और सहिष्णुता से काम लेते हैं। मैं समझता हूं कि हमारी संसद् की यह प्रवृत्ति भारतीयों की परम्परा और स्वभाव पर आधारित है इसलिये यह ऐसी ही बनी रहेगी।

बहुसंख्यक दल और विरोधी दल के सदस्यों में ऐसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध देख कर विदेशों से आये संसद्-वेत्ताओं को भी बड़ा आश्चर्य होता है। वाद-विवाद समाप्त होने पर भवन से निकलने के पश्चात् विभिन्न दलों के सदस्यों में कोई मनमुटाव अथवा द्वेष आदि का कोई चिन्ह दिखाई नहीं पड़ता। प्रत्येक दल में यह गुण है कि वह हर एक की योग्यता को पहचानता है।

संसद् में किसी विधेयक पर विचार करते समय विभिन्न दल एक दूसरे पर आक्षेप करते हैं परन्तु विधेयक पर चर्चा करने के बाद वे जिस शांतिपूर्ण ढंग से विचार-विनिमय और निर्णय करते हैं, उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। वह केवल अनुभव करने की चीज़ है। बहुत से लोगों का कहना है कि एक ही व्यक्ति के व्यक्तित्व के कारण यह होता है और वह हमारे प्रधान मंत्री हैं।

आश्चर्यजनक व्यक्तित्व

मैंने सभा में सभी दलों के वाद-विवाद गर्मा गर्मी और एक दूसरे पर किये जाने वाले कटाक्ष सुने हैं। और मैंने यह भी देखा है कि प्रधान मंत्री द्वारा अन्तर्बाधा उपस्थित करते ही सारे वातावरण में एक गम्भीरता सी छा जाती है। वह घटनाओं का रुख ही नहीं, बल्कि सभी दलों के सदस्यों के मन को भी बदल देते हैं।

सभा में प्रधान मंत्री का प्रभाव अद्वितीय है। संसार की संसदों में बहुत कम ऐसे लोग होंगे जिन्हें सभा के हर पक्ष से इतनी प्रशंसा प्राप्त हुई हो।

आशा है कि सभा के ये गुण और परम्परायें कई प्रधान मंत्रियों के समय तक बनी रहेंगी। अन्य देशों में जनसंख्या में अधिक एकरूपता है जबकि भारत में एक दूसरे के प्रति घोर विषमता है और अनेक विषयों में तो उनका परस्पर अन्तर चरम सीमा तक पहुंच गया है। जब हम संसद् सदस्यों की विद्वत्ता, उनकी सफलताओं और उनके सेवा भाव को देखते हैं (जब हम देखते हैं कि विज्ञान के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त स्वर्गीय डा० मेघनाद साहा जैसे व्यक्ति ने केवल सेवा भाव से एक छोटे से नगर में रह कर लोगों की किस प्रकार सेवा की) तो आश्चर्य होता है कि इस महान संसद् में देश के सभी स्तर के लोगों का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है।

कार्यपालिका, विधान मण्डल और न्यायपालिका के परस्परसम्बन्ध

पी० एन० सप्रू, संसद् सदस्य

काफी विचार करने के पश्चात् संविधान सभा ने यह निर्णय किया कि हमारी जनता के लिये संसदीय कार्यपालिका उपयुक्त होगी। साधारण भाषा में इसे यह कहना चाहिये कि हमारे देश का प्रशासन चलाने वाली कार्यपालिका का चुनाव विधानमंडल में से किया जाये और वह तब तक पद सम्भाले जब तक कि विधान मंडल का उसमें विश्वास है। यह ब्रिटिश कार्यपालिका की तरह है जिसे हाउस ग्राफ कामन्स में बहुसंख्यक दल की समिति कहा जा सकता है। सौभाग्यवश हमारे देश की कार्यपालिका बड़ी दृढ़ सिद्ध हुई है। इसका कारण यह है कि गत निर्वाचन में सत्तारूढ़ हुये कांग्रेस दल की संख्या हाउस ग्राफ़ दी पीपल में काफी अधिक है। संसदीय प्रणाली पर आधारित सरकार विधान मंडल के सेवक के रूप में कार्य नहीं करती। उसका काम नेता का चुनाव करना होता है जो कि वह अपने दल के दृष्टिकोण पर विभिन्न प्रकार से विस्तार करने के पश्चात् करती है। कार्यपालिका का चुनाव प्रधान मंत्री करता है क्योंकि उसकी मंत्रणानुसार राष्ट्रपति विभिन्न मंत्रियों और उपमंत्रियों को नियुक्त करता है जो देश की कार्यपालिका बनाते हैं। प्रधान मंत्री समय समय पर अपने मंत्रिमंडल का पुनर्गठन कर सकता है और इस प्रयोजन के लिये वह मंत्रियों से अपने त्याग पत्र देने के लिये कह सकता है। एक उत्तरदायी सरकार में प्रधान मंत्री का बड़ा महत्व होता है। वही अपने सहकारियों का चुनाव करता है जो कि उस समय तक पदस्थ रहते हैं जब तक प्रधान मंत्री का उनमें विश्वास होता है।

हमारे संविधान में संघ और राज्य सरकारों के लिये मंत्रिमंडल पद्धति को ही ग्रहण किया गया है। जैसा कि सभी जानते हैं हमारे राज्यों में मुख्य मंत्री ही सरकार का प्रमुख होता है। अपने सहकारियों के बारे में उसे भी लगभग वही शक्तियां प्राप्त होती हैं जो कि संघ के प्रधान मंत्री को।

संसदीय लोकतन्त्र की प्रणाली में यह गुण होता है कि इससे विधान मंडल और कार्यपालिका में जो कि शासन के दो अंग हैं, समन्वय बना रहता है। अमरीका में, जहां राष्ट्रपति पद्धति है, शासन की प्रत्येक शाखा, अर्थात्, राष्ट्रपति, कांग्रेस और न्यायपालिका, पूर्णतः एक दूसरे के हस्तक्षेप से स्वतंत्र होते हैं। मंत्रिमंडल के सदस्य विधान मंडलों में से नहीं चुने जाते, बल्कि वे कांग्रेस के सदस्य नहीं रह सकते और यदि किसी को मंत्रिमंडल में रख लिया जाये तो उसे कांग्रेस से त्यागपत्र देना पड़ता है। जब तक राष्ट्रपति चाहता है, वे पदस्थ रहते हैं। यद्यपि उन्हें राष्ट्रपति के सहकारी माना जाता है परन्तु संवैधानिक दृष्टि से वे राष्ट्रपति के मंत्रणाकार होते हैं। उनकी मंत्रणा को महत्व देना या न देना केवल राष्ट्रपति पर निर्भर करता है। इस पद्धति को सफल बनाने के लिये राष्ट्रपति को कुछ अधिकार दिये गये हैं जिनमें कांग्रेस का कोई दखल नहीं है। यह पद्धति नियंत्रण और संतुलन पर आधारित है और वस्तुतः इसे चलाना काफी कठिन है। अमरीकी जनता के लिये यह पद्धति ठीक है क्योंकि वे इसका काफी सम्मान करने लगे हैं। वे इसे पसन्द करते हैं और सभी लोग यह जानते हैं कि सीनेट और प्रतिनिधि सभा[1] की समितियों विशेषकर सीनेट की समितियों के सभापति बड़े प्रभावशाली व्यक्ति होते हैं। कार्यपालिका इन सभापतियों की सहायता से कांग्रेस में विधान प्रस्तुत करती है और कांग्रेस में प्रशासन की ओर से प्रवर्तित विधान-प्रस्तावों का समर्थन करने के लिये मंत्रिगण इन समितियों के सामने उपस्थित होते हैं। कभी कभी ऐसा हुआ है कि कांग्रेस में अपेक्षित बहुमत न होने के कारण राष्ट्रपति अपना कार्यक्रम पूरा नहीं कर सके, परन्तु प्रशासन की ओर से प्रस्तुत किये गये किसी विधान के पारित न होने से राष्ट्रपति अथवा विधान प्रस्तुत करने वाले विभाग के भारसाधक मंत्री को त्याग पत्र नहीं देना होता है।

[1]House of Representatives·

एकात्मक संविधान के अन्तर्गत जो अधिकतर लिखा हुआ नहीं होता जैसा कि ब्रिटिश संविधान है और जिसका संशोधन एक साधारण विधान की तरह किया जा सकता है, न्यायालयों में इस प्रश्न पर चर्चा नहीं की जा सकती कि कौन सा विषय विधान मंडल के क्षेत्राधिकार से बाहर है। हमारे देश के संविधान को अन्य कोई उपयुक्त शब्द न होने पर अर्द्ध-संघीय कहा जा सकता है। प्रभुता को केन्द्र और गणतन्त्र के राज्यों में बांट दिया गया है। कुछ ऐसे विषय हैं जिनके बारे में केवल संसद् विधान बना सकती है। कुछ एक विषय सर्वथा राज्य विधान मंडलों के क्षेत्राधिकार में हैं और कुछ विषयों पर संसद् और राज्य विधान मंडल दोनों ही विधान बना सकते हैं। संघ सरकार और राज्य सरकारों की कार्यपालिका शक्ति ठीक उनकी विधायिनी शक्ति के समान है। इसलिये प्रायः ये प्रश्न उत्पन्न होते हैं कि संघ अथवा राज्य विधान मंडल ने अमुक अधिनियम पारित करने में अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण तो नहीं किया। प्रश्नाधीन विधान द्वारा प्रभावित किसी व्यक्ति द्वारा यदि किसी विशेष मामले में यह प्रश्न उठाया जाता है तो हमारे न्यायालयों में, जिनका प्रमुख उच्चतम-न्यायालय है, किसी विधि की मान्यता का परीक्षण किया जा सकता है, उच्चतम न्यायालय द्वारा किसी विधि का निर्वचन देश के सभी न्यायालयों के लिये बाध्य होता है और उसे लागू करने में कार्यपालिका शासन को सहायता देनी पड़ती है।

विधायिनी सूचियों के संबंध में हमारे विधान मंडलों की प्रभुता न केवल संविधान के उपबन्धों द्वारा ही सीमित है बल्कि विधान बनाते समय उन्हें आधारभूत अधिकारों का भी विशेष ध्यान रखना होता है जिसकी उपेक्षा वे नहीं कर सकते। वे अधिकार ऐसे नहीं हैं कि उनमें कोई परिवर्तन न किया जा सकता हो। संविधान में उपबन्धित रीति के अनुसार संसद् उनमें रूपभेद, संशोधन अथवा निराकरण कर सकती है। वे इस प्रकार के अलंघनीय अथवा सम्पूर्ण अधिकार नहीं हैं कि उनमें विधान-मंडल कोई कमी न कर सकें। शांति, सदाचार, शिष्टता, देश की सुरक्षा के हित में और अन्य ऐसे आधारों पर उचित प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं। यदि किसी विधान अथवा कार्यपालिका आदेश द्वारा प्रभावित कोई व्यक्ति यह मुकदमा करता है कि इससे इन अधिकारों का उल्लंघन होता है तो न्यायालय को ही इस बात का निर्णय करना होता है कि जिस विधान अथवा कार्यपालिका आदेश पर आपत्ति की गई है वह औचित्य की कसौटी पर पूरा उतरता है या नहीं। न्यायालय यह पूर्व धारणा लेकर कार्यवाही आरम्भ करते हैं कि विधान मंडल द्वारा पारित किये गये अधिनियम मान्य हैं। परन्तु किसी उपयुक्त मामले में वे यह निर्णय करने के उत्तरदायित्व से नहीं बच सकते कि लगाया गया प्रतिबन्ध उचित है या नहीं। यद्यपि, राज्य के निदेशक तत्व पर वाद-विवाद नहीं होगा, तथापि उस श्रेष्ठ भाषा में जिन सिद्धांतों का वर्णन किया गया है उन्हीं पर हमारा कल्याणकारी राज्य आधारित है और यह निर्णय करते समय कि विधि उचित है या नहीं न्यायालय इन निदेशक तत्वों से प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। यद्यपि हमारे संविधान के किसी खंड में इसका कोई निश्चित तरीका नहीं बताया गया है, तथापि हम इसके मूल अभिप्राय की उपेक्षा नहीं कर सकते। क्योंकि प्रायः यह घोषणा करते समय कि अमुक निर्णय करने के लिये निर्धारित की गई प्रक्रिया ठीक थी या नहीं, उन्हें यह विचार करना पड़ता है कि क्या साधारण न्याय के सिद्धांत की उपेक्षा की गई थी या नहीं।

हमारे उच्च न्यायालयों को संविधान के अनुच्छेद ३२, २२६, २२७ और २२८ में जो विशिष्ट शक्तियां प्रदान की गई हैं उनसे यह स्पष्ट है कि उन्हें यह सुनिश्चित करने की काफी शक्तियां प्राप्त हैं कि संविधान द्वारा स्थापित विधानमंडल और कार्यपालिका अपने क्षेत्राधिकार से बाहर न जाये। इस लिये हमारे संविधान के निर्माताओं ने उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता को अधिक महत्व दिया। संविधान के अनुसार हमारे न्यायालय ही हमारी विधियों का निर्वचन करते हैं। यह उन्हीं को देखना होता है कि समता संबंधी खंड इस प्रकार लागू किये जायें कि उससे भेदभाव पैदा न हो। विधि बनाने का कार्य विधान मंडलों तक ही सीमित है परन्तु कई बार न्यायालय विधियों का निर्वचन करके उनके अभिप्राय में ऐसा परिवर्तन कर देते हैं जो कभी विधान मंडल के ख्याल में भी नहीं आया होता। ऐसी परिस्थितियों में अन्त में विधानमंडल ही इस बात का निर्णय करता है कि भविष्य में उसी निर्वचन के अनुसार कार्यवाही की जाये या नहीं। विधान मंडल चाहे अपने क्षेत्र में सर्व प्रभुत्व सम्पन्न हैं, फिर भी उनकी तुलना ब्रिटिश संसद् के साथ नहीं की जा सकती, क्योंकि

न्यायालय हमारी विधियों का निर्वचन करते हैं और लिखित संविधान होने के कारण उन्हें संविधान के उपबन्धों के अनुसार कार्य करना पड़ता है। स्वयं संविधान द्वारा बताये गये ढंग से संसद् संविधान में परिवर्तन कर सकती है।

अतः हमारे संविधान की मुख्य मुख्य बातें संसदीय लोकतंत्र, मूल भूत अधिकार और विधि विहित हैं। इसकी रचना करते समय हमने प्रत्येक व्यक्ति औ— उस समुदाय को महत्व दिया है जिससे उस व्यक्ति को अलग नहीं किया जा सकता।

कुछ पश्चिमी देशों ने काश्मीर को भारत में शामिल होने से रोकने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ में जो चालें चलीं उनके खिलाफ भारत ने जो दृष्टिकोण अपनाया हमने उसका भी पूरा समर्थन किया।

राज्य पुर्नगठन

साम्यवादी सदस्यों को इस बात की भी बड़ी प्रसन्नता है कि उन्होंने संसद् में सरकार की जिन नीतियों की आलोचना की उसका अनुकूल प्रभाव पड़ा और कुछ हद तक उन नीतियों को बदलने में सहायता की।

मैं यहां एक संकल्प का उदाहरण देता हूं जो हम ने ७ जुलाई, १९५२ को प्रस्तुत किया और जिसमें हमने प्रांतों को भाषा के आधार पर पुनर्गठित करने की मांग की। उस समय सत्तारूढ़ दल ने इसका घोर विरोध किया। प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया था। और जैसाकि प्रत्येक व्यक्ति जानता है सरकार को पांच वर्ष के अन्दर हमारा सुझाव स्वीकार करना पड़ा और एक उच्च स्तर का राज्य पुनर्गठन आयोग नियुक्त करना पड़ा और बम्बई के द्विभाषी राज्य के अतिरिक्त शेष सभी राज्य मुख्यतः भाषा के आधार पर पुनर्गठित किये गये हैं। यह परिवर्तन क्यों हुआ ? मुझे विश्वास है कि साम्यवादी सदस्य १९५२ में वास्तव में जनता की इच्छा प्रकट कर रहे थे।

आर्थिक नीति

हमारी अर्थ व्यवस्था पर विदेशी पूंजी और समस्त एकाधिकारों ने जो दबाव डाल रखा है उसका साम्यवादी सदस्यों ने संसद् में विरोध किया। हमने आर्थिक योजनाओं में सुधार करने, भारी उद्योगों को अधिक महत्व देने और जनता का सहयोग प्राप्त करने के अर्थोपाय ढूंढने के बारे में अनुरोध किया।

हम बेकारी को दूर करने के लिये कोई ठोस नीति चाहते हैं। अगस्त १९५३ में हमने जो संकल्प प्रस्तुत किया उस पर संसद् के दो सत्रों में चर्चा की गई और सरकार ने उसमें कुछ संशोधन करके उसे द्वितीय पंच वर्षीय योजना के निदेश के रूप में स्वीकार कर लिया।

अपने उत्पादन का उचित मूल्य प्राप्त करने का कृषक को जो अधिकार है, उसके लिये हम भी लड़े। हमने श्रमिकों की मजूरी, उनकी कार्य करने की अवस्था में सुधार करने, भविष्य निधि और सामाजिक सुरक्षा के उपायों की व्यवस्था करने का प्रयत्न किया; हमने मध्य वर्ग के कर्मचारियों को, चाहे वे सरकारी सेवा में थे या बैंकों अथवा बीमा या वाणिज्य अथवा किसी भी व्यवसाय में थे उनके अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया।

हम चाहते थे कि करारोपण की प्रणाली समान हो और उसका मुख्य भार उन्हीं लोगों पर रहे जिनमें भुगतान करने की सामर्थ्य है। हमने सरकार को बताया है कि किस प्रकार बीमा और बैंकों, कोयला और चाय उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करके और राज्य व्यापार द्वारा योजना के लिये धन प्राप्त करने के साधन जुटाये जा सकते हैं। सरकार ने अंशतः इन्हें स्वीकार भी कर लिया है।

जैसा कि प्रत्येक व्यक्ति जानता है संसद में विरोधी दल के मार्ग में कई बाधायें आती हैं क्योंकि सभा के नियमों के अनुसार सभा के प्रत्येक कार्य में सत्तारूढ़ दल को प्राथमिकता दी जाती है। अधिकांश समय सरकारी कार्य में व्यतीत हो जाता है और विरोधी दल केवल आलोचना कर सकता है अथवा सरकारी प्रस्तावों के बारे में सुझाव दे सकता है। गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों में विरोधी दल अपने प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकता है परन्तु उसके लिये समय बहुत कम दिया जाता है। उदाहरणतः ४० दिन में गैर-सरकारी सदस्यों को अपने संकल्प प्रस्तुत करने के लिये केवल ढाई घंटे दिये जाते हैं। फिर भी हम ने संकल्पों, विधेयकों और आधे-घंटे-की चर्चाओं के द्वारा सदन और सरकार का ध्यान कई राष्ट्रीय महत्व और लोक कल्याण के मामलों की ओर आकर्षित किया है। साम्यवादी सदस्यों ने संसद में जो संकल्प प्रस्तुत किये, उनमें से कुछ ये हैं :—

७ जुलाई, १९५२ .	भाषा के आधार पर राज्यों को पुनः बांटना।
४ अप्रैल, १९५३ .	राष्ट्रीय सुरक्षा परित्राण, जो कि कम वेतन पाने वाले कर्मचारियों को कार्मिक संघो से निकालने के प्रयोजन से उन पर दबाव डालने के लिये सरकार द्वारा प्रयुक्त किये जा रहे थे।

२४ नवम्बर, १९५३	वेकारी के वारे में संकल्प जिसमें यह सुझाव दिये गये कि वेरोजगारी की सहायता के लिये ५० करोड़ रुपये अलग रखे जायें और अनाज और कपड़े के मूल्यों में तुरन्त ३० प्रतिशत कमी की जाये ।
२७ अगस्त, १९५४	:सन और वस्त्र उद्योगों के लिये प्रस्तावित वैज्ञानिकन और श्रमिकों के जीवन स्तर पर इसके बुरे प्रभावों के सम्बन्ध में ।
२४ सितम्बर. १९५४	एक निश्चित अवधि तक नौकरी के पश्चात सरकारी कर्मचारियों की नौकरी सुरक्षित करने की प्रत्याभूति देने और रेलवे सेवायें (राष्ट्रीय सुरक्षा का परित्राण) नियम, १९५४ और ऐसे अन्य उपबन्धों के निरसन के वारे में ।
११ मार्च, १९५५ .	श्रमिकों के सामूहिक समझौते के अधिकार के वारे में जिसका कार्मिक संघ आन्दोलन ने वीड़ा उठाया था ।
१० अगस्त, १९५५	अत्यावश्यक वस्तुओं में राज्य व्यापार के महत्व के वारे में ।
१७ अगस्त, १९५६.	संविधान में उल्लिखित राज्य नीति के निदेशक तत्वों के परिपालन के वारे में जांच करने की आवश्यकता के वारे में ।
३० नवम्बर, १९५६	चाय उद्योग में विदेशी अंश के राष्ट्रीयकरण के वारे में ।

साम्यवादी सदस्यों ने संसद में निम्नलिखित विधेयक अधिनियमित कराने का प्रयत्न किया :

भारतीय कार्मिक संघ (संशोधन) विधेयक जो प्रतिनिधि कार्मिक संघों को मान्यता देने की व्यवस्था करने के वारे में था ।

श्रमिक क्षतिपूर्ति (संशोधन) विधेयक जो श्रमिकों के अपंग हो जाने पर क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के अधिकार का स्पष्टीकरण करने के लिये था ।

मोटर गाड़ी (संशोधन) विधेयक

विद्युत् (संशोधन) विधेयक

सिगार और बीड़ी श्रमिक विधेयक

अन्त में मैं मतदाताओं और सामान्य जनता से अपने सम्बन्ध के वारे में कुछ शब्द कहना चाहता हूं । गत पांच वर्षों में प्रत्येक मास अपने संसदीय कार्यालय में हमें औसतन १०० पत्र और ज्ञापन देश के विभिन्न भागों से प्राप्त होते रहे हैं, इस के अतिरिक्त प्रत्येक साम्यवादी संसद् सदस्य को अपने निर्वाचन क्षेत्र से ही नहीं वल्कि देश के अन्य भागों से कई पत्र प्राप्त होते रहे हैं। स्वयं मुझे प्रत्येक मास १०० से अधिक पत्र और ज्ञापन मिलते रहे हैं। हम नियमित रूप से इन पत्रों के उत्तर देते हैं। पत्रों और ज्ञापनों में उल्लिखित मामलों के वारे में हम सम्वन्धित सरकारी विभागों को लिखते हैं और प्राप्त हुए उत्तर सम्वन्धित व्यक्तियों अथवा संगठनों को भेज देते हैं ।

जनता से हमारा सम्पर्क केवल यहीं तक सीमित नहीं है भारत में जहां कहीं लोग संकट में होते हैं अथवा अपनी उचित शिकायतें दूर करने के लिये संघर्ष कर रहे होते हैं अथवा अपनी उचित मांगें पूरी कराना चाहते हैं वहीं संसद् सदस्य जाते रहे हैं । हम समझते हैं कि जनता के प्रतिनिधि होने के नाते हमारा यह कर्तव्य है कि हम उनकी सहायता करें और कठिनाई में हम उनका साथ दें ।

इस संक्षिप्त और अधूरी समीक्षा को समाप्त करने से पूर्व मैं लोक सभा सचिवालय के पदाधिकारियों और कर्मचारियों को उनकी कार्यकुशलता के लिये वधाई देना चाहता हूं और हमें उनकी जो सहायता मिलती रही है, उसके लिये विरोधी दल की ओर से मैं उनको धन्यवाद देता हूं ।

1057 LS—5.

विरोधी दल के महत्व को पूरी तरह समझा नहीं गया

श्री म० शि० गुरुपादस्वामी, संसद्-सदस्य

मैंने प्रायः लोगों को यह कहते सुना है कि संसद् राष्ट्र का एक राजनैतिक क्लब है। संसद् के सम्बन्ध में मैंने और भी अनेक मजाक सुने हैं। मेरे एक मित्र कहा करते थे कि "यदि आप एक बार संसद् देख लें तो आप को सरकस देखने जाने की आवश्यकता नहीं है।"

एक दूतावास के एक भोज समारोह में मैंने एक महिला को यह कहते हुये सुना कि संसद् और चिड़ियाघर तथा अजायबघर में एक विचित्र सा सादृश्य है। इस तरह की बातें अच्छे खासे मज़ाक हैं परन्तु ये बातें कुछ अनोखी या असाधारण नही हैं।

पुराने जमाने में, उदाहरणार्थ, राजाओं और रानियों और दार्शनिकों तथा पैगम्बरों के बारे में मजाक की बातें कही जाती थीं। स्त्रियों की डाह तथा उनके विचारों की अस्थिरता के बारे में पुराने जमाने में भी मजाक की बातें कही जाती थीं और अब भी कही जाती हैं। इस प्रकार इस संसार में एक तरह के काम में लगे लोग दूसरे काम में लगे लोगों की हंसी और मजाक उड़ाते ही हैं। अतः जब मैं संसद् तथा संसद् सदस्यों के सम्बन्ध में हंसी मजाक सुनता हूं तो मैं उसे विनोद के रूप में समझ लेता हूं।

मुझे विश्वास है कि जो लोग ऐसा विनोद करते हैं वे केवल मजाक के लिए ही ऐसा कहते हैं उनका अन्य कोई प्रयोजन नहीं होता। संसद् सदस्य होने के नाते हमें समाज में इस तरह की बातें करने वालों के प्रति भी सहिष्णुता बरतनी पड़ती है पर कभी कभी ऐसी हल्की बातें किसी किसी के लिए अपमानजनक सिद्ध हो सकती हैं।

एक बार एक व्यापारी ने मुझ से कहा कि संसद् तो केवल गप-शप लगाने की जगह है। उसने कहा कि संसद् के सदस्य केवल बातें ही करते हैं और कुछ नहीं करते। मैंने उसको बताया कि लोकतन्त्र में तो बातों से ही सरकार चलती है। मतदाता संसद्-सदस्यों को इसी काम के लिए निर्वाचित करते हैं। संसद्-सदस्यों की बातों को अन्धाधुन्ध बकवास नहीं कहा जा सकता यद्यपि वाद-विवाद में कभी कभी विषय की सुसंगतता नष्ट हो जाती है।

पर मैं सोचता हूं कि कोई भी व्यक्ति यह क्यों चाहता है कि हमेशा सुसंगत बात ही कही जाये? यदि विषय से बिल्कुल सुसंगत बात ही कही जायेगी और केवल तथ्यों को भाषणों द्वारा प्रकट किया जायेगा तो वाद-विवाद बड़ा नीरस हो जायेगा। संसार के सबसे अच्छे वक्ताओं ने भी अनेक अवसरों पर ऐसी बातें कही हैं जो विषय से संगत नहीं हैं। मनुष्य का जीवन भी संगत तथा असंगत दोनों का संयोग ही है। फिर भी, असंगत बातें हमेशा नहीं कही जानी चाहिएं बल्कि अपवाद रूप में ही कही जानी चाहिएं।

इन पांच वर्षों में हमारे संसद् सदस्यों ने प्रायः इसी सिद्धान्त का अनुसरण किया है। जिन अधिकांश सदस्यों ने जो कुछ भी कहा है उसे ठीक प्रकार ही कहा है।

कुछ सदस्य इन पांच वर्षों में बोलने की तीव्र इच्छा को दबाये रखने में बहुत सफल हुए हैं। मेरा विचार है कि ये संसद् सदस्य बहुत अधिक सम्मान के पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने इतना गम्भीर रहने का स्वभाव बना लिया है। सरकार ने ऐसे लोगों का पर्याप्त रूप से मान किया है।

उदाहरण के लिए, जब महत्वपूर्ण समितियां बनाई जाती हैं या विदेश को शिष्टमण्डल भेजे जाते हैं तो उन संसद् सदस्यों को, जिन्होंने शान्त रहने के नियम का पालन किया हो या जिन्होंने वाद-विवाद में भाग लेने की कभी चिन्ता न की हो, उनमें रखा जाता है—शायद यह इनाम उनको उनकी घोर निष्क्रियता के बदले में दिया जाता है।

एक बार एक सदस्य ने मुझसे कहा कि संसद के वाद-विवादों में भाषण कला का अभाव रहता है। उन्होंने कहा कि वाद-विवाद में नोंक झोंक की बातें नहीं होतीं। यह सच है कि भाषण जोरदार और प्रभावशाली नहीं होते। अतः भाषण, इन बातों के न होने के कारण,

ऐसे नहीं होते कि उनसे कुछ निष्कर्ष निकाला जा सकता हो। भाषण अधिक से अधिक तथ्यपूर्ण, विश्लेषणात्मक तथा पुराने तरीके के होते हैं। मुझे ग्लैडस्टन, डिजरायली और जान ब्राइट का जमाना याद आता है। उन दिनों बड़े उच्चकोटि के भाषण होते थे। जब ये महान् व्यक्ति अपनी शानदार आवाज में भाषण देते थे तो सारी संसद् में एक लहर सी दौड़ जाती थी।

इंगलैण्ड में भी अब भाषण कला नहीं रह गयी और वहां भी अब निर्जीव भाषण होते हैं। भारतीय संसदीय इतिहास में इन पांच वर्षों में धारा प्रवाह भाषणों की संख्या उंगली पर गिनी जा सकती है। काश्मीर, निवारक निरोध अधिनियम, शरणार्थियों का आगमन, गोआ, आन्ध्र और त्रावनकोर कोचीन में राष्ट्रपति का शासन और राज्य पुनर्गठन विधेयक पर हुये वाद-विवादों में हमें भाषण कला के कुछ शानदार अवसर देखने को मिले। आगे आने वाले समय में ऐसे अवसरों की संख्या और भी कम हो जायेगी।

अध्यक्ष का ध्यान

अध्यक्ष के बिना लोक-सभा का काम नहीं चल सकता। सभा के लिए उनका होना अनिवार्य है। वह संसद् के भाषणों का सबसे बड़ा आलोचनात्मक निर्णायक होता है। सदस्यों को बोलने का अवसर प्राप्त करने के लिये अध्यक्ष का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना पड़ता है जिसे अंग्रेजी में 'कैचिंग दी आई' (Catching the eye) कहते हैं। पर व्यावहारिक दृष्टि से ऐसा करना एक बहुत कठिन काम है। मि० बाडविन ने एक बार कहा था अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करना दुनिया की सबसे मुश्किल चीज है।

कोई भी सदस्य इस बात के लिए सुनिश्चित नहीं हो सकता कि वह अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित कर ही लेगा पर आजकल अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करने के स्थान पर चिट भेजने की प्रणाली दिनों दिन बढ़ती जा रही है। बहुधा सदस्य अध्यक्ष के कक्ष में जाकर उससे स्वयं बात करके अपने अवसर को सुरक्षित कर लेते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि विभिन्न राजनैतिक दलों के नेताओं को बोलने के लिये अधिक समय और अधिक अवसर मिल जाते हैं।

मैं सदस्यों को प्रायः यह कहते हुये सुनता हूं कि कुछ लोग अनुचित ढंग से चर्चा के समय एकाधिकार कर लेते हैं। किसी भी विषय पर, किसी समय और कुछ भी बोलने का अवसर पाने के लिए हमेशा लोगों को होड़ करनी पड़ती है। बहुत से सदस्य ऐसे हैं जो उन विषयों पर नहीं बोलते जिनका उन्हें अच्छा ज्ञान है बल्कि उन विषयों पर बोलते हैं जिनके बारे में उनको अधिक ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार वाद-विवाद में जोश और जोर खत्म हो जाता है।

जब वाद विवाद में कोई दिलचस्पी नहीं रहती तो सदस्य प्रायः सभा के बाहर जाकर किसी अन्य स्थान पर लाबी अथवा सेन्ट्रल हाल में—अपना समय व्यतीत करते हैं। प्रायः देखा जाता है कि सभा में जितने सदस्य होते हैं उसकी अपेक्षा सेन्ट्रल हाल में बहुत सारे सदस्य बातचीत में व्यस्त रहते हैं। कभी कभी मंत्री लोग भी जिन्हें सभा के कार्य में सदस्यों की अपेक्षा अधिक दिलचस्पी लेनी होती है, अनुपस्थित रहते हैं।

इन पांच वर्षों में मैंने कई बार देखा है कि जब सदस्य मंत्रियों को सम्बोधित करके कुछ कहते हैं तो उस समय मन्त्री अनुपस्थित रहते हैं। अनेक औचित्य प्रश्न उठाये जाने और अध्यक्ष द्वारा कई बार चेतावनी दिये जाने के बावजूद सभा की उपस्थिति के सम्बन्ध में मंत्रियों ने जिस अनुत्तरदायी ढंग से व्यवहार किया है वैसा अन्य किसी ने नहीं किया। जब मंत्री लोग स्वयं सभा के कार्य में दिलचस्पी नहीं लेते तो अन्य लोग क्या दिलचस्पी ले सकते हैं।

अधिक मंत्री

इस अवधि में मैंने यह भी देखा कि किस प्रकार मन्त्रियों की संख्या धीरे धीरे तीस से बढ़ कर पचास हो गयी और उन्होंने अध्यक्ष के दाहिनी ओर और सामने की तीन लाइनें घेर लीं। किसी ने इसे राजनीतिक विदूषकों का एक सुन्दर समुदाय कहा है।

इन पांच वर्षों में संसद् में यह देख कर मुझे बहुत दुख हुआ कि मन्त्रियों के काम का स्तर बहुत गिर गया है जिसके अप्रत्यक्ष परिणामस्वरूप सभा का भी स्तर गिर गया। मन्त्रालय के मध्यम दर्जे के स्तर ने हमारे संसदीय जीवन को भी मध्यम दर्जे का बना दिया।

मैं महसूस करता हूं कि इन पांच वर्षों में सरकारी दल ने विरोधी दल के महत्व को कभी भी स्वीकार नहीं किया । एक बार डिजरायली ने कहा था, "कोई भी सरकार अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह सकती, यदि एक सुदृढ़ विरोधी दल न हो ।" विरोधी दल सरकार को समुचित स्तर पर बनाये रखता है, गलतियों के बारे में उसे सावधान करता है, या ऐसी चीजों को करने के बारे में सावधान करता है जिसे जनता पसन्द नहीं करेगी । अगर मैं यह कहूं कि विरोधी दल का कर्त्तव्य नयी चीज़ों के लिए प्रस्ताव करना, सरकार की गलतियों को प्रकाश में लाना, विरोध करना और उसे अपदस्थ करने का प्रयत्न करना है तो शायद ठीक ही होगा ।

मैं यह नहीं कह सकता कि विरोधी दल अपने इस महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने में सफल हुआ है । हो सकता है कि ऐसा विरोधी दल के अनुशासनहीन होने के कारण हुआ हो । उसमें तरह-तरह के विचारों के लोग होते हैं । प्रायः ऐसा देखा गया कि विरोधी दल के व्यक्तियों में स्वयं आपस में इतनी फूट और असहमति थी जितनी सरकार तथा विरोधी दल के बीच नहीं थी । इसके अतिरिक्त विरोधी दल में जो स्वतन्त्र सदस्य थे वे अपनी नीति के सम्बन्ध में इतने ढीले ढाले थे कि कोई भी दल किसी भी मामले में उन पर निर्भर नहीं कर सकता था । ये स्वतन्त्र सदस्य आवश्यकता से अधिक स्वतन्त्र होने के कारण किसी के भी उपयोग के नहीं थे ।

इस अवधि में हमें अनेक महिला संसद् सदस्यों के सम्पर्क में आने का अवसर मिला । ठीक ही कहा गया है कि ये महिला सदस्यायें संसद् की शोभा बढ़ाती हैं । कई बार महिला सदस्यों की मीठी और कोमल वाणी से वाद-विवाद में जीवन आ गया । वास्तव में यदि कोई महिला सदस्य न होती, तो संसद् एक शुष्क तथा नीरस सभा रहती ।

सामान्य रूप से हम यह कह सकते हैं कि इस संसद् ने इतिहास के सबसे अधिक संकटपूर्ण समय में बड़ी सफलता से काम किया है । गणतंत्रीय संविधान के आधार पर निर्वाचित, स्वतन्त्र भारत की प्रथम संसद् होने के नाते इस संसद् के उत्तरदायित्व, और उसके कृत्य वास्तव में बहुत महत्वपूर्ण और प्रभावशाली रहे हैं । उदाहरण के लिए उसे राष्ट्र के लिये दो बड़ी बड़ी पंचवर्षीय योजनायें चलानी पड़ीं, अनेक नये तथा विद्यमान उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करना पड़ा, नई अवस्थाओं के अनुकूल बनाने के लिए न जाने कितने महत्वपूर्ण कानूनों में, जैसे क्रिमिनल प्रोसीज्योर कोड, कम्पनी कानून तथा प्रेस ऐक्ट, रूपभेद तथा परिवर्तन करना पड़ा और राज्य क्षेत्रों का पुनर्वितरण करके हमारे समाज के सामुदायिक स्वरूप को बदलना पड़ा ।

अतः अनेक त्रुटियों, गलतियों और भूलों के होते हुये भी, इस संसद् द्वारा किये गये काम को हमारी आने वाली पीढ़ी "एक ऐतिहासिक काम" मानेगी ।

स्वतन्त्रता के पश्चात् संसदीय प्रक्रिया

महेश्वर नाथ कौल, सचिव, लोक-सभा

स्वतन्त्रता के पश्चात् संसदीय प्रक्रिया में वहुत अधिक प्रगति हुई है। केन्द्रीय विधान सभा वर्तमान संसद् का एक अविकसित प्रारम्भिक रूप थी। यद्यपि उस समय भी सभी संसदीय प्रक्रियायें मौजूद थीं पर उनमें कोई सार नहीं था। गांधी जी ने अपने जीवन चरित्र में केन्द्रीय विधान सभा का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया है :

> "मैंने अपने जीवन में केवल एक वार ही, और वह भी जव रौलट विल पर वाद विवाद हो रहा था, भारत की विधान सभा की कार्यवाही को देखा। शास्त्री जी ने एक आवेशपूर्ण भाषण दिया जिसमें उन्होंने सरकार को एक चेतावनी दी। वायसराय उनके भाषण को मन मुग्ध होकर सुन रहे थे, उनकी आंखें शास्त्री जी पर टिकी हुई थीं और शास्त्री के मुंह से आवेशपूर्ण भाषण की धारा प्रवाहित हो रही थी। शास्त्री जी का भाषण इतना तथ्यपूर्ण तथा अनुभूतिमय था कि उस समय मुझे ऐसा लगा कि वायसराय उनके भाषण से अत्यधिक प्रभावित हुए थे।
>
> आप उस व्यक्ति को जगा सकते हैं जो वास्तव में सोया हुआ हो, पर यदि वह व्यक्ति केवल सोने का वहाना किये हुये हो तो उसे जगाने के लिए किया गया कोई भी प्रयत्न सफल नहीं होगा। विल्कुल ऐसी ही स्थिति सरकार की थी। सरकार तो केवल वैधानिक उपचार का दिखावा पूरा करना चाहती थी। अपना निर्णय तो उसने पहले ही कर लिया था। अतः शास्त्री जी की चेतावनी का सरकार पर कोई प्रभाव नहीं हुआ।"

यह वात सभी लोग जानते हैं कि पुरानी केन्द्रीय विधान सभा कोई प्रभुत्व सम्पन्न संस्था नहीं थी; और उसके अधीनस्थ स्वरूप का सवसे अच्छा ज्ञान उस प्रक्रिया का अध्ययन करने से हो सकता है जो उसमें प्रचलित थी। पुरानी केन्द्रीय विधान सभा अपने कार्य के संचालन के लिए स्थायी आदेश (स्टैंडिंग आर्डर) वना सकती थी पर इन स्थायी आदेशों पर गवर्नर जनरल का अनुमोदन आवश्यक था।

भारत के राज्य सचिव के अनुमोदन पर गवर्नर-जनरल द्वारा वनाये गये नियमों द्वारा स्थायी आदेशों को रद्द किया जा सकता था। इस प्रकार विधान सभा के प्रभुत्व पर एक मूलभूत रुकावट थी। किसी विधान सभा के प्रभुत्व की पहली विशेषता यह है कि विधान सभा को अपनी प्रक्रिया के सम्वन्ध में पूर्ण अधिकार हो और उस पर किसी वाहरी प्राधिकार का कोई अधिकार न हो। दोहरे नियन्त्रण के इस स्वरूप में केन्द्रीय विधान सभा को कई प्रकार के अपमान सहने पड़ते थे। केन्द्रीय विधान सभा का अध्यक्ष गवर्नर-जनरल की पूर्व अनुमति पर ही वैदेशिक कार्य, प्रतिरक्षा और संचार सम्वन्धी प्रश्नों को स्वीकार कर सकता था। यदि किसी प्रश्न का उत्तर देना असुविधाजनक होता था तो गवर्नर-जनरल अनुमति नहीं देता था। गवर्नर जनरल अध्यक्ष या सभा के अधिकार को यह कह कर रद्द कर सकता था कि किसी संकल्प, प्रस्ताव या स्थगन प्रस्ताव पर चर्चा लोकहित के विरुद्ध है या "गवर्नर जनरल-इन-कौंसिल" का उससे कोई सम्वन्ध नहीं है, अतः इस पर वाद-विवाद नहीं किया जा सकता। जव कभी अध्यक्ष विधान सभा के पीठासीन पदाधिकारी के किसी जन्म सिद्ध अधिकार का दावा करता था, तो गवर्नर जनरल अध्यक्ष द्वारा इस प्रकार के अधिकार को छीनने के लिये तुरन्त नियम वना देता था। इस सम्वन्ध में एक ज्वलन्त उदाहरण लोक सुरक्षा विधेयक पर अध्यक्ष पटेल का निर्णय है जवकि उन्होंने उससे सम्वन्धित प्रस्ताव को सभा के सामने पेश करने से इंकार कर दिया था। क्योंकि वह समझते थे कि विधेयक की विषय-वस्तु न्यायाधीन है और वह विधेयक पर वाद-विवाद को ठीक प्रकार से संचालित नहीं कर पायेंगे। तुरन्त ही गवर्नर जनरल ने इसका उत्तर एक नियम के रूप में दिया कि यदि कोई प्रस्ताव एक वार प्रस्तुत किया जा चुका हो तो अध्यक्ष उस प्रस्ताव को मतदान के लिये पेश करने से इनकार नहीं कर सकता। प्रसन्नता की

बात है कि स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद तुरन्त ही इस नियम को तथा अध्यक्ष के अधिकारों पर लगाये गये अन्य प्रतिबन्धों को, जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, नियमों में से निकाल दिया गया।

समितियों की स्थिति

सभा की ही भांति सभा की समितियां भी सरकार के नियन्त्रण में थीं। लोक लेखा समिति का सभापति वित्त मंत्री हुआ करता था और उसके सचिवालयीय कर्तव्यों का पालन वित्त मन्त्रालय करता था। वित्त मंत्री समिति के सभापति की हैसियत से समिति में किसी ऐसे प्रश्न को पूछने या किसी ऐसी आलोचना को करने पर रोक लगा सकता था जिससे सरकार की कोई कमजोरी प्रकट होती हो। सभापति अपने पदाधिकारियों को निदेश दे सकता था कि वे अपने प्रतिवेदन में किसी अनावश्यक सुझाव का उल्लेख न करें चाहे उस पर समिति में चर्चा की अनुमति दी जा चुकी हो। संविधान के लागू होने पर जब ये प्रतिबन्ध हटा दिये गये और लोक लेखा समिति, जिस का सभापति एक गैर सरकारी सदस्य होने लगा और जिसका सचिवालय सभापति के द्वारा अध्यक्ष के प्रति उत्तरदायी हो गया, अध्यक्ष के नियन्त्रण में आ गई, तो समिति ने अपने प्रथम प्रतिवेदन में निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया :—

> "भारत के संविधान के लागू होने के परिणामस्वरूप समिति की संस्थिति में जो परिवर्तन हुये उनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण एक परिवर्तन यह हुआ है कि वह एक संसदीय समिति बन गयी है जिसका अपना सभापति अध्यक्ष के अधीन होगा और जिसकी सहायता संसद् सचिवालय के कर्मचारी करेंगे। इससे समिति अधिक स्वतन्त्र वातावरण में काम करने तथा बिना किसी प्रतिबन्ध के आलोचना करने के योग्य हो गयी है।"

स्वतंत्र वित्तीय समितियों की स्थापना

केन्द्रीय विधान सभा ने एक प्राक्कलन समिति स्थापित करने के लिये कई वर्षों तक आन्दोलन किया। हर साल इस विषय पर चर्चा होती थी पर सरकार उन आधारों को छोड़कर, जो उसने खुद पेश किये थे, अन्य किसी आधार पर उसकी संरचना के लिए राजी नहीं हुई। सभा चाहती थी कि समिति स्वतन्त्र हो पर सरकार चाहती थी कि समिति पर कार्यपालिका का नियन्त्रण रहे ताकि उसे निर्धारित सीमा के भीतर रखा जा सके। संसद् डा० जॉन मथाई (जो उस समय वित्त मन्त्री थे) की चतुरता तथा दूरदर्शिता के लिए उनकी आभारी रहेगी जिन्होंने संविधान के लागू होने के बाद, देश के मामलों में संसद् की प्रधानता को मान्यता दी और यह स्वीकार किया कि अध्यक्ष का महत्वपूर्ण स्थान एक धुरी के समान है जिसके सहारे संसदीय लोकतन्त्र अधिक से अधिक शक्तिशाली होता जायेगा। उन्होंने तुरन्त ही घोषणा कर दी कि वह लोक लेखा समिति की बैठकों का सभापतित्व नहीं करेंगे और इसे संगठित करने का काम अध्यक्ष पर छोड़ दिया कि वह जैसा ठीक समझें वैसा करें। वह इस बात के लिए भी राजी हो गये कि इस देश में अध्यक्ष के अधीन एक प्राक्कलन समिति की स्थापना की जाये। उन्होंने प्राक्कलन समिति के उद्घाटन में भाग लिया और निम्नलिखित विचार प्रकट किये :—

> "इस प्राक्कलन समिति को मैं एक अर्थ व्यवस्था समिति समझता हूं जो लगातार अपना काम करेगी। पर इस प्राक्कलन समिति और तदर्थ अर्थ व्यवस्था समिति में, जिसे हमने एक वर्ष से कुछ पहले नियुक्त किया था, कुछ और भी अन्तर है। बचत करने की दिशा में लगातार प्रयत्न करने के अलावा यह समिति सरकार के कहने पर नियुक्त की गयी थी। यह प्राक्कलन समिति संसद् द्वारा नियुक्त की गई है और अध्यक्ष के सामान्य निदेश के अधीन यह संसद् के प्रति उत्तरदायी होगी। अतः इस समिति पर जो उत्तरदायित्व है और इस समिति की उपयोगिता का जो क्षेत्र है वह बहुत महत्वपूर्ण है। मैं आपको यह बताना चाहता हूं कि इस समिति का उत्तरदायित्व कितना बड़ा है। जहां तक इस समिति के भविष्य तथा संसद् और सरकार को इससे होने वाले लाभ का सम्बन्ध है, यह इस बात पर बहुत कुछ निर्भर है कि समिति अपने कार्य के लिए कौनसा मार्ग अपनाती है और वर्तमान वर्ष में काम करके कौन कौन सी प्रथायें स्थापित करती है। इसी पर यह बात निर्भर होगी कि संसद् ने इस समिति को जो उत्तरदायित्व सौंपे हैं उनको पूरा करने में उसे कितनी सफलता मिलेगी।
>
> * * * *

सरकार का कर्त्तव्य है कि वह समिति की सिफारिशों को यथाशक्ति अधिक से अधिक महत्व दे। सरकार

के दृष्टिकोण से इस समिति का प्रतिवेदन एक मापदण्ड होगा जिससे संसद् सरकार द्वारा प्रस्तावित व्यय के औचित्य के बारे में निर्णय कर सकती है। अभी हमारे पास कोई वास्तविक मापदण्ड नहीं है।

आय व्ययक प्रस्तुत करते समय उन्होंने कहा था :

"प्राक्कलन समिति के काम की ओर मैं बहुत आशा से देखता हूं क्योंकि सरकारी व्यय के तरीके पर इससे दो प्रकार से, बहुत ही लाभप्रद प्रभाव पड़ने जा रहा है। पहले मैं समझता हूं कि प्राक्कलन समिति द्वारा दिये गये सुझावों और की गयी आलोचना व्यय का विनियमन करने के मामले में सरकार का पथ प्रदर्शन करने के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध होगी। दूसरे, मुझे विश्वास है कि जब लोगों को पता लग जायेगा कि सरकार और सरकार के विभिन्न विभागों के व्यय का विस्तृत परीक्षण सभा द्वारा बनाई गयी एक स्वतन्त्र संस्था द्वारा किया जायेगा तो इससे सरकारी धन के अपव्यय की रोकथाम अवश्य होगी।

* * * *

यदि माननीय सदस्य कार्य के नियमों को देखेंगे तो उन्हें पता लगेगा कि प्राक्कलन समिति को, चूंकि वह संसद् की एक समिति है, माननीय अध्यक्ष महोदय द्वारा समय समय पर दिये गये निदेशों के अधीन काम करना होगा। यह समिति संसद् के प्रति उत्तरदायी है। इसका प्रतिवेदन संसद् के सामने पेश किया जाता है जबकि स्थायी वित्त समिति सरकार द्वारा नियुक्त एक मंत्रणा समिति मात्र है। यदि आप दोनों समितियों की प्रतिष्ठा की तुलना करें तो मैं कहूंगा कि प्राक्कलन समिति की ही प्रतिष्ठा अधिक है।"

यह बात सिद्ध हो चुकी है कि वित्तीय समितियों ने बहुत ही लाभदायक काम किया है जिसकी प्रशंसा केवल संसद् और देश के समाचार पत्रों ने ही नहीं की है बल्कि विदेशी आलोचकों तथा विशेषज्ञों ने भी की है। स्वतन्त्र वातावरण में समितियों ने अपने सामने आने वाले मामलों के सम्बन्ध में एक गम्भीर और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाया है और उन्होंने अपने निजी तरीके से भारत में संसदीय लोकतन्त्र के विकास में महत्वपूर्ण योग दिया है। इन समितियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में कुछ भी न जानने वाले साधारण व्यक्ति भी, यदि वे अपने कार्य में रुचि लें और परिश्रम करें, तथ्यों का अध्ययन करें तथा समस्याओं का हल ढूंढने में साधारण समझ से काम लें तो सरकार के काम का मूल्यांकन कर सकते हैं जो कि आज तक बड़ा जटिल कार्य हो गया है।

* * * *

१९४७ के पूर्व ऐसे उपाय बहुत कम थे जिनकी सहायता से सदस्य अविलम्बनीय लोक महत्व के विषयों को चर्चा के लिए पेश कर सकते थे। अतः उन्हें तत्सम्बन्धी एकमात्र नियम अर्थात् स्थगन प्रस्ताव का ही सहारा लेना पड़ता था ? उन दिनों स्थगन प्रस्तावों को अविश्वास का प्रस्ताव नहीं समझा जाता था क्योंकि सरकार सभा के प्रति उत्तरदायी नहीं थी। अतः केन्द्रीय विधान सभा में सभी प्रकार के मामलों को चर्चा के लिए स्थगन प्रस्ताव के रूप में पेश किया जाने लगा था। विधान सभा के अध्यक्ष को नियमों की व्याख्या संसदीय प्रथाओं तथा परिपाटियों के आधार पर नहीं करनी पड़ती थी बल्कि विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार करनी पड़ती थी। ऐसा अक्सर होता था कि कोई सदस्य या दल किसी ऐसे विषय पर चर्चा करना चाहता था जो प्रत्यक्षतः आवश्यक और अविलम्बनीय हो और सभा में उसके सम्बन्ध में लोग अपनी शिकायतों का उल्लेख करना चाहते हों परन्तु प्रक्रिया सम्बन्धी कठिनाई यह थी कि स्थगन प्रस्ताव के अलावा अन्य किसी प्रकार भी ऐसे विषयों पर चर्चा की अनुमति नहीं दी जा सकती थी। अतः अध्यक्ष हमेशा स्थगन प्रस्ताव द्वारा चर्चा की अनुमति दे देता था। यह प्रथा इतनी पक्की हो गई कि जब संसद् प्रभुत्व सम्पन्न हो गयी और सरकार संसद् के प्रति उत्तरदायी हो गई, तो भी सदस्यों को यह महसूस नहीं हुआ कि परिवर्तन हो गया है और अब स्थगन प्रस्ताव द्वारा मामलों को चर्चा के लिए पेश करना उचित नहीं है। इसमें नियमों का भी कुछ दोष था। उस समय नियमों में परिवर्तन कर के ऐसा कोई उपबन्ध नहीं किया गया था जिससे कि ऐसे मामलों पर चर्चा करने के लिए अन्य सामान्य संसदीय अवसर मिल सके। अतः पीठासीन पदाधिकारी और सदस्यों के बीच एक खिचाव पैदा हो गया—जो सदस्य किसी मामले पर चर्चा कराना चाहते थे वे स्थगन प्रस्ताव पेश करते थे और अध्यक्ष इस प्रक्रिया का विरोध करता था क्योंकि उसका विचार था कि यह तरीका संसदीय प्रक्रिया के लिए हितकर नहीं है। अतः अध्यक्ष मावलंकर ने इस बात की व्यवस्था ठीक समय पर ही कर दी कि नयी व्यवस्था में स्थगन प्रस्तावों का क्या महत्व होगा।

मीर लायक अली के मामले में उनका कथन यह था :—

इस बात की सबसे बड़ी परीक्षा यह है कि क्या प्रस्तावित प्रश्न अचानक पैदा हो गया है और उसके कारण एक ऐसी अविलम्बनीय अवस्था पैदा हो गई है कि सभा के लिये अन्य कार्य छोड़कर आवश्यक विषय की नियत समय पर चर्चा करना बहुत जरूरी हो गई हो। अविलम्बनीयता ऐसी होनी चाहिए कि उस मामले में वास्तव में कोई विलम्ब करने की गुंजाइश न हो और उस पर उसी दिन चर्चा की जाये जिस दिन उसकी सूचना दी गयी हो।

* * * *

साथ ही साथ उन्होंने ऐसी व्यवस्था भी की जिसके द्वारा सदस्य ऐसे मामले को अन्य तरीकों से भी चर्चा के लिये पेश कर सकें।

आधे घण्टे की चर्चा

इस सम्बन्ध में सबसे पहले आधे घंटे की चर्चा को चालू करने की व्यवस्था की गई। इसका क्षेत्र सीमित है; इसके अनुसार ऐसे विषयों पर चर्चा की जा सकती है जिसके सम्बन्ध में किसी प्रश्न के दिये गये उत्तर से सदस्य संतुष्ट न हो। इससे सदस्य को यह अवसर मिलता है कि वह अपनी शिकायतों को पेश कर सके यदि वह किसी उत्तर से सन्तुष्ट न हो या उत्तर अपर्याप्त हो अथवा वह उस मामले से सम्बन्धित किसी और मामले को सभा के सामने रखना चाहता हो।

अल्प-कालीन चर्चा

इसके बाद अल्प-कालीन चर्चा संबंधी नियम बना। नियमों में व्यवस्था की गयी है कि अविलम्बनीय लोक महत्व के विषय पर थोड़े समय के लिये, जो ढाई घण्टे से अधिक न हो, चर्चा की जा सकती है बशर्ते कि अध्यक्ष उसकी सूचना को अविलम्बनीयता तथा लोक महत्व के आधार पर स्वीकार कर ले और सरकार को उसके लिये समय मिल सके। यद्यपि इसका भी वही मतलब है जो स्थगन प्रस्ताव का होता है पर यह उससे कुछ भिन्न है। इस चर्चा में सभा के निर्णय के लिये कोई प्रस्ताव नहीं पेश किया जाता और सभा उस पर कोई निर्णय नहीं देती। चर्चा की मांग करने वाला प्रस्ताव केवल चर्चा के लिए पेश कर दिया जाता है और सदस्य सभा के सामने अपने विचार पेश करते हैं और बाद में सरकार उनका उत्तर देती है। इस प्रकार लोगों के दृष्टिकोण के पेश होने पर स्थिति स्पष्ट हो जाती है और उस सम्बन्ध में किसी निश्चित निर्णय को अभिलिखित नहीं किया जाता। अतः सरकार की निन्दा का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। इस प्रक्रिया के और सुदृढ़ बनाने के लिये एक उपबन्ध और भी है कि, ज्यों ही अध्यक्ष इसकी सूचना स्वीकार कर लेता है उसे, सरकार द्वारा इसके लिये समय निकालने से पूर्व 'संसदीय समाचार' में प्रकाशित कर दिया जाता है ताकि यहां पता लग सके कि इसे कितने सदस्यों का समर्थन प्राप्त है। ऐसी सूचनाओं को "अनियत दिन वाले प्रस्ताव" शीर्षक के अधीन परिचालित किया जाता है। जो सदस्य इन सूचनाओं का समर्थन करना चाहते हैं वे अपने नाम उनमें जोड़ देते हैं और ऐसे नामों को सदस्यों की जानकारी के लिए समय समय पर संसदीय समाचार में प्रकाशित किया जाता है। जब किसी विशेष प्रस्ताव को काफी सदस्यों का समर्थन प्राप्त हो जाता है तो सरकार को उसकी चर्चा के लिये समय निकालना ही पड़ता है।

ध्यान दिलाने के लिए सूचना

ऐसा देखा गया कि ये उपाय भी काफी नहीं थे और सदस्य यह महसूस करते थे कि ऊपर बताये गये उपाय से अत्यधिक अविलम्बनीयता के कुछ मामलों को ठीक समय पर सभा के सामने नहीं किया जा सकता है। इसलिये वे स्थगन प्रस्ताव के उपाय का ही सहारा लेते रहे हैं। नियम समिति में इस विषय पर विस्तृत रूप में विचार किया गया और तब ध्यान दिलाने की सूचना का उपाय ढूंढ निकाला गया। इससे, यदि अध्यक्ष सूचना को स्वीकार करते, तो सदस्य तुरन्त ही चर्चा कर सकता है। सरकार को तुरन्त ही उत्तर देना पड़ता है पर वह वक्तव्य देने के लिए कुछ समय भी मांग सकती है।

इन उपायों से संसदीय कार्य के सुचारू-संचालन में काफी हद तक सहायता मिली है। अब सदस्य यह समझ गये कि उन्हें किसी भी अविलम्बनीय मामले का उत्तर तुरन्त मिल सकता है और उन्हें स्थगन प्रस्ताव संबंधी प्रक्रिया का प्रयोग तभी करना चाहिए जब कि कोई बहुत बड़ी गलती हो गई हो जिसके लिए अप्रत्यक्ष रूप से सरकार की निन्दा करने की आवश्यकता हो।

ब्रिटेन तथा भारतीय प्रक्रिया में अंतर

साधारणतया लोग ऐसा समझते हैं कि हमारी संसदीय प्रक्रिया ब्रिटेन की संसदीय प्रक्रिया की नकल है। किन्तु भली प्रकार से परीक्षा करने पर पता लगेगा कि अनेक मामलों में हमारी प्रक्रिया हाउस आफ कामन्स की प्रक्रिया से भिन्न है। व्योरे में भी अनेक भिन्नतायें हैं जो महत्वपूर्ण हैं। हमने स्वयं प्रयोग करके नये विचारों को अपनाया है। हाउस आफ कामन्स में प्रचलित प्रक्रिया का अनुकरण करने के प्रश्न पर अध्यक्ष मावलंकर ने इन शब्दों में अपने विचार प्रकट किये हैं :—

> "यद्यपि मैं हाउस आफ कामन्स के पूर्व-दृष्टान्तों का सम्मान करता हूं फिर भी मैं समझता हूं कि हमें अपने हृदय में यह महसूस नहीं करना चाहिये कि हम किसी बात को सही या उचित मानने को बाध्य हैं क्यों कि हाउस आफ कामन्स में उस बात को उसी रूप में स्वीकार किया गया है। कुछ मामलों में वहां के पूर्व दृष्टान्तों की एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है और इसीलिये वहां पर कुछ विचित्र परि-पाटियां भी हैं। जहां तक हमारे संविधान और हमारे विधानमंडलों का सम्बन्ध है हमारे देश में ऐसी कोई पृष्ठभूमि नहीं है। अतः हमें अपने पूर्वदृष्टान्त और परम्परायें स्वयं बनानी पड़ेंगी। पर हां, हमें ब्रिटेन के पूर्वदृष्टान्तों का सम्मान करना चाहिये और उससे शक्ति प्राप्त करनी चाहिये। मानवीय अनुभवों के दृष्टान्तों के रूप में उनका विशेष मूल्य है पर हमारी स्थिति में पैदा होने वाले विचित्र मामलों में पद प्रदर्शन के लिये उनका कोई महत्व नहीं है।"

इस छोटे से लेख में ब्रिटेन तथा भारतीय प्रक्रिया के अन्तर का सविस्तार वर्णन करना संभव नहीं है पर इस बात को स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं।

हाउस आफ कामन्स में अध्यक्ष प्रतिदिन सभा में एक जुलूस के साथ आता है ; सभापतित्व करते समय वह विग और गाउन पहनता है ; दैनिक कार्यवाही आरंभ होने के पूर्व सभा का अध्यक्ष और पादरी सभा में प्रार्थना करवाते हैं, सभा के अधिकार का प्रतिनिधित्व एक गदा (मेस) करता है ; बहुत अधिक महत्व के मामलों जैसे बहुप्रयोजनीय प्रस्तावों पर चर्चा "कि अध्यक्ष अपना पद छोड़ दें" या "सभा स्थगित कर दी जाये" की जाती है, सरकार द्वारा दिये गये आदेश सम्राट को संबोधित दया-याचिकाओं द्वारा प्रभाव शून्य किये जा सकते हैं, एक दिन का काम उसी दिन पूरा किया जाना चाहिये चाहे सभा की बैठक कितनी ही देर तक क्यों न हो, ऐसी बैठकें रात में देर तक और कभी कभी रात भर चलती हैं ; विधेयकों को सभा की स्थायी समितियों को सौंपा जाता है जिसमें पत्र-कारों को भी प्रवेश मिलता है। आयव्ययक को खण्डों में पेश किया जाता है—व्यय के प्राक्कलनों को पहले पेश किया जाता है और करारोपण की प्रस्थापनाओं को कुछ सप्ताह बाद ; विधेयकों पर तथा आय व्ययक पर सम्पूर्ण सभा की समितियों द्वारा विचार किया जाता है।

इसके विपरीत भारत में अध्यक्ष का कोई जुलूस नहीं निकाला जाता ; उसका कोई गदा नहीं होता और न ही वह विग और गाउन पहनता है। सभा में कोई प्रार्थना नहीं होती और न सम्पूर्ण सभा की कोई समिति ही है। किसी दिन के कार्य को निबटाने के लिए कोई कठोर नियम नहीं हैं। हमारी बैठकें निश्चित समय पर आरम्भ और समाप्त होती हैं, और असमाप्त कार्य आगे के लिए रख दिया जाता है। विधेयकों को प्रवर समितियों को सौंपा जाता है। जिनकी बैठकें गुप्त होती हैं। विभिन्न मामलों पर चर्चा उचित प्रकार से तैयार किये गये प्रस्तावों के द्वारा होती है। जब कोई विषय केवल चर्चा के लिए होता है, तो उस पर कोई निर्णय नहीं किया जाता और उस विषय को केवल कार्यसूची में सम्मिलित कर लिया जाता है। सरकार के आदेशों को कुछ विशेष प्रस्तावों द्वारा संशोधित या रद्द किया जा सकता है। आय व्ययक अर्थात् व्यय के प्राक्कलनों तथा करारोपण की प्रस्थापनाओं दोनों को—एक साथ ही सभा के सामने पेश किया जाता है।

भारतीय प्रक्रिया इस बात का दावा कर सकती है कि कम से कम दो दिशाओं में उसने नया काम किया है—(क) निश्चित समय-सारणी के अनुसार कार्य संचालन और (ख) सभा द्वारा दिये गये निदेशों के पालन करने पर निगरानी रखना तथा इस बात का सुनिश्चय करना कि सभा भवन में दिये गये विभिन्न आश्वासनों, वचनों और प्रतिज्ञाओं को वास्तव में पूरा किया गया है या नहीं।

1057 L.S.—6.

कार्य मंत्रणा समिति

पहला काम तो सभा की एक कार्य मंत्रणा समिति बनाने से संभव हो गया। इस समिति में सभा के सभी दलों के प्रतिनिधि होते हैं। इसके निर्णय प्रायः सर्व-सम्मति से होते हैं। इसकी बैठक की चर्चा में तर्कसम्मतता तथा मध्यममार्ग का पालन किया जाता है। इसका काम है कि सरकार समय-समय पर जो विधेयक या अन्य विषय सभा के सामने पेश करे उसके लिए समय नियत करे। इसकी सफलता इसी बात में है कि इसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहे। जब किसी विधान के संबंध में समय नियत करने के बारे में समिति के सभी सदस्य एकमत नहीं होते तो समिति प्रायः उसे कम-से-कम समय को मान लेती है जो सभी सदस्यों को स्वीकार हो और अध्यक्ष को यह अधिकार दे देती है यदि सभा में चर्चा का रुख देख कर वह महसूस करता है कि उस विशेष कार्य के लिये अधिक समय की व्यवस्था की जानी चाहिये तो वह समय बढ़ा दे। नियमों में भी यह उपबन्ध है कि ऐसी अवस्था में भी, जहां समिति की सिफारिशों पर सभा ने समय को ठीक ठीक नियत कर लिया हो, अध्यक्ष, सदन नेता तथा समिति से परामर्श करने के पश्चात् सभा से अपने पहले निश्चय का संशोधन करने की मांग कर सकेगा यदि वह समझता है कि उस विशेष विषय की चर्चा के लिए अधिक समय आवश्यक है। इससे सभा के कार्य में काफी जीवन आ गया है और सभी लोगों को उस परेशानी तथा अशान्ति से छुटकारा मिल गया है जो कार्यमंत्रणा समिति के बनने से पहले सभा में दिखाई पड़ती थी। सभी की कार्यवाही के बारे में कुछ भी निश्चित नहीं होता था। ऐसे प्रत्येक मामले में अध्यक्ष को निश्चित करना पड़ता था कि किसी विशेष वाद विवाद को कब समाप्त होना चाहिये यदि वह वाद विवाद सभी सदस्यों द्वारा भाग लिये जाने के बाद स्वयं समाप्त न हो जाये। अब कोई भी व्यक्ति पहले से जान सकता है कि अमुक काम कब समाप्त होगा। वर्तमान प्रक्रिया के अधीन सभा ही यह निश्चित करती है कि किसी वाद विवाद के लिये कितना समय दिया जाये। इस प्रकार अध्यक्ष दोषारोपण से बच जाता है। इन सब बातों के अलावा, इससे सरकार को आगे के कार्य को निबटाने की योजना बनाने में बड़ी सहायता मिलती है। अब काफी पहले से यह पता लग जाता है कि एक सत्र में जो समय उपलब्ध है उसमें कौन, कौन से विधान पारित होंगे और किस प्रकार उन की प्राथमिकता निर्धारित की जायेगी इससे दोनों सभाओं के बीच कार्यों का उचित प्रबन्ध भी हो जाता है। राजनैतिक दलों को भी पता लग जाता है कि उनको कौन सा समय मिल पायेगा और वह पहले से योजना बना सकते हैं कि कितने सदस्यों को बोलने के लिये तैयार किया जाये और वे किस क्रम से बोलें। सदस्य भी पहले से अपना कार्यक्रम बना सकते हैं। महत्वपूर्ण तथा साधारण कार्यों के लिये भी समय का बटवारा करना संभव हो गया है।

आश्वासनों सम्बन्धी समिति

दूसरे काम के लिए अर्थात् इस बात की जांच करने के लिए कि सभा में दिये गये आश्वासनों, वचनों और प्रतिज्ञाओं को कार्यान्वित किया गया है या नहीं, सभा ने प्रक्रिया नियमों के अधीन आश्वासनों संबंधी एक समिति बनाई है। यह एक संसदीय समिति है और अध्यक्ष के नियन्त्रण में काम करती है। इस समिति का काम यह देखना है कि क्या आये दिन सभा में दिये गये आश्वासनों, वचनों और प्रतिज्ञाओं का ठीक ढंग से पालन किया गया है और यदि हां तो क्या उन्हें समुचित समय के भीतर और उसी ढंग से जैसे कि सभा चाहती थी, कार्यान्वित किया गया है। या नहीं? समिति को इन विषयों के बारे में समय समय पर सभा में प्रतिवेदन पेश करना पड़ता है। इस समिति के बनने से सभा की कार्यवाही में वास्तविकता पैदा हो गयी है। पहले, प्रत्येक सदस्य को स्वयं ध्यान रखना पड़ता था कि वचनों को कार्यान्वित किया गया है या नहीं। कुछ सदस्य प्रश्नों के सहारे पूछते थे कि क्या कार्यवाही की गई है। स्पष्ट है कि किसी एक सदस्य से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह उन सभी बातों का ध्यान रखे, जो कही गयी हों या जिनके लिए वचन दिये गये हों और स्वभावतः वह उसी बात तक सीमित रहता था, जिसमें उसे खुद दिलचस्पी होती थी। सरकार का यह कर्तव्य नहीं था कि वह इस संबंध में किसी के पास प्रतिवेदन पेश करे, बल्कि सरकार की ईमानदारी पर यह बात छोड़ दी गयी थी कि वह अपने वचनों का, जो उसने सभा में दिये हैं, पालन करें। ऐसी स्थिति में, कुछ महत्वपूर्ण मामलों में विलम्ब हो जाता था, कुछ के बारे में ध्यान नहीं रहता था और कुछ ऐसे मामलों में, जहां मंत्री सभा

औचित्य प्रश्नों का उठाया जाना

हमारे प्रक्रिया नियमों में एक और मामले का उल्लेख है जिस पर हमारे देश में काफी मंत्रणा की गयी है—यह मामला है औचित्य प्रश्न का। केवल हमारे ही देश के नियमों में औचित्य प्रश्न की परिभाषा की गई है और उन विशेष परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है जिनमें औचित्य प्रश्न उठाया जा सकता है। अध्यक्ष के सामने ऐसे बहुत से औचित्य प्रश्न उठाये जाते थे जिन्हें सुस्थापित संसदीय प्रक्रिया के अनुसार औचित्य प्रश्न नहीं कहा जा सकता था। और जब कोई भी औचित्य प्रश्न उठाया जाता था, तो सदस्यों तथा अध्यक्ष के बीच एक विवाद सा पैदा हो जाता था ; ऐसा इसलिए नहीं होता था कि अध्यक्ष औचित्य प्रश्न की अनुमति नहीं देना चाहता था या सदस्य अध्यक्ष के निर्णय को मानने के लिये तैयार नहीं होते थे। किसी भी समय पर किसी भी विषय पर उठाये गये औचित्य प्रश्न पर कठिनाई पैदा हो जाती थी। वर्तमान अध्यक्ष, श्री अय्यंगार ने इस मामले पर विचार किया और ऐसा महसूस किया कि इस मामले को एक सन्तोषजनक आधार पर समाप्त करने के लिए कुछ कदम उठाये जाने चाहिये कुछ वर्ष पूर्व अध्यक्ष मावलंकर की अनुपस्थिति में जब वह अध्यक्ष की हैसियत से काम कर रहे थे तो उन्होंने सभा के मुख्य मुख्य सदस्यों की एक बैठक बुलाई और उसमें औचित्य प्रश्न के विविध पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की। अन्त में एक विस्तृत नियम बनाया गया जिसकी मुख्य-मुख्य बातें नीचे दी जाती हैं :

(१) एक औचित्य प्रश्न नियमों या संविधान के ऐसे अनुच्छेदों की व्याख्या या उनके लागू करने के संबंध में होगा जो सभा के कार्य का विनियमन करते हों और उनके द्वारा ऐसा कोई प्रश्न उठाया जायेगा जो अध्यक्ष द्वारा हस्तक्षेप्य हो।

(२) औचित्य प्रश्न सभा के समक्ष उस समय उपस्थित कार्य के संबंध में ही उठाया जा सकता है, पर अध्यक्ष किसी भी सदस्य को एक विषय के समाप्त होने और दूसरे विषय के आरंभ होने के बीच के समय में भी औचित्य प्रश्न उठाने की अनुमति दे सकता है यदि वह प्रश्न सभा के समक्ष उपस्थित कार्य के क्रम के बारे में हो या सभा में शान्ति बनाये रखने के बारे में हो।

(३) कोई भी सदस्य औचित्य प्रश्न उठा सकता है; पर इस बात का निर्णय अध्यक्ष करेगा कि उठाया गया प्रश्न औचित्य प्रश्न है या नहीं और वह इस संबंध में अपना निर्णय देगा जो कि अन्तिम होगा।

(४) औचित्य प्रश्न पर वाद-विवाद की अनुमति नहीं दी जायेगी, पर यदि अध्यक्ष उचित समझता है तो अपना निर्णय देने के पूर्व सदस्यों की बातें सुन सकता है।

(५) किसी भी सदस्य को किसी कल्पना के आधार पर या जानकारी प्राप्त करने के लिए या अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण करने के लिए या उस समय जब कोई प्रस्ताव सभा के समक्ष मतदान के लिये रखा जा रहा हो, कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाना चाहिए।

यह नियम इतना स्पष्ट है कि जब से यह नियम बना है तब से उसका प्रयोग करने में कोई कठिनाई नहीं पड़ी है।

आधुनिक युग में संसदीय लोकतंत्र

वैज्ञानिक, आर्थिक तथा वित्तीय क्षेत्रों की ही भांति संसदीय क्षेत्र में भी आधारभूत महत्व के अन्वेषण किये गये हैं। बैठक, गणपूर्ति, पीठासीन पदाधिकारी, कार्यावलि, प्रस्ताव पेश करना, प्रश्न मतदान के लिए रखना, समापन, वाद विवाद के नियम, संसद की मानहानि आदि की परिभाषायें कुछ ऐसी महत्वपूर्ण खोज की बातें हैं जिन पर भली प्रकार विकसित संसदीय लोकतंत्र की सुदृढ़ नींव आधारित है।

इन्हीं आधारों पर संसदीय प्रणाली की नींव सुदृढ़ की जा सकती है। इनका एक ऐसा भव्य स्वरूप निर्मित किया जा सकता है जिससे हमें प्रेरणा मिल सकती है और जो हमें सच्चा मार्ग दर्शन करा सकता है। सुव्यवस्थित प्रणालियां, प्रथायें और प्रक्रियायें उसकी पवित्रता तथा उसकी गरिमा को बढ़ाती है। प्रधान मंत्री ने कहा है कि ऐसी संस्थायें, जहाँ लोग इकट्ठे होकर अपनी समस्याओं पर शान्तिपूर्वक विचार करते हैं और उनका कोई हल निकालते हैं, आधुनिक मन्दिरों के समान हैं।

गवेषणा करने वालों का कहना है कि ये मूल धारणायें प्राचीन भारतीय गणतंत्रों में भी थीं। हमारी आधुनिक संसदीय प्रक्रिया का विकास उस प्राचीन काल की प्रक्रिया के आधार पर ही हुआ है जिसका हमारे देश को बहुत गर्व है। हमारी संसदीय प्रणाली की युगों पुरानी यही शक्ति है, जो सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी हमें मिलती रही है और जिसके कारण संसदीय लोकतंत्र में हम इतना पक्का विश्वास रखते हैं कि इतनी सरलता से हमने उसे अपना लिया और जिसे हम इतना अधिक चाहते हैं कि अन्य देशों के लोगों को इस बात पर आश्चर्य है कि हमने निर्वाचन के इतने विस्तृत कार्यक्रम को, इतने शान्तिपूर्ण ढंग से और अभी हाल में मिली हमारी स्वतंत्रता के आरंभ में ही, कैसे सम्पन्न कर लिया। यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है जब हम अपने पड़ोसी तथा अन्य अनुभवी देशों को देखते हैं जिन्हें इतनी शीघ्रता से अपने को संसदीय लोकतंत्र के अनुकूल बनाने में कठिनाई हो रही है।

देश के सामने आज सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि "क्या संसदीय लोकतंत्र आणविक युग की आवश्यकताओं को पूरा कर पायेगा" दार्शनिक और अन्य विद्वान लोग इस बात का पता लगाने की कोशिश कर रहे हैं कि आने वाले युग में संसदीय लोकतंत्र किस प्रकार चलेगा। 'इंडियन स्कूल ऑफ इन्टरनेशनल स्टडीज' के तत्वावधान में सप्रू हाउस में भाषण करते हुये प्रो० टोइनबी ने इस विषय पर कई गूढ़ विचार व्यक्त किये थे। उनका विचार था कि यदि इस आणविक युग में संसदीय लोकतंत्र को जीवित रहना है तो उसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन करने होंगे। हमारे प्रधान मंत्री ने संसदीय पत्रिका के प्राक्कलन में यही प्रश्न उठाया है और उसका उत्तर भी दिया है। उन्होंने कहा है:

> "टेकनालाजी के विकास से बड़ी बड़ी समस्यायें उत्पन्न हो गई है जिन में एक यह भी है कि अति–सुदक्ष तथा केन्द्रीकृत प्रशासनिक या अन्य व्यवस्था में, जो कि आज कल अपरिहार्य हो गयी है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त करने की समस्या को कैसे हल किया जाय। इस अति–सुदक्ष व्यवस्था के बिना हमारे राष्ट्र का काम सुचारु रूप से नहीं चल सकता और हम सम्पन्न नहीं हो सकते। व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बिना हम जीवन की सबसे अधिक बहुमूल्य चीज से वंचित रहते हैं।
>
> टेकनालाजी के विकास में और भी बहुत बड़ी–बड़ी समस्यायें हैं। यदि इसका अन्तिम विश्लेषण किया जाये तो हम देखेंगे कि इस विकास का नतीजा उद्‌जन बम है और आज संसार के सामने दो रास्ते हैं एक—सहयोग के आधार पर अपूर्व उन्नति और दूसरा—संघर्ष और महा विनाश।
>
> "तो संसदीय प्रणाली इन समस्याओं को कैसे हल करेगी? मैं समझता हूँ कि यह प्रणाली इनका सामना सफलतापूर्वक करेगी और अन्त में उसकी विजय भी होगी।"

यदि संसदीय प्रणाली को इस नवीन युग में विजयी होना है तो, स्पष्ट है कि, हमें इस संबंध में काफी विचार करना पड़ेगा। इस नवीन युग की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह होगी कि हमें मामलों पर चर्चा तथा उनका निबटारा बहुत तेजी से तथा सन्तोषजनक ढंग से करना पड़ेगा इस काम को सरल बनाने के लिए वर्तमान प्रक्रिया के कुछ पहलुओं में आमूल परिवर्तन करने होंगे। इस बात की कोई गुंजाइश नहीं होगी कि बहुत सारा संसदीय कार्य बकाया पड़ा रहे और इस बात के लिए भी समय नहीं होगा कि सम्पूर्ण सभा पूरे ब्योरे की छानबीन करे। इस बात पर विशेष जोर दिया जायेगा कि किसी विषय का विशेषज्ञान प्राप्त किया जाये, सूक्ष्मतम ब्योरे तक तथ्यों का अध्ययन किया जाये और उचित पद के लिए उचित व्यक्ति का चुनाव हो। विधि निर्माण की जो वर्तमान प्रणाली है, उसमें भी आमूल परिवर्तन करना होगा।

कभी-कभी ऐसा कहा जाता है कि समझा-बुझा कर आपसी परामर्श से जो काम होता है उसकी रफ्तार बहुत धीमी होती है जब कि तानाशाही ढंग से जो काम होता है उसकी रफ्तार बहुत तेज होती है। संसदीय प्रणाली के संचालन का मुझे जो अनुभव है उसके बल पर मैं कह सकता हूँ कि यह विश्वास गलत है। आपसी बातचीत से समझा-बुझा कर किये जाने वाले काम में तुलनात्मक दृष्टि से, समय तो अवश्य अधिक लगता है पर निश्चित रूप से उसका जो लाभ मिलता है उसका वास्तविक मूल्य बहुत होता है। आखिर, हमें समय का माप केवल इस बात से नहीं करना चाहिए कि किसी नीति को कार्यान्वित करने में कितना समय लगा बल्कि हमें यह देखना चाहिए कि उस समय में उसके अनुसार किये गये काम का क्या और कितना प्रभाव पड़ा। यदि उस काम का परिणाम अनुकूल, सन्तोष जनक तथा प्रगतिशील है, जनता के लिए प्रसन्नता तथा कल्याणप्रद है, यदि वह नैतिक स्तर को उठाता है, राष्ट्र की उन्नति को संबल देता है, उसके चरित्र को बलवान बनाता है, ललित कलाओं, साहित्य, दर्शन तथा विज्ञान के रूप में मानव स्वभाव के गुणों का विकास करता है, तो हमें समझना चाहिए कि हमें एक अधिक स्थायी प्रकार की सफलता मिली है।

भारतीय संसद में द्वितीय सदन का योगदान

सुधीन्द्र नाथ मुखर्जी, सचिव, राज्य-सभा

भारत की संसद राष्ट्रपति तथा दोनों सदनों—राज्य सभा और लोक सभा—से मिल कर वनी है।

राज्य-सभा की रचना :

राज्य-सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या २५० है जिसमें से १२ का नामनिर्देशन राष्ट्रपति द्वारा साहित्य, विज्ञान, कला और सामाजिक सेवा का विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से होता है तथा शेष राज्यों एवं संघीय क्षेत्रों के प्रतिनिधि होते हैं। राज्य सभा की वर्तमान संख्या २३२ है जिसमें से २२० राज्यों के और संघीय क्षेत्रों के प्रतिनिधि हैं, तथा १२ राष्ट्रपति द्वारा नामनिर्देशित हैं।

प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि उस राज्य की विधान-सभा के निर्वाचित सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होते हैं। संघीय क्षेत्रों के प्रतिनिधि भी अनुपात के अनुसार निर्वाचक गणों द्वारा, जिनके सदस्य कि प्रत्यक्ष निर्वाचन से चुने जायेंगे, एकल संक्रमणीय मत द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होते हैं।

वर्त्तमान २२० सदस्यों की संख्या विभिन्न राज्यों तथा संघीय क्षेत्रों में निम्न प्रकार विभाजित है :

आन्ध्र प्रदेश १८; आसाम ७, विहार २२; वम्वई २७; केरल ९; मध्य प्रदेश १६; मद्रास १७; मैसूर १२; उड़ीसा १०; पंजाव ११; राजस्थान १०; उत्तर प्रदेश ३४; पश्चिमी वंगाल १६; जम्मू और काश्मीर ४; दिल्ली ३; हिमाचल प्रदेश २; मनीपुर १; और त्रिपुरा १।

लोक सभा की रचना :

लोक सभा में—

(क) राज्यों के निर्वाचन-क्षेत्रों से प्रत्यक्ष रीति से निर्वाचित ५०० से अनधिक सदस्य; और

(ख) संघीय क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करन वाल २० से अनधिक सदस्य जो संसद द्वारा निर्धारित विधि से चुने जायेंगे, होंगे।

इनके अतिरिक्त, यदि आंग्ल-भारतीय वर्ग को लोक सभा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व न मिला हो तो राष्ट्रपति उक्त वर्ग के दो सदस्य तक नामनिर्देशन कर सकता है।

दोनों सदनों की कालावधि

राज्य-सभा का विघटन नहीं होता किन्तु उसके सदस्यों में से यथाशक्य निकटतम एक-तिहाई प्रत्येक द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर निवृत्त होते रहते हैं। राज्य-सभा के सदस्य की अवधि, उस सदस्य को छोड़ कर जो कि आकस्मिक रिक्त हुए स्थान के लिए चुना जाए, छः वर्ष है। राज्य सभा की प्रथम रचना पर, उस समय चुने गये कुछ सदस्यों की कालावधि राष्ट्रपति द्वारा वनाए गये 'राज्य परिषद् (सदस्यों की कालावधि) आदेश, १९५२' के उपवन्धों के अनुसार कम कर दी गयी जिससे प्रत्येक वर्ग के लगभग एक-तिहाई सदस्य प्रति द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर निवृत्त हो जाएँ। तदनुसार, राज्य-सभा के एक-तिहाई सदस्य अप्रैल, १९५४ में निवृत्त हो गये तथा अन्य एक-तिहाई अप्रैल १९५६ में, और दोनों अवसरों पर एक-तिहाई रिक्त हुये स्थानों को भरने के लिए निर्वाचन हुये तथा नामनिर्देशन किए गये।

लोक-सभा की अवधि सामान्यतः उसकी नियुक्ति के दिन से पांच वर्ष की होती है, जव तक कि उसे इससे पूर्व ही विघटित न कर दिया जाए। वर्त्तमान लोक सभा की प्रथम वैठक १३ मई, १९५२ को हुयी थी। तदनुसार इसकी अवधि १२ मई, १९५७ को समाप्त हो जाएगी, जव तक कि इसे उससे पहले ही विघटित न कर दिया जाए। नई लोक सभा के लिए सामान्य निर्वाचन किया जा चुका है तथा नवीन लोक-सभा शीघ्र ही निर्मित हो जाएगी।

राज्य सभा के सत्र

राज्य सभा के निर्माण के बाद उसका प्रथम सत्र १३ मई, १९५२ को हुआ था। मई, १९५२ से दिसम्बर १९५६ की अवधि में इसके १५ सत्र कुल ६५३ दिनों की अवधि में हुये जिसमें से इसकी बैठकें वास्तव में ४८८ दिन हुयी।

इस लेख का आशय द्वितीय सदन के रूप में इस सभा के महत्व तथा मई, १९५२ से दिसम्बर, १९५६ के पाँच वर्षों में किये गये कार्य पर विचार करना है।

द्वितीय सदन—इसकी उपयोगिता

बहुधा एक प्रश्न पूछा जाता है कि क्या एक गणतन्त्रात्मक संविधान में द्वितीय सदन की कोई आवश्यकता है। इस प्रकार के प्रश्नों का उद्भव क्रांतिकारी फ्रांस के महान् संविधान शास्त्री ऐबे सीयेस द्वारा प्रणीत इस सिद्धान्त से है कि यदि द्वितीय सदन प्रथम से असहमत हो तो यह नटखट और यदि इससे सहमत हो तो फालतू है। इतिहास ने इस सिद्धान्त की निरर्थकता को सिद्ध कर दिया है। विश्व ने सीयेस सिद्धान्त पर कभी भी गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया है क्योंकि लगभग सभी महत्वपूर्ण राष्ट्रों में इस समय दो सदन हैं। जैसा कि सर जॉन मेरियट ने कहा है, फ्रांस ने भी अपने प्रथम और द्वितीय गणतंत्रों में किए गये एक सदन वाले प्रयोग को दोहराने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया है। द्वितीय सदन के ऐतिहासिक उदाहरण, प्राचीन रोमन लोकतंत्र के रोमन सीनेट द्वारा, जिसे लोक कार्यों का प्रशासन करने वाली सबसे चतुर और बुद्धिमान संस्था कहा गया है, और ब्रिटिश, हाउस आफ लार्डस, जिसने ब्रिटेन के लोकतंत्रात्मक इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है; के द्वारा दिये गये हैं। अठारहवीं शताब्दी में संविधान के निर्माण में एक बहुत बड़ा प्रयोग किया गया। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का संविधान इसी शताब्दी के अन्त में स्वीकार किया गया और उसमें दो सदनों वाली विधान सभा का उपबन्ध किया गया। इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि संघीय प्रणाली के सफलतापूर्वक कार्य करने के लिये दूसरे सदन का होना अनिवार्य है।

उन्नीसवीं शताब्दी के राजनैतिक विचारकों ने दूसरे सदन की जोरदार सिफारिश की है। महान राजनैतिक विचारक सर जान स्टुआर्ट मिल ने दूसरे सदन का समर्थन करते हुए यह कहा है :

> "किसी भी विधान सभा का बहुमत जब स्थायी स्वरूप धारण कर लेता है, और जब वह उन्हीं व्यक्तियों से मिलकर बना हो जो अभ्यास के अनुसार परस्पर कार्य करते हों तथा उन्हें अपने सदन में विजय का पूर्ण विश्वास रहता हो तब यदि उन्हें इस आवश्यकता से मुक्त कर दिया जाय कि उनके कार्यों पर अन्य प्राधिकार प्राप्त संस्था को सहमति देनी है तो वह बहुमत सरलता से निरंकुश और आत्माभिमानी हो सकता है।"

हैनरी सिजविक ने भी दो सदनों वाली प्रणाली का समर्थन किया है जो उनके द्वारा अभिव्यक्त निम्न-लिखित विचारों से प्रकट हो जायेगा:

> "सीनेट के निर्माण का मुख्य उद्देश्य यह है कि समस्त विधान सम्बन्धी कार्यों पर प्रतिनिधि विधान सभा से भिन्न स्वरूप वाली और संभवतः बौद्धिक अर्हताओं में उससे उच्च और अनुपूरक संस्था, उन पर पुनर्विचार कर सके।"
>
> सर हैनरी मेन के कथनानुसार "द्वितीय सदन चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो न होने से अच्छा है।"

इस प्रकार यूरोप अथवा ब्रिटिश राष्ट्र मंडल के अधिकांश देशों ने, जिन्होंने अपने संविधानों (एकीय अथवा संघीय) का मसविदा उन्नीसवीं शताब्दी में तैयार किया था, दो सदनों वाली प्रणाली अपनायी। किन्तु वर्तमान शताब्दी में दूसरे सदन को हटा देने अथवा उसकी शक्तियों पर प्रतिबन्ध लगाने की प्रवृत्ति बढ़ रही हैं। १९११ के संसद अधिनियम ने ब्रिटिश हाउस आफ लार्ड्स की शक्तियों पर बहुत प्रतिबन्ध लगा दिया है।

यद्यपि दो सदनों वाली प्रणाली, संघीय प्रणाली का अनिवार्य अंग मानी जाती है तथापि उसे सदैव संघ के सभी अंगभूत एककों में लागू नहीं किया गया है। अमेरिका, रूस, कनाडा और दक्षिण अफ्रीका में केन्द्र में दो सदन हैं किन्तु उनके अंगभूत एककों की अधिकांश विधान सभायें एक-सदनीय हैं। संभव है दो सदनों वाली विधान सभाओं के निर्माण के समर्थन में परम्पराओं के प्रभाव का महत्वपूर्ण भाग रहा हो।

किन्तु अधिकांश स्वतंत्र लोकतंत्रात्मक राज्यों द्वारा दो सदनों वाली प्रणाली को स्वीकार करना केवल परम्परा के कारण नहीं कहा जा सकता है। उन्होंने सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न महान राज्यों द्वारा किये गये प्रयोगों और अनुभवों का अनुकरण किया है।

इस विषय पर सर विंस्टन चर्चिल के मत को उद्धृत करना अनुपयुक्त नहीं होगा। उनका कथन है कि:

"जहाँ तक मैं जानता हूं किसी भी स्वतंत्र देश ने, जहाँ लोकतांत्रिक संस्थायें हैं एक सदन वाली सरकार स्वीकार नहीं की है। जहाँ तक मैं जानता हूँ कोई स्वतंत्र देश, जहाँ लोकतांत्रिक संस्थायें हों, ऐसा नहीं है जिसने एक सदन वाली सरकार स्वीकार की हो। हो सकता है दुनियां में ऐसे देश हों जहां ऐसी व्यवस्था न हो। अमरीकियों, स्विटजरलेंड के निवासियों, डचों, वेलजियनों, फ्रांसिसियों ने अपने नवीनतम संविधानों में भी दूसरा सदन रखा है। आयरलेंड वालों ने भी अपनी सीनेट वनाई है। हमारे अधिराज्यों में, जो विश्व के सबसे अधिक लोकतंत्रात्मक देश हैं; क्वींस लेंड को छोड़ कर, सब जगह दो सदनों वाली सरकार हैं। यह सभी अनुभव करते हैं कि व्यापक मताधिकार के आधार पर निर्वाचन में मिले हुए मत (जिसमें भाग्य का भी बहुत हाथ रहता है) और राज्य तथा राष्ट्र के क्रमशः निर्मित होने वाले रचनाक्रम में, स्थायी परिवर्तन के बीच कोई संशोधनकारी प्रक्रिया होनी चाहिये। आप मुझे किसी सर्व प्रभुत्व सम्पन्न राज्य का शक्तिशाली, सफल, स्वतंत्र और लोकतंत्रात्मक संविधान दिखाइये जिसने एक सदन वाली सरकार का सिद्धान्त अपनाया हो।"

संवैधानिक विधि-वेत्ता राजनीतिज्ञ और विद्यार्थी दो सदन वाली प्रणाली के गुणों अवगुणों की सभी पहलुओं से परीक्षा कर चुके हैं। ब्राइस सम्मेलन और सोलवरी आयोग ने भी इस समस्या की जाँच की और इस सम्बन्ध में अपना विचारपूर्ण मत दिया। मैं यहाँ दूसरे सदन के पक्ष और विपक्ष में दिये गये मतों को विस्तार से नहीं वताऊँगा। सर्वप्रथम मैं दो सदन वाली प्रणाली को जारी रखने के विरुद्ध कही जाने वाली मुख्य वातों की, वर्तमान समय के विभिन्न प्रकार के द्वितीय सदनों का विशिष्ट निर्देश करके, चर्चा करूंगा।

द्वितीय सदन—उसकी मुख्य आलोचना

(क) यह अलोकतंत्रात्मक है

दो सदनों वाली प्रणाली के आलोचकों की आलोचनाओं का मुख्य आधार यह है कि द्वितीय सदन अलोकतंत्रात्मक है। इस गलती का कारण प्रणाली नहीं है अपितु द्वितीय सदन की रचना है। राजनीतिज्ञों तथा संवैधानिक विधिवेत्ताओं ने द्वितीय सदन की समुचित रचना पर पर्याप्त विचार किया है किन्तु अभी तक सर्वसम्मत निर्णय नहीं हो सका है। वर्तमान समय में कई प्रकार के द्वितीय सदन हैं। ब्रिटिश हाउस आफ लार्ड्स पैतृक सदन है। ऐसे भी द्वितीय सदन हैं जहां केवल नामनिर्देशित सदस्य ही हैं यथा कनाडा की सीनेट, जिसके सदस्यों को कनाडा के महाराज्यपाल जीवन पर्यंत के लिये नामज़द करते हैं। ऐसे भी द्वितीय सदन हैं जिनके आंशिक सदस्य निर्वाचित होते हैं और आंशिक सदस्य नाम निर्देशित होते हैं यथा आयरलैण्ड और दक्षिण अफ्रीका के संघ का द्वितीय सदन। कुछ द्वितीय सदनों में सारे सदस्य निर्वाचित होते हैं यथा अमेरिका की सीनेट, आस्ट्रेलिया और जापान का द्वितीय सदन।

पैतृक और नाम निर्देशित द्वितीय सदन

यदि द्वितीय सदन में पैतृक या पूर्णतः नाम निर्देशित सदस्य होंगे तो यह राज्य तंत्र और निजी हितों का क्रीडा क्षेत्र वन जायेगा और इस प्रकार प्रतिक्रियावादी सिद्ध होगा। यदि द्वितीय सदन के सदस्य, सरकार द्वारा नाम निर्देशित होते हैं तो उसमें केवल सरकार के पक्ष के लोग ही होंगे। न्यूजीलैण्ड संविधान सुधार समिति ने, १९५२ में प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में यह सिफारिश की थी कि विभिन्न दलों के नेताओं को प्रतिनिधि सभा में

संदस्यों के अनुपात से ही सीनेट के सदस्यों का नाम निर्देशन करना चाहिये। यदि यह प्रणाली अपनायी जायेगी तो द्वितीय सदन प्रथम सदन की प्रतिकृति मात्र रह जायेगा।

निर्वाचित द्वितीय सदन

यदि द्वितीय सदन पूर्णतः निर्वाचित हो तो महान बुद्धिमान व्यक्तियों को निर्वाचन की प्रणाली द्वारा उसमें प्रवेश करने में बाधा होगी और विधान मंडल को ऐसे व्यक्तियों की विशेषज्ञता और बहुमूल्य अनुभव से लाभ नहीं पहुंचेगा। द्वितीय सदन के सदस्यों का निर्वाचन उसी आधार पर नहीं हो सकता जिसके द्वारा पहिली सभा के सदस्य चुने जाते हैं। क्योंकि ऐसी अवस्था में यह पहिले सदन की अनुकृति मात्र रह जायेगा।

अंशतः निर्वाचित द्वितीय सदन

सम्भवतः यथार्थ दृष्टिकोण यह होगा कि द्वितीय सदन अंशतः प्रतिनिधित्व पूर्ण हो और अंशतः नाम निर्देशित। भारत में हमें इस प्रकार के द्वितीय सदनों का अनुभव पहिले से ही रहा है। गवर्नमेंट ऑफ इंडिया अधिनियम १९३५ के अधीन, प्रान्तों के द्वितीय सदन अंशतः निर्वाचित और अंशतः नामनिर्देशित थे।

इस सम्बन्ध में यह उल्लेख किया जा सकता है कि अधिकांशतः विभिन्न दलों की यह प्रवृत्ति होती है कि वह द्वितीय सदन में केवल दलगत आधार पर, सदस्यों की राष्ट्र सेवा की क्षमता पर ध्यान दिये बिना, अपने दल के सदस्य भेज कर उसे सरकार के समर्थन अथवा विरोध का एक अन्य साधन बनाना चाहते हैं। ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं जब प्रतिनिधि सदन में निर्वाचन में पराजित सदस्यों को द्वितीय सदन में स्थान देने का प्रयत्न किया गया। द्वितीय सदन के द्वारा वांछनीय उद्देश्य को पूरा करने के लिये सभी दलों का यह प्रयत्न होना चाहिये कि वे सदन में ऐसे लब्ध प्रतिष्ठ व्यक्तियों को भेजें जो अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा, चरित्र बल, दीर्घ एवं बहुरूप अनुभव तथा राष्ट्र सेवा की क्षमता से सदन के बाहर तथा भीतर जनता का विश्वास अर्जित कर सकें।

जैसा कि ब्राइस सम्मेलन में कहा गया है "द्वितीय सदन का उद्देश्य राष्ट्र की इच्छा और उसके मत को जानना होना चाहिये और उसे राष्ट्र के प्रति अपने पूर्ण दायित्व को स्वीकार करना चाहिये उसे जनमत का विरोध नहीं करना चाहिये अपितु समुचित रूप से अभिव्यक्त होने की दशा में उस मत को समझना और उसे क्रियान्वित करना चाहिये।

संघ में द्वितीय सदन

संघीय संविधानों में दो सदनों वाली प्रणाली बड़ी व्यापक है। संघ में द्वितीय सदन विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति रोकता है और अंगभूत एककों को प्रतिनिधित्व प्रदान कर केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति को सुदृढ़ करता है। इस प्रकार संघीय संघटन में द्वितीय सदन वस्तुतः अंगभूत राज्यों का सदन होता है और उसका मुख्य प्रयोजन संघ के अंगभूत एककों को प्रतिनिधित्व प्रदान करना है।

दूसरा प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या राज्यों को इस प्रकार प्रतिनिधित्व प्रदान करने में प्रतिनिधित्व में समानता का सिद्धान्त अपनाया जाय। अमेरिका और आस्ट्रेलिया की सीनेट, अंगभूत राज्यों के प्रतिनिधित्व में समानता के सिद्धान्त पर आधारित है। वहां राज्यों के आकार और महत्व पर ध्यान दिये बिना द्वितीय सदन (सीनेट) में समान प्रतिनिधित्व प्राप्त है। समान प्रतिनिधित्व के इस सिद्धान्त पर यह आपत्ति की जा सकती है कि इससे अल्पसंख्यकों का शासन हो सकता है।

इस सम्बन्ध में एक अन्य प्रश्न यह भी उत्पन्न होता है कि द्वितीय सदन में राज्यों के प्रतिनिधियों के चुनने में कौन सी प्रणाली अपनायी जाय। अमरीका और आस्ट्रेलिया में राज्यों के प्रतिनिधियों को प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर चुना जाता है। द्वितीय सदन प्रथम सदन जैसा ही न हो, इसके लिये इन देशों में बड़े बड़े निर्वाचन क्षेत्रों और भिन्न प्रकार की मतदान प्रणाली की व्यवस्था की गई है। इटली जैसे कुछ एकीय देशों में द्वितीय सदन के सदस्यों को प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर भी चुना जाता है। इटली में इस प्रयोजन के लिये राज्यों को विभिन्न प्रदेशों में बांट दिया जाता है जहां निर्वाचन होते हैं। किन्तु ये प्रदेश प्रतिनिधित्व को समानता के आधार पर नहीं किये जाते साथ ही ऐसे निर्वाचनों में मत देने की भिन्न प्रणाली भी अपनायी जाती है। निस्सन्देह प्रत्यक्ष निर्वाचन की

प्रणाली अधिक लोकतन्त्रात्मक ढंग की होती है किन्तु इस में कुछ त्रुटियां भी हैं । उच्च श्रेणी के और प्रतिष्ठित लोग प्रत्यक्ष निर्वाचन का खतरा नहीं उठाना चाहते हैं विशेषतः जब निर्वाचकगण अधिक संख्या में हों जो कि बड़े निर्वाचन क्षेत्रों में प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली होने से अनिवार्य है । नाम निर्देशन के द्वारा भी इन व्यक्तियों को विधान मंडल में स्थान देना सदैव सम्भव नहीं होता है क्योंकि यदि नाम निर्देशन का आश्रय लेना ही पड़े, तो इसका कम से कम प्रयोग किया जाना चाहिये । अधिक संख्या में नाम निर्देशन करना अलोकतन्त्रात्मक होगा ।

अधिकांश संघीय संगठनों में अंगभूत राज्यों को प्रतिनिधित्व देने के लिये अप्रत्यक्ष निर्वाचन का समर्थन किया गया है । सामान्यतः राज्य की विधान सभायें इसकी निर्वाचक संस्थायें होती हैं, जिसके सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन से निर्वाचित होते हैं किन्तु दक्षिण अफ्रीका संघ में, जहां इस प्रणाली को अपनाया गया है निर्वाचक-गण संघ की विधान सभा में प्रान्त के प्रतिनिधि भी होते हैं । कुछ एकात्मक प्रकार के राज्यों में स्थानीय संस्थाओं द्वारा निर्वाचन की प्रणाली भी अपनायी जाती है । किन्तु ब्राइस सम्मेलन ने इस प्रक्रिया का अनुमोदन नहीं किया है क्योंकि इससे स्थानीय संस्थाओं में दलबन्दी आरम्भ हो जाती है । आयरलैंड के द्वितीय सदन में स्थानों का वितरण कृत्यों के आधार पर किया गया है । किन्तु वितरण की इस प्रणाली पर, इस आधार पर आपत्ति की गई है कि यह अधिकांशतः मनमाने ढंग का है । सामान्यतः द्वितीय सदन में निर्वाचन एकक संक्रमणीयक मत द्वारा समानुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किये जाते हैं, जिससे सदन में सभी दलों को यथोचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके ।

नार्वे की संसद् में द्वितीय सदन

वर्तमान समय के द्वितीय सदनों में सब से मनोरंजक द्वितीय सदन, नार्वे का 'लागटिंग' है । ज्यों ही नार्वे की संसद् "स्टार्टिंग" सदस्यों के समानुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली के आधार पर व्यापक वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचित होने पर, गठित होती है वह अपने में से ही एक चौथाई सदस्यों को द्वितीय सदन बनाने के लिये चुन लेती है । अवशेष सदस्यों से मिल कर प्रथम सदन 'आडेलस्टिंग" की रचना होती है । द्वितीय सदन "लाग्टिंग" की बैठकें केवल विधेयकों के पुनरीक्षण के लिये अलग होती हैं । अविभक्त संसद् 'स्टार्टिंग' अन्य कार्य करती है । विवादग्रस्त विधेयक को आगे बढ़ाने और गतिरोध हटाने के लिये दोनों सदनों का संयुक्त सत्र आवश्यक होता है । ऐसे समय विधेयक को पारित करने के लिये दो तिहाई बहुमत आवश्यक होता है । नार्वे की संसद् एक सदनीय है अथवा द्विसदनीय इस सम्बन्ध में कुछ विवाद है । इसका सर्वोत्तम उत्तर, जैसा कि प्रोफेसर लीस स्मिथ ने कहा है, कि नार्वे में एक सदन है तथापि वहां द्वितीयसदन के तत्व भी विद्यमान हैं। द्वितीय सदन के लिए प्रथम सदन द्वारा समानुपातिक संख्या में सदस्यों के निर्वाचन करने की प्रणाली कुछ एकात्मक राज्यों तथा संघीय राज्यों के कुछ अंगभूत एककों द्वारा भी अपनायी जाती है। किन्तु नार्वे में जो प्रणाली अपनायी गयी है वह अद्वितीय है ।

भारतीय संसद् में द्वितीय सदन

भारत का संविधान संघीय संविधान है । इसलिये संविधान के रचयिताओं ने, संविधान में द्वितीय सदन की व्यवस्था करना आवश्यक समझा था । उनके सामने विभिन्न देशों के द्वितीय सदनों के कई नमूने थे । उन्होंने अंशतः निर्वाचित तथा अंशतः नामनिर्देशित द्वितीय सदन को देश की आवश्यकताओं के अनुरूप सर्वोत्तम समझा था अंशतः नामनिर्देशन का सिद्धान्त इसलिये अपनाया गया ताकि साहित्य, विज्ञान कला और समाज सेवा क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्ति द्वितीय सदन में स्थान पा सकें । ऐसे सदस्यों की संख्या १२ तक सीमित है । शेष सदस्य संघ की अंगभूत इकाइयों के प्रतिनिधि होते हैं । जैसा बताया जा चुका है उनकी संख्या इस समय २२० है । द्वितीय सदन को संघीय स्वरूप देने के लिये विभिन्न राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा और संघीय प्रदेशों में इस प्रयोजन के लिये बने हुए निर्वाचक गणों के सदस्यों द्वारा इसके प्रतिनिधि निर्वाचित करने का उपबन्ध किया गया है । चूंकि विधान सभायें और निर्वाचकगण, जो कि वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष निर्वाचन की प्रणाली द्वारा चुने गये हैं; द्वितीय सदन (राज्य सभा) का निर्माण करते हैं इसलिये राज्य-सभा का लोकतन्त्रात्मक रूप भी पूरी तरह बना रहता है । प्रतिनिधियों का चुनाव एकल संक्रमणीय मत द्वारा समानुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के आधार पर किया जाता है, जिससे विधान सभाओं और निर्वाचक गणों में दलों का प्रतिनिधित्व यथासम्भव राज्य सभा में भी दृष्टिगोचर हो और अल्पसंख्यकों को प्रभावशाली प्रतिनिधित्व मिल सके।

ऐसे अवसर भी आ सकते हैं जबकि लोकसभा का शासक दल, सभी राज्यों और संघीय प्रदेशों में बहुमत प्राप्त न कर सके। ऐसे समय राज्य सभा में पर्याप्त बड़ा विरोधी दल हो जायेगा जो कि लोकतन्त्रात्मक विधान मण्डल के कार्य के लिये अनिवार्य है। राज्य सभा के सदस्यों की पदावधि लोकसभा के सदस्यों से अधिक होने और राज्य सभा के एक तिहाई सदस्यों के हर दूसरे वर्ष निवृत्ति प्राप्त करने के कारण इस सम्भावना को भी बिल्कुल दूर नहीं किया जा सकता है कि लोकसभा का शासक दल राज्य सभा में अल्पसंख्यक रह जाय यद्यपि ऐसी सम्भावना बहुत कम है। ऐसी आपातकालीन स्थिति उत्पन्न होने पर भी यह वैधानिक यन्त्र में नियन्त्रण और संतुलन के रूप में कार्य करेगी। यदि विरोधी दल रचनात्मक विरोधी दल के रूप में समुचित कार्य करता है और विरोधी दल केवल ध्वंसात्मक नहीं है तो यह आशंका करने का कोई कारण नहीं है कि वैधानिक यन्त्र ठप्प हो जायेगा और गतिरोध उत्पन्न हो जायेगा। गतिरोध उत्पन्न होने पर भी उसे दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाकर, दोनों सदनों में सदस्यों की कुल संख्या के बहुमत द्वारा निर्णय कर दूर किया जा सकता है। लोक-सभा के सदस्यों की कुल संख्या राज्य सभा के सदस्यों की कुल संख्या के दुगुने से भी अधिक है। सरकारी दल, यदि उसका बहुमत बहुत ही कम संख्या में नहीं हो, किसी विधेयक को संयुक्त बैठक में सरलता से पारित कर सकता है।

संविधान में, भारत संघ की अंगभूत इकाइयों को राज्य सभा में समान प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है जबकि अमेरिका और आस्ट्रेलिया की सीनेट में समान प्रतिनिधित्व दिया गया है। इसके दो कारण हैं :—

एक तो ऐसा प्रतिनिधित्व अवास्तविक होगा तथा वह बड़े और महत्वपूर्ण राज्यों के लिये हानिकर होगा। जैसा कि बताया जा चुका है राज्य सभा में १४ राज्यों और ४ संघीय प्रदेशों को प्रतिनिधित्व प्राप्त है। विभिन्न राज्यों और संघीय प्रदेशों के आकार और जनसंख्या में बहुत अन्तर है। यदि सारे राज्यों को समान प्रतिनिधित्व मिल जाये तो छोटे राज्य और संघीय प्रदेश जिनकी संख्या अधिक है, बड़े और महत्वपूर्ण राज्यों पर हावी हो जायेंगे। दूसरे जिन विशेष आधारों पर अमेरिका के एककों और आस्ट्रेलिया राष्ट्र मण्डल को समान प्रतिनिधित्व दिया गया है वे बातें भारतीय संघ में लागू नहीं होती हैं। अमेरिका और आस्ट्रेलिया राष्ट्र मण्डल की संघीय सरकार सर्वप्रभुत्व सम्पन्न और स्वतन्त्र अंगभूत इकाइयों के समझौते के परिणामस्वरूप बनी थी। इसलिये उनकी विकेन्द्रित भावनाओं के परितोष के लिये उन्हें समान प्रतिनिधित्व देना आवश्यक था। किन्तु यह बात भारतीय संघ के मामले में, जो कि अंगभूत इकाइयों में किसी समझौते के परिणामस्वरूप नहीं बना है, ठीक नहीं उतरतीं हैं।

विभिन्न राज्यों और संघीय प्रदेशों में स्थानों का वितरण नवीनतम जनगणना के आंकड़ों के आधार पर किया गया है। जिन राज्यों की जनसंख्या ५० लाख से अधिक नहीं है उनमें स्थानों का वितरण १० लाख के लिये एक स्थान के आधार पर किया गया है। ५० लाख से अधिक जनसंख्या वाले राज्यों को अत्यधिक प्रतिनिधित्व न प्राप्त होने देने के लिये इन राज्यों के लिये नियम में परिवर्तन कर दिया गया है तथा उनका निश्चय इस सूत्र के अनुसार किया जायेगा कि प्रथम ५० लाख तक प्रति १० लाख व्यक्तियों के लिये एक स्थान होगा और इससे अतिरिक्त जनसंख्या के लिये २० लाख या उससे कम पर, परन्तु १० लाख से कम न होने पर, एक स्थान और दिया जायेगा। संघीय प्रदेशों के सम्बन्ध में कुछ अधिक रियायत दी गई है क्योंकि अन्य राज्यों की अपेक्षाकृत वे क्षेत्र और जनसंख्या दोनों में ही छोटे हैं।

(ख) अनावश्यक विलम्ब का कारण

द्वितीय सदन के आलोचकों की आलोचना का दूसरा आधार यह है कि इससे वैधानिक प्रक्रिया में अनावश्यक विलम्ब होता है। उनके मतानुसार एक सदन वैधानिक प्रक्रिया में सरलता तथा शीघ्रता लाने में सहायक होता है, जो वर्तमान समय में पर्याप्त जटिल और विलम्बकारी हो गयी है। एक सदन शासक दल द्वारा वैधानिक कार्यक्रमों को तत्काल क्रियान्वित करने में सहायक होता है। यह आलोचना मुख्यतः द्वितीय सदन के कृत्यों के सम्बन्ध में है। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है जैसा कि राजनैतिक विचारकों और राजनीतिज्ञों के वक्तव्यों से पता चलता है कि प्रतिनिधि सदन को क्षणिक आवेशों का शिकार होने और देश के हितों के विरुद्ध मनमाने प्राधिकारों का प्रयोग करने से रोकने के लिये अर्थात् दूसरे शब्दों में वैधानिक यंत्र में कुछ प्रतिबन्ध और सन्तुलनों के लिये एक प्रतिबन्धात्मक शक्ति होनी चाहिये।

यहां पर जार्ज वाशिंगटन के जीवन की एक प्रसिद्ध घटना का उल्लेख करना मनोरंजक होगा। एक दिन, नाश्ता करते समय थॉमस जैफरसन ने जार्ज वाशिंगटन से विधान मण्डल में दो सदनों की स्थापना के विरुद्ध आपत्ति की। वाशिंगटन ने उनसे पूछा "आप यह काफी अपनी प्लेट में क्यों डाल रहे हैं?" "ठंडा करने के लिये" जैफरसन ने उत्तर दिया। "ठीक इसी प्रकार" वाशिंगटन ने कहा, "हम भी विधानों को ठंडा करने और उन्हें उदार बनाने के लिये उन्हें सीनेट रूपी प्लेट में डालते हैं"। इस प्रकार द्वितीय सदन का कार्य प्रथम सदन के आवेशपूर्ण कार्यों पर प्रतिबन्ध लगाना है।

ब्राइस सम्मेलन के अनुसार द्वितीय सदन का मुख्य कार्य किसी विधेयक को पारित करने में केवल इतना विलम्ब (अधिक नहीं) करना है जिससे कि उस समय में राष्ट्र का मत उस विधेयक पर अच्छी तरह अभिव्यक्त हो जाय। यह कथन देश के संविधान में संशोधन करने के मामलों पर अधिक लागू होता है। इसके अलावा, कुछ विधान मण्डलों में चर्चाओं को सीमित रखने के लिये कुछ विशेष नियम बनाये गये हैं जिसके परिणामस्वरूप प्रतिनिधि सभा में कई बातों पर यथोचित चर्चा नहीं हो सकती है। ऐसे विषयों पर द्वितीय सदन में उचित रूप से विचार किया जा सकता है। इस प्रकार यह ऐसे विधानों पर रोक लगाता है जो शीघ्रता से बनाये गये हों और जिन पर पूरी तरह से विचार किया गया हो।

(ग) अत्यधिक व्यय

यह आलोचना भी की जाती है कि द्वितीय सदन के कारण अनावश्यक और अत्यधिक व्यय होता है। यह सर्वविदित बात है कि आधुनिक विश्व में लोकतन्त्रात्मक प्रणाली बहुत खर्चीली होती है। किन्तु उसके खर्चीले होने के कारण हम उसे छोड़ नहीं सकते हैं। उसकी वास्तविक कसौटी उससे प्राप्त होने वाला लाभ है। यदि हम द्वितीय सदन से प्राप्त लाभ को रुपयों से तोलें तो भी यह व्यय अनावश्यक और अलाभकारी नहीं कहा जायेगा।

द्वितीय सदन—उसका वास्तविक प्रयोजन

अब मैं भारतीय संसद् के द्वितीय सदन (राज्य-सभा) के कृत्यों की ओर विशेष रूप से निर्देश करते हुये इस बात की चर्चा करूंगा कि किन प्रयोजनों को पूरा करने के लिये द्वितीय सदन की स्थापना की जानी चाहिये और उसको क्या क्या अधिकार प्राप्त होने चाहियें?

यूरोप के कुछ देशों के संविधानों ने द्वितीय सदन को वित्तीय विषयों तक में प्रथम सदन के बराबर के अधिकार प्रदान कर दिये हैं। स्वीडन, बेल्जियम और इटली के द्वितीय सदनों को विधान निर्माण संबंधी विषयों में (जिनमें वित्तीय विधेयक भी शामिल हैं) प्रथम सदन के बराबर ही अधिकार प्राप्त हैं। स्वीडन में विधेयक को दोनों सदनों में एक ही साथ पुरःस्थापित करना पड़ता है। कनाडा की सीनेट भी अत्यन्त शक्तिशाली है। केवल इस बात को छोड़कर, कि धन-विधेयकों को प्रथम सदन में पुरःस्थापित करना होता है। कनाडा की सीनेट की स्थापना (संसद् अधिनियम बनने से पहले के) 'हाउस आफ़ लार्ड्स' के नमूने के आधार पर की गयी थी। कनाडा की सीनेट की ही तरह आस्ट्रेलिया की सीनेट को भी धन-विधेयकों के अतिरिक्त अन्य विषयों के बारे में प्रथम सदन के बराबर ही अधिकार प्राप्त हैं। सर्वाधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन अमरीका की सीनेट है जिसे प्रथम सदन से भी अधिक शक्तिशाली कहा जाता है। इसे न केवल वित्तीय विषयों तक में 'हाउस आफ़ रिप्रेज़ेंटेटिव्स' के बराबर विधायिनी शक्तियां प्राप्त हैं वरन् इनके अलावा उसे कुछ कार्यपालिका–शक्तियां भी प्राप्त हैं, जैसे संधियों का अनुसमर्थन करने का अधिकार और संघीय पदाधिकारियों की नियुक्ति का अनुमोदन करने का अधिकार।

जिन देशों में संसदीय शासन प्रणाली हैं उनमें आम प्रथा यह है कि द्वितीय सदनों को वित्तीय विधेयकों के संबंध में निर्णायक भूमिका अदा नहीं करने दी जाती। भारत के संविधान ने भी जिसने संसदीय प्रकार की सरकार की ही व्यवस्था की है, वित्तीय विषयों में द्वितीय सदन की शक्तियों को सीमित कर दिया है। धन-विधेयक अथवा धन-संबंधी खंडों वाले विधेयक को राज्य-सभा में पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता। फिर, राज्य-सभा को न तो धन विधेयक को अस्वीकार करने और न उसमें संशोधन करने का ही अधिकार है। जब कोई धन विधेयक लोक-सभा द्वारा पारित किये जाने के बाद राज्य-सभा को भेजा जाता है तो राज्य सभा उस विधेयक के संबंध में केवल कुछ सिफारिशें ही कर सकती है और उसे विधेयक प्राप्त होने की तिथि से चौदह दिनों के भीतर

लौटा देना होता है। इन सिफारिशों को स्वीकार करना, न करना लोक-सभा पर निर्भर है। जहां तक अन्य वित्तीय विधेयकों का संबंध है, राज्य-सभा की शक्तियों पर इस बात को छोड़ कर अन्य कोई प्रतिबन्ध नहीं है कि, जैसा ऊपर बताया जा चुका है धन संबंधी खंडों वाले विधेयकों को राज्य-सभा में पुर:स्थापित नहीं किया जा सकता है और राज्य-सभा को ऐसे वित्तीय विधेयकों को अस्वीकार कर देने अथवा उसमें संशोधन कर देने का पूरा पूरा अधिकार प्राप्त है जैसा कि उसे उन विधेयकों के बारे में प्राप्त है जो धन विधेयक नहीं होते हैं।

धन विधेयकों के बारे में राज्य-सभा की शक्तियों के सीमित होने और कुछ वित्तीय विधेयकों के राज्य-सभा में पुर:स्थापित किये जाने पर निषेध होने का यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिये कि वित्तीय विषयों में राज्य-सभा का कुछ भी अधिकार नहीं है। संविधान में यह व्यवस्था है कि संघ के वार्षिक आय-व्ययक संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखे जायेंगे। विधेयक पर चर्चा राज्य-सभा में भी की जा सकती है। हालांकि अनुदानों की मांगें केवल लोक-सभा में ही की जानी चाहिये जिसे किसी भी मांग पर स्वीकृति देने, या न देने अथवा इस शर्त के साथ स्वीकृति देने का अधिकार प्राप्त है कि उसमें बाद में कमी की जा सकेगी। संघ के लेखे के संबंध में भारत के नियंत्रक महालेखा-परीक्षक के प्रतिवेदनों की प्रतियों के भी संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखे जाने की अपेक्षा की गई है। संसद् की लोक-लेखा समिति में भी राज्य-सभा के प्रतिनिधि रहते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वित्तीय विषयों में राज्य-सभा को ब्रिटिश हाउस आफ़ लार्ड्स की अपेक्षा कहीं अधिक अधिकार प्राप्त है।

अब हम इस बात पर विचार करें कि वे कौन से कृत्य हो सकते हैं जिन्हें संसद् का द्वितीय सदन उपयोगी ढंग से कर सकता है। संसद् के सदनों द्वारा किये जाने वाले कार्य को मोटे तौर पर दो शीर्षकों के अधीन रखा जा सकता है, अर्थात्, (१) विधान निर्माण संबंधी कृत्य, और (२) अन्य कार्य। बाद वाली श्रेणी में :—

(१) प्रश्न,

(२) प्रस्ताव,

(३) संकल्प, और

(४) मतदान रहित चर्चा

सम्मिलित हैं।

विधान कार्य में द्वितीय सदन का योगदान

(क) विधेयकों का आरम्भ

जहां तक विधान-कार्य का संबंध है, यह प्रश्न अनेक बार पूछा गया है कि क्या द्वितीय सदन को विधेयक आरम्भ भी करने चाहियें या उसे केवल विधेयकों का पुनरीक्षण करने वाले सदन के रूप में कार्य करना चाहिये। यूरोप में कुछ द्वितीय सदनों को विधेयकों का आरम्भ करने का अधिकार नहीं होता परन्तु उनकी संख्या बहुत ही कम है, उदाहरण के लिये फ्रांस में 'काउन्सिल आफ रिपब्लिक' विधेयकों का आरम्भ नहीं कर सकती और उसमें पुर:स्थापित किये गये प्रत्येक विधेयक को तत्काल 'असेम्बली' में भेज दिया जाता है। आधुनिक विश्व में विधानों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुये यह वास्तव में सुविधाजनक होगा कि प्रथम सदन द्वारा उन पर विचार आरम्भ किये जाने से पूर्व कुछ विधेयकों को द्वितीय सदन में पुर:स्थापित किया जाये और उन पर उसके द्वारा विचार किया जाये। इस प्रकार दोनों सभाओं द्वारा विधेयकों पर विचार कराने से समय की काफी बचत की जा सकती है और इससे प्रथम सदन में कार्य की अधिकता भी कुछ कम हो जायेगी। इसलिये इस बात का कोई कारण नहीं है कि धन विधेयकों और धन संबंधी खंडों वाले विधेयकों को छोड़कर अन्य विधेयकों को द्वितीय सदन में आरम्भ करने पर कोई प्रतिबन्ध लगाया जाये और द्वितीय सदन को केवल पुनरीक्षण करने वाली संस्था ही रहने दिया जाये। फिर, सदनों की संयुक्त समितियों द्वारा यदि वे नियुक्त की गयी हों विचार के बाद द्वितीय सदन (जिसे विधेयकों को दोनों सदनों की संयुक्त समितियों को सौंपने का अधिकार प्राप्त होना चाहिये), विवादस्पद विधेयकों तक पर विचार कर के उन्हें ठीक स्वरूप प्रदान कर दे, तो प्रथम सदन में उसे पारित कराने में आसानी होगी।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, धन-विधेयकों और धन सम्बन्धी खण्डों वाले विधेयकों को छोड़ कर अन्य विधेयकों को राज्य सभा में आरम्भ करने

पर कोई संवैधानिक प्रतिवन्ध नहीं है । अप्रैल १९५२ में अपना गठन होने के बाद के पांच वर्षों में राज्य-सभा ने ३६३ विधानों का निबटारा किया । जिन में से १०१ विधान उसी सभा में आरम्भ हुये थे । जो विधान उसमें आरम्भ किये गये वे मुख्यतया सामाजिक क्षेत्र के विषयों से ही सम्बन्धित थे । ऐसा विचार था कि राज्य-सभा का गम्भीरतापूर्ण वातावरण सामाजिक न्याय और सामाजिक कल्याण सम्बन्धी विधान का आरम्भ करने के लिये विशेष रूप से उपयुक्त सिद्ध होगा । राज्य सभा में सामाजिक क्षेत्र के जिन विधानों का श्रीगणेश किया गया उनमें हिन्दू विधि सम्बन्धी चार अधिनियम, अर्थात् (१) हिन्दू विवाह अधिनियम, १९५५ ; (२) हिन्दू अल्पवयस्कता और संरक्षकता अधिनियम, १९५६ ; (३) हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, १९५६ और (४) हिन्दू दत्तक-ग्रहण तथा भरण-पोषण अधिनियम, १९५६ सब से अधिक महत्वपूर्ण थे ।

ये चारों , विशेष रूप से विवाह और उत्तराधिकार से सम्बन्धित विधान, ऐसे थे जिनके प्रति देश भर में बड़ी दिलचस्पी दिखाई गई और इन पर काफी उत्तेजना पूर्ण विवाद किये गये । इस प्रकार संहिता तैयार कर हिन्दू जाति के सामाजिक ढांचे में, जो बहुत दिनों से चला आ रहा था और जो बहुत गहराई तक अपनी जड़ें जमा चुका था, परिवर्तन करने का जो प्रस्ताव था, अनेक लोग उसके लिये तैयार नहीं थे । दत्तक-ग्रहण और भरण-पोषण सम्बन्धी विधेयकों को छोड़ कर शेष सभी विधेयकों को उन पर जनता की राय जानने के लिये परिचालित किया गया और फिर उसके बाद राज्य-सभा और लोक-सभा ने प्राप्त रायों का ध्यान रखते हुये उन विधेयकों पर विचार किया और उनमें संशोधन किये। स्वयं सभाओं में भी इन विधानों के विरुद्ध अनेक प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये और उन पर विचार किया गया । दोनों सभाओं में सभी तरह के सदस्यों ने उन पर विचार करने और उन्हें पारित करने में बड़ी सक्रिय दिलचस्पी दिखाई । उनको पारित कराने के लिये महिला सदस्यों ने पुरुष सदस्यों की अपेक्षा कहीं अधिक परिश्रम किया । दलगत नीतियों से ऊपर उठ कर चर्चा की गई । अन्त में ये विधान संसद् द्वारा प्राय: सर्व सम्मति से पारित किये गये । इस प्रकार राज्य-सभा ने ऐसे कानून बनाने का श्रेय प्राप्त कर लिया जिनके बारे में यह कहना सही होगा कि वे वर्तमान संसद् के जीवन-काल में पारित किये गये ऐसे समाज सुधार कानूनों में सब से महत्वपूर्ण हैं जिन्होंने देश की जनता के विशाल बहुमत पर अपना प्रभाव डाला है ।

राज्य-सभा में पुर:स्थापित किये गये विधेयकों में, और जिसे गढ़ने में राज्य-सभा ने अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, बाद के स्थान पर श्रमजीवी पत्रकार (औद्योगिक विवाद) विधेयक और श्रमजीवी पत्रकार (सेवा की शर्तें) और विविध उपबन्ध विधेयक उल्लेखनीय हैं । ये १९५५ में राज्य-सभा में पुर:स्थापित किये गये थे और उसी वर्ष संसद् के अधिनियम बन गये । इन दोनों ही कानूनों का उद्देश्य श्रमजीवी पत्रकारों के लिये उनकी सेवा की शर्तों और मालिक कर्मचारियों के सम्बन्धों के विषय में सामाजिक न्याय प्राप्त करना था, जो देश के सार्वजनिक जीवन में उनकी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका के उचित और निर्बाध गति से निर्वाह के लिये अत्यन्त अनिवार्य है । बाद वाले कानून को उचित ही श्रमजीवी पत्रकारों के "अधिकारों के घोषणा पत्र" की संज्ञा दी गई है ।

भारत के समाचारपत्रों पर प्रभाव डालने वाले कानूनों की श्रेणी में दो ऐसे कानून भी उल्लेखनीय हैं जिनका आरम्भ राज्य-सभा में ही किया गया था । ये हैं—समाचार पत्र (मूल्य तथा पृष्ठ) विधेयक और प्रेस परिषद् विधेयक । ये दोनों १९५५ में पारित किये गये थे । बाद वाला विधेयक अभी लोक-सभा द्वारा पारित नहीं हुआ । प्रेस आयोग की सब से महत्वपूर्ण सिफारिशों के अनुसार इस विधेयक द्वारा जिस प्रेस परिषद् क' स्थापना की जाने वाली है उसका उद्देश्य समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता की रक्षा करना, पत्रकारिता के नीति शास्त्र का स्तर निर्धारित करना और उसे कायम रखना, एकाधिकार और नियंत्रण को एक ही स्थान पर केन्द्रित करने की ओर ले जाने वाली घटनाओं पर निगरानी रखना, गवेषणा को प्रोत्साहन देना और समाचारपत्रों के लिये समान सेवाओं का प्रबन्ध करना है ।

कशाघात उन्मूलन विधेयक और गन्दी बस्तियां (सुधार और सफाई) विधेयक जैसे दो अन्य विधान थे, जिनमें सामाजिक बुराइयों की समस्या का हल करने की व्यवस्था की गई थी । पहला विधेयक १९५५ में राज्य-सभा में पुर:स्थापित किया गया था और उसी वर्ष

पारित हुआ। गन्दी बस्तियां (सुधार और सफाई) विधेयक को भी जो राज्य-सभा में ही पुरःस्थापित किया गया था और दिसम्बर १९५६ में कानून बना, ऐसे विधान की संज्ञा दी गई जिसका उद्देश्य भारत के ऐसे अभागे लोगों को मुक्त करना और उन्हें पूर्ण मानव के स्तर तक ऊपर उठाना था जिन्हें परिस्थितियों ने गन्दगी और गलीज के बीच रहने को बाध्य कर दिया था।

राज्य-सभा में आरम्भ होने वाले अन्य विधानों में कापीराइट विधेयक उल्लेखनीय है। यह विधेयक दोनों सदनों की संयुक्त समिति को सौंपा गया था और अब उस समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में राज्य-सभा में विचाराधीन है।

इससे यह स्पष्ट है कि विधेयकों का आरम्भ करने वाले सदन के रूप में राज्य-सभा का पिछले पांच वर्षों के कार्य का लेखा-जोखा काफी प्रभावोत्पादक है।

जो विधान लोक-सभा में आरम्भ किये गये थे उनमें भी राज्य-सभा का योग कम प्रभावोत्पादक नहीं है। विनियोग विधेयकों, वित्त विधेयकों और प्रशुल्क विधेयकों पर सभा में होने वाले वाद-विवाद को सदा आदर के साथ सुना जाता था। संविधान से सम्बन्धित विधेयकों जैसे विभिन्न संविधान संशोधन अधिनियम, आन्ध्र राज्य अधिनियम, १९५३, नागरिकता अधिनियम, १९५५ और राज्य पुनर्गठन अधिनियम, १९५६ पर विचार करने तथा उन्हें पारित करने में राज्य सभा ने समिति-प्रक्रम तथा पारित करने के प्रक्रम दोनों पर, उल्लेखनीय भूमिका अदा की है। स्वर्गीय डा० अम्बेडकर जैसे और डा० हृदय नाथ कुंजरू जैसे संविधान विशेषज्ञों और दक्ष संसद् वेत्ताओं के भाषणों की सरकार तथा विरोधी पक्ष दोनों के सदस्यों द्वारा बड़ी ही उत्सुकता और आदर की भावना के साथ प्रतीक्षा की जाती थी। विमान निगम अधिनियम, १९५३, सम्पदा शुल्क अधिनियम, १९५३, दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, १९५५, समवाय अधिनियम, १९५६, जीवन बीमा निगम अधिनियम, १९५६ आदि जैसे महत्वपूर्ण विधानों के बनाये जाने में भी राज्य सभा ने प्रभावशाली योगदान दिया है।

गैर-सरकारी सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किये गये विधान के क्षेत्र में राज्य सभा ने इस अवधि में दो विधान, अर्थात् प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान और अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) संशोधन अधिनियम, १९५६ और हिन्दू विवाह (संशोधन) अधिनियम, १९५६ को भी संविधि पुस्तक में जोड़ दिया है।

(ख) विधेयकों का पुनरीक्षण

प्रथम सदन द्वारा पारित किये गये विधान का पुनरीक्षण करना और उसकी मसौदे सम्बन्धी अशुद्धियों को ठीक करना आदि द्वितीय सदन के सब से महत्वपूर्ण कृत्यों में हैं। आलोच्य अवधि में राज्य सभा ने लोक-सभा द्वारा पारित किये गये १४ विधेयकों में संशोधन किये और लोक सभा ने इन सभी संशोधनों को स्वीकार कर लिया। एक धन विधेयक को भी, अर्थात् त्रावनकोर कोचीन विनियोग (लेखानुदान) विधेयक, १९५६ को, राज्य सभा ने एक पारिभाषिक प्रकार के संशोधन की सिफारिश के साथ लोक सभा को लौटा दिया था और लोक सभा ने उसे स्वीकार कर लिया।

अन्य कार्य में द्वितीय सदन का योगदान

(१) प्रश्न

अगला विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या द्वितीय सदन को प्रश्न पूछने का अधिकार होना चाहिये, और यदि हां, तो क्या यह अधिकार बिल्कुल उसी प्रकार का होना चाहिये जैसा कि प्रथम सदन को प्राप्त होता है। प्रथम सदन में प्रश्नों का उत्तर देने की जो प्रक्रिया प्रचलित है, सभी द्वितीय सदनों में उसका पालन नहीं किया जाता है। कनाडा और आयरलैंड जैसे कुछ राज्यों में द्वितीय सदन में प्रश्न पूछने की ही अनुमति नहीं है। ब्रिटिश 'हाउस आफ लार्ड्स' में प्रचलित परिपाटी यह है कि सप्ताह में केवल दो दिन, अर्थात् मंगलवार और बुधवार को, प्रश्न पूछे जा सकते हैं और एक दिन में अधिक से अधिक केवल तीन तारांकित प्रश्न पूछे जा सकते हैं। यदि द्वितीय सदन को सरकार के कार्य कलापों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करने का अधिकार दिया जा सकता है तो उस बात की

कोई वजह नहीं है कि उस सदन को ऐसी जानकारी प्राप्त करने के लिये, जो इस प्रकार की चर्चा का स्तर ऊंचा उठा सके, प्राप्त करने के लिये प्रश्न पूछने का अधिकार न दिया जाये। इसलिये द्वितीय सदन के सदस्यों को सरकार के सदस्यों से जानकारी प्राप्त करने के इस महत्वपूर्ण अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिये।

मई, १९५२ में जिस समय राज्य सभा की पहली बैठक हुई थी, प्रक्रिया नियमावली में सप्ताह में केवल दो दिन प्रश्न पूछे जाने का उपबन्ध रखा गया था। सभा के सभी वर्गों के सदस्यों द्वारा यह मांग की जाने पर कि प्रश्न पूछने के दिनों की संख्या बढ़ा दी जाये, सभापति ने इस प्रश्न को नियम समिति को सौंप दिया और उस समिति ने यह सिफारिश की कि प्रश्न पूछने के दिन बढ़ा कर चार कर दिये जायें और प्रत्येक सोमवार, मंगलवार, बुधवार और गुरुवार को बैठक का पहला घंटा प्रश्न पूछने और उनका उत्तर दिये जाने के लिये रखा जाये। सभापति ने इस सिफारिश को स्वीकार कर लिया और इसे नियमों में शामिल कर लिया। राज्य-सभा में, आलोच्य पांच वर्षों में, जिन में उसके पन्द्रह सत्र हुये, २२७९३ प्रश्नों की पूर्व सूचना प्राप्त हुई थी। इन में से १९९७९ तारांकित प्रश्न थे २८१४ अतारांकित प्रश्न थे। ७७४२ तारांकित प्रश्न गृहीत किये गये थे।

(२) प्रस्तावों आदि पर चर्चा

द्वितीय सदन का एक और उपयोगी कृत्य यह हो सकता है कि वह उन महत्वपूर्ण विषयों पर खुले तौर से आद्योपान्त चर्चा करे जिन पर प्रथम सदन समय की कमी के कारण विचार न कर सकता हो। यह सर्व विदित है कि 'हाउस आफ़ लार्ड्स' में महत्वपूर्ण विषयों पर जो चर्चा की जाती है उसका स्तर बहुत ही ऊंचा होता है और वह जनमत और सरकार के विचारों पर भी काफ़ी असर डालती है। अन्य द्वितीय सदनों को भी इसी प्रकार से कार्य करना चाहिये। इसके अलावा, जैसा कि ब्राइस कान्फ्रेंस ने कहा है, इस प्रकार की चर्चा ऐसे सदन में करना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा जिसम चर्चा के परिणामों से कार्यपालिका सरकार का अस्तित्व ही संकट में पड़ने की संभावना न हो।

प्रस्ताव

राज्यसभा के पुनरीक्षाधीन पन्द्रह सत्रों में सत्रह सरकारी प्रस्तावों पर चर्चा की गई। ये प्रस्ताव अन्य विषयों के अतिरिक्त, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और सरकार की तत्सम्बन्धी नीति, १९५२ में देश की खाद्य स्थिति, जम्मू और काश्मीर राज्य की स्थिति, १९५३ और १९५४ के लिये अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के आयुक्त के प्रतिवेदनों, निवारक निरोध अधिनियम के कार्यान्वय सम्बन्धी प्रतिवेदन, प्रेस आयोग के प्रतिवेदन, और राज्य पुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन से सम्बन्धित थे।

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति सम्बन्धी वाद-विवाद अत्यधिक दिलचस्प सिद्ध हुये। यह चर्चा आम तौर पर चालू महत्व की घटनाओं पर ही केन्द्रित रही। सितम्बर, १९५३ में मुख्य रूप से कोरिया की स्थिति पर चर्चा हुई; और उसी वर्ष दिसम्बर में पाकिस्तान को प्रस्तावित अमरीकी सैनिक सहायता के साथ साथ पुनः कोरिया के बारे में चर्चा की गई। भारत स्थित फ्रांसीसी बस्तियों के बारे में मई, १९५४ में चर्चा की गयी। अगस्त, १९५४ में गोआ की समस्या और प्रस्तावित 'सीटो' संधि चर्चा के मुख्य विषय रहे। गोआ की स्थिति पर सितम्बर, १९५५ में पुनः विचार किया गया। हिन्द चीन की नवीनतम स्थिति का भी विश्लेषण किया गया। १९५६ में अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति सम्बन्धी प्रस्ताव पर पन्द्रहवें सत्र के दौरान में वाद-विवाद किया गया और यह चर्चा मुख्य रूप से हंगरी और स्वेज की हाल की घटनाओं पर केन्द्रित रही।

राज्य पुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन सम्बन्धी वाद-विवाद, जैसा कि अपेक्षित था, सर्वाधिक दिलचस्प और अत्यधिक विवादास्पद रहा। राज्य-सभा के ग्यारहवें सत्र में हुआ यह वाद-विवाद छः दिन तक चलता रहा और इसमें ३४ घंटे और ५६ मिनट लगे। इस चर्चा में एक सौ दो सदस्यों ने भाग लिया—इससे पूर्व किसी भी विषय पर इतने अधिक सदस्यों ने भाग नहीं लिया था। वाद-विवाद प्रायः दलगत नीतियों की सीमाओं के परे था, क्योंकि सदस्यों ने राजनीतिक दलों की नीतियों की अपेक्षा अलग अलग राज्यों के दृष्टिकोण सामने रखे थे। आयोग के एक सदस्य, डा० हृदय नाथ

कुंजरू की उपस्थिति ने राज्य-सभा के इस वाद-विवाद का महत्व और भी बढ़ा दिया था । इसने उनको इस बात का अवसर दिया कि दोनों सदनों में आयोग की सिफारिशों की जो आलोचना की गई थी, वे उसका उत्तर दे सकें ।

राज्य-सभा ने इस अवधि में गैर-सरकारी सदस्यों के दस गृहीत प्रस्तावों में से सात पर चर्चा की । ये प्रस्ताव अन्य विषयों के अतिरिक्त संघ लोक सेवा आयोग के वार्षिक प्रतिवेदनों, भारत की प्रशासनिक प्रणाली के पुनरीक्षण के बारे में डा० पाल एच० ऐपलबी के प्रतिवेदन और दशमिक सिक्का प्रणाली के सम्बन्ध में थे ।

संकल्प (सरकारी)

आलोच्य अवधि में सभा में २० सरकारी संकल्प प्रस्तुत और पारित किये गये । इन संकल्पों की विषय-वस्तु कुछ वस्तुओं पर शुल्क बढ़ाने से ले कर संविधान के अनुच्छेद ३५६ के अधीन पेप्सू, आंध्र, त्रावनकोर-कोचीन और केरल के बारे में राष्ट्रपति की उद्घोषणा के अनुमोदन और भारत की प्रथम और द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अनुमोदन तक से सम्बन्धित थी । प्रथम पंचवर्षीय योजना के सिद्धान्तों और उद्देश्यों के सम्बन्ध में हुई चर्चा में कुल मिला कर ५० सदस्यों ने भाग लिया और द्वितीय पंचवर्षीय योजना सम्बन्धी वाद-विवाद में ३६ सदस्यों ने अपने विचार व्यक्त किये ।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना पर विचार करने के लिये जो विशेष संसदीय समिति नियुक्त की गई थी उसके विचार विमर्श में भी राज्य-सभा के अनेक सदस्यों ने सक्रिय भाग लिया ।

संकल्प—(गैर-सरकारी सदस्य)

राज्य-सभा की प्रथा के अनुसार साधारणतया शुक्रवार का दिन गैर-सरकारी सदस्यों के कार्य निबटाने के लिये रखा जाता है और आम तौर पर यह व्यवस्था की जाती है कि एक शुक्रवार को गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्प लिये जायें और दूसरे को उनके विधेयक । आलोच्य पन्द्रह सत्रों के दौरान में गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्पों की चर्चा के लिये ३४ दिन नियत किये गये थे । इस अवधि में संकल्प प्रस्तुत करने के सदस्यों के इरादे की ८४१ पूर्व-सूचनायें प्राप्त हुईं । इन में से ५७० पूर्व-सूचनाओं को, जो कुल मिला कर १८५ संकल्पों के बारे में थीं, गृहीत किया गया । इस प्रकार के कार्य के लिये नियत समय में गृहीत संकल्पों में से ४१ पर चर्चा की गई ।

गृहीत संकल्प विविध विषयों से सम्बन्धित थे, जैसे, कृषि सम्बन्धी ऋण और भूमि सुधार, भाषावार राज्यों का निर्माण, भारतीय साहित्यकारों की स्थिति, बेरोजगारों को सहायता, परिवार नियोजन, वस्तुओं का अधिकतम मूल्य निर्धारित करना, बुनियादी शिक्षा, समाज सेवा के लिये अनिवार्य भर्त्ती, महा कवि कालिदास की जयन्ती, कोयला खानों में सुरक्षा सम्बन्धी कार्यवाही, विद्यार्थियों की अनुशासनहीनता, राष्ट्र-मण्डल के साथ भारत के सम्बन्ध इत्यादि, इत्यादि ।

सभा में स्वीकृत संकल्पों में से (१) अवांछनीय फिल्मों के प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगाने से सम्बन्धित संकल्प और (२) भारतीयों द्वारा नियंत्रित और भारतीय स्वामित्व वाले विज्ञापनदाता-अभिकरणों को सरकारी प्रोत्साहन दिलाने की व्यवस्था करने वाले संकल्प का उल्लेख किया जा सकता है । यद्यपि जो संकल्प प्रस्तुत किये गये और जिन पर चर्चा हुई, सरकार उनमें से कई को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं थी, फिर भी इससे सरकार का ध्यान उन विषयों की ओर केन्द्रित कराने का प्रयोजन तो पूरा हो ही गया, जो वैसे उसके सामने कतई न आये होते ।

मतदान रहित चर्चा

संविधान के उपबन्धों के अनुसार आय-व्ययक-प्राक्कलनों के लोक-सभा में उपस्थापित किये जाने के साथ-साथ उनका राज्य-सभा के पटल पर रखा जाना भी आवश्यक है । राज्य-सभा में इन प्राक्कलनों पर चर्चा के लिये सभापति दिन नियत कर देता है । इस प्रकार नियत किये गये दिनों पर सदस्य आय-व्ययक प्रस्थापनाओं पर चर्चा करते हैं और उनके बारे में सुझाव देते हैं । सभा के समक्ष कोई औपचारिक प्रस्ताव नहीं रखा जाता है और न सभा का कोई निर्णय ही अभिलिखित किया जाता है । इस वाद-विवाद में सरकार

की सम्पूर्ण आर्थिक नीति और अर्थोपाय सम्बन्धी स्थिति पर विचार किया जाता है। कराधान सम्बन्धी अन्तिम प्रस्थापनाओं को तैयार करते समय इन वाद-विवादों में प्रगट किये गये विचारों का ध्यान रखा जाता है और इनको उचित महत्व दिया जाता है। खर्च में कमी और खर्च की नई मदों आदि के बारे में भी सरकार सदस्यों के सुझावों का ध्यान रखती है।

राज्य-सभा की विशेष शक्ति

जिन विषयों के बारे में राज्य विधान बनाते हैं, उनके क्षेत्र में केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप के लिये संविधान में कुछ विशेष उपबन्ध रखे गये हैं। संविधान के अनुच्छेद २४९ के अधीन संसद् को राज्य सूची में प्रगणित उन विषयों के बारे में विधि बनाने की शक्ति प्राप्त है जिनके विषय में राज्य-सभा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की दो तिहाई से अन्यून संख्या द्वारा समर्थित संकल्प द्वारा यह घोषित कर दे कि राष्ट्रीय हित में यह आवश्यक या इष्टकर है कि संसद् उन विषयों में से किसी के बारे में विधि बनाये। पुनः संविधान के अनुच्छेद ३१२ के अधीन यदि राज्य-सभा ने उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की दो तिहाई से अन्यून संख्या द्वारा समर्थित संकल्प द्वारा घोषित कर दिया है कि राष्ट्र हित में ऐसा करना आवश्यक या इष्टकर है, तो संसद् विधि द्वारा संघ और राज्यों के लिये सम्मिलित एक या अधिक अखिल भारतीय सेवाओं के सृजन के लिये उपबन्ध कर सकेगी। इस प्रकार जिन विषयों के बारे में राज्यों को विधि बनाने का अधिकार प्राप्त है उन में संसद् द्वारा हस्तक्षेप के विषय में संविधान ने राज्य-सभा को एक विशेष स्थान प्रदान किया है और इसका कारण यह है कि राज्य-सभा राज्यों के प्रतिनिधियों से मिल कर बनी है और ऊपर लिखे विषयों के सम्बन्ध में राज्य-सभा द्वारा दो तिहाई बहुमत से संकल्पों के स्वीकार किये जाने का अर्थ यह होगा कि राज्यों की सहमति प्राप्त हो गई है। दो तिहाई बहुमत इसलिये निर्धारित किया गया है कि राज्य-सभा में राज्यों को समान प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है।

विधि निर्माण की शक्ति के साथ-साथ भारत की संसद् को संविधान में संशोधन करने की शक्ति भी प्राप्त है। संविधान में संशोधन के लिये लाये गये प्रत्येक विधेयक को संसद् के प्रत्येक सदन में उसकी कुल सदस्य संख्या के बहुमत से और उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से पारित कराना पड़ता है। प्रथम सदन कहीं संविधान में संशोधन करने की शक्ति का दुरुपयोग न करने लगे, इसलिये द्वितीय सदन इसके विरुद्ध एक बचाव का काम करता है।

प्रथम और द्वितीय सदनों के बीच सम्बन्ध

प्रत्येक द्विसदनीय विधान मण्डल में प्रत्येक सदन को संविधान द्वारा निर्धारित किये गये क्षेत्र के भीतर रह कर ही कार्य करना चाहिये। इस बात में कोई सन्देह नहीं है कि विधान तंत्र के सफल संचालन के लिये संसद् के दोनों सदनों के बीच निकटतम सहयोग होना अत्यावश्यक है। किसी भी सदन को अपने आप को दूसरे से श्रेष्ठ नहीं समझना चाहिये, उसका कार्य-क्षेत्र चाहे कुछ भी क्यों न हो और प्रत्येक सदन को अपने आपको दूसरे सदन का पूरक समझना चाहिये। यदि इन तथ्यों का ध्यान रखा जाये तो प्रत्येक सदन द्वारा किये जाने वाले कृत्यों का देश के लिये सर्वाधिक सुविधाजनक ढंग से उपयोग किया जा सकता है और संसद् की प्रतिष्ठा कायम रखी जा सकती है। यद्यपि वांछनीय उद्देश्य यही होना चाहिये तथापि एक सदन अथवा दूसरे द्वारा की गई गलतियों की घटनायें भी कम नहीं हैं। ब्रिटिश पार्लियामेंट के आरम्भ के दिनों में हाउस आफ़ लार्ड्स और हाउस आफ़ कामन्स के बीच परम्परा से जो खींच-तान चलती थी उससे संविधान के विकास के इतिहास के सभी जानकार भली भांति परिचित हैं। लगभग चार वर्ष पूर्व ऐसी कुछ घटनायें हो गयीं थीं जिन्होंने हमारी संसद् की दोनों सभाओं के बीच कुछ असन्तोष का भाव उत्पन्न कर दिया था। प्रधान मंत्री उस समय दिल्ली में नहीं थे। वापस लौटने पर उन्होंने ६ मई, १९५३ को राज्य-सभा में एक वक्तव्य दिया जिससे दोनों सदनों के बीच की गलतफ़हमी दूर हो गयी और पुनः सद्भावना की स्थापना हुई। अपने इस वक्तव्य में प्रधान मंत्री ने कहा :

> "हमारे संविधान के अधीन, संसद् दो सदनों से मिल कर बनती है और उनमें से प्रत्येक सदन संविधान द्वारा निर्धारित क्षेत्र के भीतर रह कर कार्य करता

है। हमें अपने अधिकार उस संविधान से प्राप्त होते हैं । कभी कभी हम ब्रिटेन की संसद् के सदनों की प्रथाओं और परम्पराओं के प्रति निर्देश करते हैं और कभी कभी गलती से इन्हें उच्च सदन या निम्न सदन कहने लगते हैं । मैं इसे सही नहीं समझता । न ही ब्रिटिश संसद् की प्रक्रिया की ओर, निर्देश करने से लाभ होगा । जो प्रारम्भ में राजा की सत्ता के विरुद्ध और बाद को हाउस आफ कामन्स और हाउस आफ लार्ड्स के बीच संघर्ष के फलस्वरूप कहीं सदियों में जाकर बन सकी हैं, हमारी संसद् की पृष्ठ भूमि में इस प्रकार का कोई इतिहास नहीं है, भले ही अपना संविधान बनाने में हमने अन्य लोगों के अनुभव से लाभ उठाया हो । इसलिये हमारे संविधान को ही हमारा मार्गदर्शक होना चाहिये । इसीलिये इसमें राज्य-सभा तथा लोक-सभा के कार्यों का स्पष्टतया उल्लेख कर दिया गया है। इनमें से किसी भी सभा को उच्च अथवा निम्न सदन के नाम से पुकारना ठीक नहीं है। संविधान की सीमाओं के अन्दर रहते हुए प्रत्येक सभा को अपनी प्रक्रिया का विनियमन करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है । कोई भी सभा अकेले संसद् नहीं कहला सकती है । दोनों सभायें मिल कर ही भारत की संसद् का निर्माण करती हैं । संविधान अथवा प्रजातांत्रिक ढांचे की सफलता के लिये इन दोनों सभाओं का पूर्ण सहयोग से काम करना बड़ा आवश्यक है । वास्तव में ये दोनों सभायें एक ही ढांचे के दो भाग हैं यदि इनमें सहयोग तथा अनुग्रहण की भावना नहीं होगी तो संविधान के ठीक रूप से कार्य करने के मार्ग में कई बाधायें उत्पन्न हो सकती हैं । अतः यह स्थिति विशेष रूप से खेदजनक होगी जबकि इन दोनों सदनों के बीच किसी प्रकार का संघर्ष उत्पन्न हो जायेगा । इसलिये जो लोग राष्ट्र के निर्माण में अभिरुचि रखते हैं उन का यह परम कर्तव्य है कि वे इन में पूर्ण सहयोग बनाये रखें और एक दूसरे का आदर करें। दोनों सदनों में किसी प्रकार का संवैधानिक मतभेद नहीं हो सकता क्योंकि हमारे देश में संविधान ही अन्तिम निश्चायक है । संविधान में वित्त सम्बन्धी कुछ मामलों को छोड़ कर जिन पर कि एक मात्र लोक-सभा का अधिकार है, अन्य सब बातों में दोनों सदनों को बराबर माना गया है। कौन कौन से विषय वित्त सम्बन्धी विषय हैं इस का अन्तिम निर्णय अध्यक्ष करता है ।"

हमारे प्रधान मंत्री द्वारा दोनों सदनों के सम्बन्धों के बारे में जो अधिकारपूर्ण व्याख्या दी गई है वह हमेशा संसद के दोनों सदनों का उनके सम्बन्धों में मार्ग दर्शन करती रहेगी ।

अन्त:संसदीय सम्बन्ध

एस० एल० शकधर

संयुक्त सचिव, लोक-सभा सचिवालय ।

१९४७ में जब हमारा देश स्वतंत्र हुआ तो अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं—जैसे अन्त:संसदीय संघ (इन्टर-पार्लियामेंटरी यूनियन) तथा राष्ट्रमंडल संसदीय संघ (कामनवेल्थ पार्लियामेंटरी एसोसियेशन), जिसे पहले साम्राज्य संसदीय संघ (एम्पायर पार्लियामेन्टरी एसो-सिएशन) कहते थे, ने तुरन्त ही भारत संसद् से उन संस्थाओं का सदस्य बनने और भारतीय शाखायें खोलने के लिये कहा । यहां यह बताया जाना ठीक होगा कि यद्यपि पुरानी केन्द्रीय विधान सभा साम्राज्य संसदीय संघ की सदस्य थी किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत की शाखा के रूप में उसने अपना कार्य बन्द कर दिया था । अध्यक्ष श्री मावलंकर ने प्रधान मंत्री से सलाह कर के अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की प्रार्थनाओं पर बड़े ध्यान से विचार किया और निर्णय किया कि उन्हें अन्त:संसदीय संघ का सदस्य बनना चाहिये । संविधान सभा (विधायिनी) ने एक संकल्प पारित किया, जिसके द्वारा अध्यक्ष को अधिकार दिया गया कि वह एक भारतीय संसदीय मंडल बनायें । संकल्प प्रस्तुत करते समय प्रधान मंत्री ने कहा :

> "एक मंडल बनता है और वह (अन्त:संसदीय संघ की) अपनी सदस्यता की घोषणा करता है । संघ राष्ट्रीय मंडल से निर्मित है । किसी संसद् का प्रत्येक मंडल अपनी संस्था के नियम बनाता है और उसी में ही सदस्यों द्वारा दिये जाने वाले चन्दे को निर्धारित किया जाता है । अपने आन्तरिक कामों में प्रत्येक मंडल स्वायत्त होता है किन्तु वह जो काम करे वह अन्त:संसदीय संघ के उद्देश्यों के अनुकूल होने चाहियें जिस से यह मंडल सम्बन्धित है । मैं ने सरकार का मत प्रकट किया है—हम इस संघ से सम्बन्ध स्थापित करने के प्रश्न का स्वागत करते हैं । हम समझते हैं कि यह बात ज्यादा अच्छी होगी, यदि इस संस्था में भेजे जाने वाले सदस्य अध्यक्ष द्वारा चुने जायें—सरकार द्वारा नहीं ।"

साम्राज्य संसदीय संघ का नाम बदलकर राष्ट्रमंडल संसदीय संघ रखा जाना

साम्राज्य संसदीय संघ से जो निमंत्रण आया था उस के बारे में अध्यक्ष ने सोचा कि भारत के स्वतंत्र स्तर की दृष्टि से भारत ऐसी संस्था का सदस्य नहीं हो सकता जिससे साम्राज्यवाद की बू आये । इसलिये उन्होंने कहा कि जब तक इस संस्था का नाम नहीं बदला जाता और भारत को उस संस्था में बराबर का दर्जा नहीं दिया जाता तब तक भारत उस का सदस्य नहीं बन सकता । उसी समय उस संस्था के गठन में परिवर्तन करने के प्रश्न पर विचार हो रहा था और सदस्य देश उस संस्था का नया संविधान बनाने में लगे हुए थे । इस प्रकार १९४८ में जब लन्दन में साम्राज्य संसदीय संघ का सम्मेलन हुआ तब भारत को उस में भाग लेने के लिये इस आश्वासन से निमंत्रित किया गया कि वहां एक शाखा खोली जायेगी जो संघ के भावी संविधान बनाने में सहायता देगी । अध्यक्ष मावलंकर स्वयं प्रतिनिधिमंडल के प्रधान थे और सम्मेलन की कार्यवाही में उन्होंने सक्रिय भाग लिया । उन के सुझाव स्वीकार किये गये । संस्था का नाम "राष्ट्रमंडल संसदीय संघ" (कामनवैल्थ पार्लिया-मेन्टरी एसोसियेशन) रखा गया और उसके संविधान द्वारा भारत को भी उसी प्रकार से बराबर का दर्जा दिया गया जैसे कि दूसरे स्वायत्त देशों को दिया हुआ था ।

अन्तःसंसदीय मंडल का निर्माण

भारत के अन्तःसंसदीय संघ तथा राष्ट्रमंडल संसदीय संघ के सदस्य बन जाने पर एक प्रश्न यह उठा कि क्या दोनों अन्तर्राष्ट्रीय निकायों के लिये दो पृथक् शाखायें होनी चाहियें । अन्तःसंसदीय संघ ने तो इस मामले में अधिक रुचि नहीं दिखाई किन्तु राष्ट्रमंडल संसदीय संघ ने कहा कि केवल राष्ट्रमंडल संसदीय संघ के कामों के निष्पादन के लिये अलग भारतीय शाखा होनी चाहिये । अध्यक्ष श्री मावलंकर ने इस मामले में प्रधान मंत्री से और संसद् के प्रमुख सदस्यों से सलाह ली और वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय निकायों के लिये एक दूसरे से स्वतंत्र दो विभिन्न शाखायें नहीं होनी चाहिये । यह भी महसूस किया गया कि हमारे स्वतंत्र देश की संसद् की शाखा किसी बाह्य निकाय के अधीन नहीं होनी चाहिये । भारत किसी अन्तर्राष्ट्रीय निकाय की शाखा बने और वह किस प्रकार अपने काम का प्रबन्ध करे यह मामला भारतीय शाखा पर ही छोड़ दिया जाना चाहिये और सैद्धान्तिक या वास्तविक रूप में इस मामले पर किसी दूसरे का नियंत्रण नहीं होना चाहिये । यह भी आवश्यक समझा गया कि इस बात का निर्णय कि भारत इन संस्थाओं का सदस्य रहे या न रहे भारत पर ही छोड़ दिया जाना चाहिये और उसके लिये जिस संगठन के गठित किये जाने का विचार है वह ऐसा होना चाहिये जिस में बाह्य प्रभाव के बगैर काम करने की स्वतंत्रता हो । इन बातों को दृष्टि में रखते हुए यह निर्णय किया गया कि एक स्वायत्त निकाय बनाया जाये जिसका पृथक् संविधान हो और जो अपने कार्य को स्वतः चलाये । इस के पश्चात् संसद के सदस्यों की एक बैठक बुलाई गई और यह तय किया गया कि भारतीय संसदीय मंडल नामक एक स्वायत्त संस्था बनाई जाये ।

संविधान

भारतीय संसदीय मंडल के संविधान के अनुसार केवल संसद् के सदस्य ही इस मंडल के सदस्य हो सकते हैं । संसद् के भूतपूर्व सदस्य, अस्थायी संसद के सदस्य या संविधान सभा (विधायिनी) के सदस्य या केन्द्रीय विधान सभा के सदस्य सम्बन्धित सदस्य हो सकते हैं— इन सदस्यों को अधिकार होंगे जिन का पृथक् रूप से उल्लेख किया गया है ।

प्रत्येक सदस्य २० रुपये प्रति वर्ष के हिसाब से चन्दा देता है । मंडल के कार्यों की देखरेख एक कार्यकारिणी समिति करती है जिसमें एक प्रधान, दो उप-प्रधान, कोषाध्यक्ष तथा बारह सदस्य होते हैं । अध्यक्ष मंडल तथा समिति के पदेन प्रधान हैं । अन्य पदाधिकारियों तथा कार्यकारिणी समिति के सदस्यों का चुनाव प्रति-वर्ष होता है । सामान्यतया उपाध्यक्ष तथा उप-सभापति को ही उप-प्रधान चुना जाता है । कोषाध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों की नियुक्ति के बारे में मंडल की प्रत्येक वार्षिक बैठक में अध्यक्ष को उन पदाधिकारियों के नामनिर्देशन करने का अधिकार दिया जाता है । लोक-सभा के सचिव मंडल तथा कार्यकारिणी समिति के पदेन सचिव होते हैं ।

उद्देश्य

भारतीय संसदीय मंडल के उद्देश्यों की इस प्रकार व्याख्या की गई है :—

(क) संसद्-सदस्यों में पारस्परिक वैयक्तिक सम्बन्ध बढ़ाना ;

(ख) लोक महत्व के ऐसे प्रश्नों पर विचार करना, जिनकी संसद के सामने आने की संभावना हो ;

(ग) संसद् सदस्यों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा राजनैतिक, प्रतिरक्षात्मक, आर्थिक, सामाजिक तथा शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर भाषणों की व्यवस्था कराना ;

(घ) विदेशों की संसदों के सदस्यों से संबंध स्थापित करने की दृष्टि से विदेशों के दौरों का प्रबन्ध करना ; और

(ङ) अन्तःसंसदीय संघ के राष्ट्रीय मंडल तथा राष्ट्रमंडल संसदीय संघ की भारतीय शाखा के रूप में इन दोनों संस्थाओं के उद्देश्यों के अनुकूल काम करना ।

कृत्य तथा कार्यवाहियां

इस प्रकार यह मंडल राष्ट्रमंडल संसदीय संघ की भारतीय शाखा तथा अन्तःसंसदीय संघ के राष्ट्रीय मंडल के रूप में काम करता है । इसी मंडल की ओर से संसदीय सद्भावना मंडल विदेशों में भेजे जाते हैं और यहां आने वाले मंडलों का स्वागत किया जाता है । यह मंडल प्रतिष्ठित आगन्तुकों तथा प्रमुख व्यक्तियों के भाषणों का प्रबन्ध करता है । इस मंडल के तत्वावधान में बहुत से प्रतिष्ठित अतिथियों ने संसद् सदस्यों के समक्ष भाषण दिये हैं जिन में से मार्शल बुलगानिन, श्री ख्रुश्चेव, सर एन्थनी ईडन, श्री अन्योरिन बेवन, श्री चाउ-एन-लाई, प्रेसीडेंट नासिर, डा० अली शास्त्रा-मिजोयो, श्री ऊथ्रा स्वे तथा श्री भंडारनायक के नाम उल्लेखनीय हैं ।

मंडल अध्ययन समितियों का संचालन करता है । इस समय, प्रतिरक्षा, वैदेशिक कार्य तथा नौवहन पर तीन सक्रिय अध्ययन समितियां कार्य कर रही हैं । इन अध्ययन समितियों का उद्देश्य यह है कि सदस्यों को ठीक ठीक तथ्य मिलें, जिससे वह सभा में वाद-विवाद को अच्छा बना सकें । कई बार अध्ययन समितियां एक समस्या विशेष के अध्ययन के बाद अपने निष्कर्षों को मंत्रियों के पास ज्ञापनों के रूप में भेज देती हैं । यह ज्ञापन मंत्रियों की जानकारी के लिये होते हैं और उन पर इस प्रकार की कार्यवाही की जा सकती है जैसी कि वह आवश्यक समझें । मंत्रीगण भी अध्ययन समितियों को विभिन्न विषयों पर अपने विचारों से अवगत कराते हैं ।

विदेशों की संसदों के भारत में आने वाले सदस्यों को भी मंडल सहायता देता है, उन का स्वागत करता है, उन के सम्मान में भोज आदि देने का प्रबन्ध करता है और उन्हें संसद् के कार्य के अध्ययनार्थ आवश्यक सुविधायें देता है । इन सम्बन्धों का स्वागत दोनों ओर से किया जाता है क्योंकि ऐसे अनौपचारिक मेलजोल से विचार विनिमय के मूल्यवान् अवसर प्राप्त होते हैं।

भारतीय संसदीय संघ (इंडियन पार्लियामेंटरी ऐसोसियेशन) आरम्भ करने का प्रस्ताव

अब एक यह प्रस्ताव विचाराधीन है कि एक भारतीय संसदीय संघ बनाया जाय । इस विचार पर पहले पहल कई वर्ष पूर्व अध्यक्षों के सम्मेलन में चर्चा हुई थी कि एक ऐसी संस्था भी होनी चाहिये जिस में विभिन्न राज्यों की विधान-सभाओं के सदस्य तथा संसद् के सदस्य आपस में मिलें तथा वहां पर शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, आन्तरिक व्यापार तथा वाणिज्य, खाद्य तथा कृषि, स्थानीय स्वायत्त शासन आदि विषयों के बारे में अपने अपने राज्यों की नीतियों के बारे में बातचीत हो जिससे ऐसे प्रश्नों के बारे में समान नीतियां बनाने में सहायता मिले और पारस्परिक मेल जोल से राष्ट्रीय एकता बनाने में लाभ पहुंचे । ऐसा एक संघ बनाने के प्रश्न पर औपचारिक तथा अनौपचारिक रूप में अध्यक्षों के कई सम्मेलनों में विचार किया गया और अध्यक्षों ने अपनी विधान सभाओं के सदस्यों से भी बातचीत की । सैद्धान्तिक दृष्टि से इस योजना को भारतीय संसदीय मंडल तथा विभिन्न विधान-सभाओं ने अनुमोदित कर दिया है और अब इसे क्रियान्वित किया जाना है । उक्त संघ के संविधान का मसौदा भी तैयार किया जा रहा है । संसद् तथा राज्यों की विधान-सभाओं के सदस्य वर्ष में एक बार मिला करेंगे और पारस्परिक हित के प्रश्नों पर विचार किया करेंगे । बैठक की कार्यावलि पहले तैयार की जाया करेगी । प्रत्येक वर्ष सम्मेलन विभिन्न राज्यों में हुआ करेगा । यह सब इस उद्देश्य से किया जा रहा है ताकि विधान-सभाओं, के जिन का देश के प्रशासन में सब से ऊंचा स्थान है, सदस्य आपस में मिलें और देश की एकता बढ़े । इस से उन्हें देश के विभिन्न भागों की समस्याओं का भी उचित ज्ञान होगा और उन समस्याओं पर वह अपने अनुभव का प्रयोग भी कर सकेंगे । इस प्रकार ऐसी संस्था में देश के विभिन्न भागों की विधान-सभाओं के सदस्यों के बीच विचार-विनिमय होना संभव हो सकेगा ।

संसदीय प्रतिनिधिमंडल

जब प्रतिनिधिमंडल विदेशों से वापस आते हैं तब वे उन देशों के बारे में अपने विचारों तथा अनुभवों का एक प्रतिवेदन देते हैं । ऐसे प्रतिवेदन इस मंडल के तत्वावधान में प्रकाशित होते हैं । प्रतिनिधिमंडल के प्रत्येक सदस्य को अपने विचार लिखने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है ताकि पाठक स्वयं अपना दृष्टिकोण बना सकें और विदेशों के विभिन्न पहलुओं से परिचित हो

सकें। समकालिक अभिलेखों के रूप में यह प्रतिवेदन बड़े बहुमूल्य हैं। इनको बिक्री के लिये सामान्यतया नहीं रखा जाता और इसका कारण यह है कि सदस्यों को अपने विचार स्वतंत्रता से प्रकट करने का अवसर दिया जाता है। इन्हें मंडल के अन्य सदस्यों तथा उन संसद् सदस्यों में परिचालित किया जाता है जो मंडल के सदस्य नहीं हैं। प्रतिनिधिमंडलों द्वारा प्रतिवेदन इसलिये दिये जाते हैं ताकि उससे हमें किसी देश की सामान्य स्थिति का परिचय मिल सके। सदस्यों द्वारा प्राप्त की गई जानकारी से उन देशों द्वारा विभिन्न बातों में की गई प्रगति का अनुमान लगाया जाता है।

मंडल अन्त:संसदीय संघ के सम्मेलनों में भी शिष्टमंडल भेजता है जोकि प्रतिवर्ष विभिन्न देशों की राजधानियों में होते हैं।

अन्त:संसदीय संघ

अन्त:संसदीय संघ विभिन्न राष्ट्रीय संसदों के संसदीय मंडलों की एक संस्था है जिस का उद्देश्य विभिन्न संसदों के सदस्यों में व्यक्तिगत मेलजोल बढ़ाना है। ऐसा संघ बनाये जाने के प्रस्ताव को क्रियात्मक रूप देने का सब से पहला कदम १८८८ में पेरिस में ब्रिटिश संसद् के एक सदस्य, विलियम रेंडेलफ क्रेमर, तथा फ्रेंच चेम्बर के एक डेप्युटी फ्रेडरिक पैसी द्वारा संगठित एक बैठक में उठाया गया था। उन के प्रयत्नों के फलस्वरूप ९ संसदों के सदस्यों का प्रथम अन्त:संसदीय सम्मेलन ३० जून, १८८९ को पेरिस में हुआ था जिसमें फ्रांस, इंगलैंड, बेलजियम, डेनमार्क, हंगरी, इटली, लाइबेरिया, स्पेन, तथा अमरीका के सदस्यों ने भाग लिया। तब से यह संघ दिन प्रति दिन प्रगति करता रहा है और अब इस में ४६ देश सम्मिलित हैं। उन में सभी छोटे तथा बड़े देश शामिल हैं।

संघ के सदस्य हैं: अमेरिका, अरजेन्टाइना, आस्ट्रिया, अल्बानिया, बेलजियम, ब्राजील, बल्गेरिया, बर्मा, लंका, डेन्मार्क, फिनलैंड, फ्रांस, जर्मनी, इंगलैंड, यूनान, हेटी, हंगरी, आइसलैंड, भारत, इंडोनेशिया, ईरान, इराक, आयरलैंड, इजराइल, इटली, जापान, लेबनान, लाइबेरिया, लक्समबर्ग, मोनाको, नीदरलैंड्स, नार्वे, पाकिस्तान, फिलिपाइन्स, पोलैण्ड, रूमानिया, स्पेन, सूडान, स्वीडन, स्विटजरलैंड, सीरिया, चेकोस्लोवाकिया, थाईलैंड, तुर्की, सोवियत रूस, यूगोस्लाविया, आस्ट्रेलिया तथा लाओस। अब तक संघ के कुल ४५ सम्मेलन हुए हैं—और गत सम्मेलन १९५६ में बैंकाक में हुआ था।

उद्देश्य

इस संघ का उद्देश्य राष्ट्रीय मंडलों में गठित सभी संसदों के सदस्यों में व्यक्तिगत सम्बन्धों की वृद्धि करना और इन्हें इस सम्मिलित कार्य के लिये इस प्रकार संगठित करना है जिससे वे लोकतन्त्रात्मक प्रथाओं का विकास करने तथा उनको पक्की तरह से स्थापित करने और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सहयोग के कार्य को बढ़ाने के लिये, विशेषतया राष्ट्रों के एक सार्वदेशिक संगठन द्वारा अपने-अपने राज्यों में पूर्ण सहयोग प्राप्त कर सकें और उसे बनाये रखें। संघ ऐसे समस्त अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों का अध्ययन करता है और उन के हल ढूंढ़ता है जो कि संसदीय कार्य से हल होने योग्य हों, और संसदीय संस्थाओं के काम में सुधार करने तथा उन की महानता बढ़ाने के लिये भी उन्हें सुझाव देता है।

संविधान

संघ एक अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् द्वारा संचालित किया जाता है। इस परिषद् में प्रत्येक राष्ट्रीय मंडल के दो सदस्य होते हैं। परिषद् तीन वर्ष की अवधि के लिये अपना प्रधान चुनती है। प्रधान की पदावधि दो वर्ष तक और बढ़ायी जा सकती है। चुनाव वार्षिक सम्मेलन में होता है।

कार्य-कलाप

परिषद् के कार्य ये हैं: वार्षिक सम्मेलन बुलाना, उस के लिये कार्यावलि निर्धारित करना, अध्ययन समितियां बनाना, प्रधान तथा उपप्रधान तथा कार्यकारी समिति के सदस्यों के नामों का प्रस्ताव करना, सम्मेलन के लिये स्थान निर्धारित करना, संघ का मुख्य सचिव नियुक्त करना तथा संघ के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये आवश्यक कार्य करना।

संघ का प्रशासनिक कार्य कार्यकारी समिति करती है और उन अधिकारों का प्रयोग करती है जो कि परिषद् द्वारा विधियों के अनुसार उन्हें प्रत्यायोजित किये जाते हैं। समिति में विभिन्न मंडलों के ९ सदस्य होते हैं। परिषद् का प्रधान कार्यकारी समिति का पदेन सदस्य तथा प्रधान होता है। अन्य आठ सदस्य सम्मेलन द्वारा परिषद् में से चुने जाते हैं, चुनते समय उम्मीदवार द्वारा या उसके मंडल द्वारा संघ के लिये किये गये कार्य पर तथा भौगोलिक प्रतिनिधित्व देने के मामले पर ध्यान रखा जाता है। समिति के सदस्य चार वर्ष के लिये चुने जाते हैं और फिर दो वर्ष तक उन्हें दोबारा नहीं चुना जा सकता और उनके स्थान पर दूसरे मंडलों के सदस्य रखे जाते हैं।

संघ के केन्द्रीय दफ्तर को अन्तःसंसदीय ब्यूरो कहते हैं जो जेनेवा में स्थित है। इस का संचालन एक वैतनिक मुख्य-सचिव करता है जिसे अन्तःसंसदीय परिषद् नियुक्त करती है। कार्यकारी समिति की हिदायतों के अनुसार ब्यूरो सम्मेलन के या परिषद् के निर्णयों को क्रियान्वित करता है। अन्तःसंसदीय ब्यूरो मंडलों के साथ पत्र व्यवहार करता है तथा प्रकाशन तथा प्रतिवेदन निकालता है और संघ में विचार किये जाने वाले विषयों के बारे में प्रारम्भिक ज्ञापन भी तैयार करता है।

सम्मेलन

सामान्यतया संघ का सम्मेलन एक वर्ष में एक ही बार होता है और सम्मेलन विभिन्न देशों की राजधानियों में होता है। सम्मेलन के कार्य के लिये वहां का संसद् भवन उन्हें दे दिया जाता है। जिस देश में सम्मेलन होता है वहां का अन्तःसंसदीय मंडल सम्मेलन के संगठन का जिम्मेदार होता है।

सम्मेलन में भाग लेने वाले शिष्टमण्डलों के सदस्यों की संख्या, जो विधि द्वारा निश्चित है, उस देश की जनसंख्या के अनुपात में होती है जहां का अन्तःसंसदीय मण्डल अपने प्रतिनिधि भेजता है। शिष्टमंडल की संख्या इस पर भी निर्भर करती है कि उस देश का अन्तःसंसदीय मंडल कितना बड़ा या छोटा है। इस प्रकार अन्तःसंसदीय सम्मेलन में व्यक्त किये गये विचार संघ के मंडलों के सदस्यों की संसदीय राय का प्रतिनिधित्व करते हैं। सम्मेलनों में मत मिश्रित आधार पर दिये जाते हैं जिनमें जनसंख्या का ज्यादा ध्यान रखा जाता है।

प्रत्येक सम्मेलन का आरम्भ मुख्य-सचिव द्वारा उपस्थापित प्रतिवेदन पर सामान्य वाद-विवाद से होता है। प्रतिवेदन का एक भाग विश्व की सामान्य राजनैतिक स्थिति के सम्बन्ध में होता है।

अध्ययन समितियां

इन सम्मेलनों में प्रस्तुत किये जाने वाले संकल्प स्थायी अध्ययन समितियों द्वारा तैयार किये जाते हैं जिनमें प्रत्येक मंडल का एक प्रतिनिधि होता है। इस समय निम्न सात स्थायी समितियां इन कामों में लगी हुई हैं; (क) राजनैतिक तथा संगठन के मामले, (ख) न्याय संबंधी प्रश्न (ग) आर्थिक तथा वित्तीय विषय, (घ) अ-स्वायत्त क्षेत्रों सम्बन्धी तथा नस्ली या जातीय प्रश्न, (ङ) शस्त्रों में कमी का प्रश्न (च) सामाजिक और मानवीय प्रश्न तथा (छ) बौद्धिक संबंध।

सामान्यतया जो प्रश्न सम्मेलन में चर्चा के लिये चुना जाता है उस पर अध्ययन करने के लिये पहले एक उपसमिति बनाई जाती है और उसे आरम्भिक संकल्प का मसौदा तैयार करना पड़ता है। तब इस पर विशेष अधिवेशन में एक पूरी समिति अच्छी तरह विचार करती है जिस से उस प्रश्न का विशिष्ट सम्बन्ध होता है। प्रस्तावित संकल्पों के शब्दों पर जब एक बार निर्णय हो जाता है, तब उन पर अनुमोदन प्राप्त करने के लिये उन्हें परिषद् के सामने पेश किया जाता है और उसके बाद रिपोर्ट तैयार करने वाले अधिकारियों को नियुक्त किया जाता है जो उन संकल्पों को इकट्ठा करते हैं और साथ ही सम्मेलन को एक रिपोर्ट देते हैं। ये सब दस्तावेज एक "आरम्भिक दस्तावेज" नामक प्रकाशन में प्रकाशित किये जाते हैं। इस प्रक्रिया से संघ का सम्पूर्ण अधिवेशन सावधानी से तैयार किये हुए प्रस्तावों पर चर्चा कर सकता है। यदि ये प्रस्ताव स्वीकृत हो जाते हैं तो उन का वही महत्व होता है जो किसी प्रतिनिधि संसदीय संस्था द्वारा व्यक्त की गई राय का होता है।

1057 LS—9.

परिषद् तथा अध्ययन समिति की बैठकें

परिषद् तथा अध्ययन समिति की बैठकें वसन्त ऋतु में, अर्थात् वार्षिक सम्मेलन के छः महीने पहले, होती हैं। ये बैठकें निमंत्रण देने वाले देश की राजधानी में या अन्य किसी स्थान पर, जिसे वह देश ठीक समझे, होती हैं। ये बैठकें सम्मेलन का छोटा स्वरूप होती हैं और लगभग सभी देशों के प्रतिनिधि इनमें उपस्थित होते हैं। अध्ययन समितियां तथ्य एकत्रित करती हैं, विभिन्न दृष्टिकोणों का ब्यौरा रखती हैं और उपयुक्त भाषा में उन सब बातों को इकट्ठा करती हैं, जिन पर सदस्यों का एकमत हो। साधारणतया ये बैठकें केवल कार्य निष्पादन के लिये होती हैं किन्तु सदस्यगण अनौपचारिक बैठकों, समारोहों तथा आपसी बातचीत में महत्वपूर्ण मामलों पर वाद विवाद करते हैं और दुनिया के विभिन्न भागों में होने वाली घटनाओं से अपने को अवगत रखते हैं।

जिन लोगों ने परिषद् या अध्ययन समिति की बैठक में भाग लिया है उन्होंने अपने देश में उन के महत्व पर जोर दिया है। वहां का वातावरण समानता का होता है और एक दूसरे देश का दृष्टिकोण का सम्मान किया जाता है। चूंकि अन्तःसंसदीय संघ पर कोई कार्यकारी उत्तरदायित्व नहीं होता और न वहां सरकारों द्वारा शिष्टमंडल भेजे जाते हैं इस कारण वहा के वाद-विवाद में ऐसा कोई खिंचाव या तनाव नहीं होता जैसा कि संयुक्त राष्ट्र संघ में देखने में आता है। वहां सदस्यों में बन्धुत्व की भावना आजाती है और वे अज्ञात रूप से यही समझने लगते हैं कि वे एक ही परिवार के सदस्य हैं चाहे वे विभिन्न देशों के हों। विभिन्न शिष्टमंडलों के सदस्यों में बहुत मेल-जोल हो जाता है और सामान्यतया कई लोगों की व्यक्तिगत मित्रता भी हो जाती है।

विशेषताएं

अन्तःसंसदीय संघ के कार्य की एक विशेष बात यह है कि शिष्टमंडल सरकारी हिदायतों से बद्ध नहीं होते। शिष्टमंडलों में राष्ट्रीय संसदों के विभिन्न दलों के सदस्य होते हैं और इस प्रकार उन दलों में विरोधी तथा सरकारी दलों के सदस्यों का भी प्रतिनिधित्व होता है। प्रत्येक सदस्य अपनी राय दे सकता है और एक ही प्रतिनिधिमंडल की दो या इससे अधिक रायें हो सकती हैं। मतदान देने के समय भी सदस्यों को इच्छानुसार मत देने की स्वतन्त्रता होती है और कोई किसी प्रकार की सरकारी हिदायत नहीं दी जाती।

गैर-सरकारी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में अन्तःसंसदीय संघ का एक विशिष्ट स्थान है। समस्त गैर-सरकारी संगठनों में यह संगठन सरकार के निकटम है और अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों के लागू करने तथा उनकी पुष्टि करने के मामलों में सरकार पर प्रभाव डाल सकता है। यह संगठन विभिन्न देशों के सम्बन्धों के मामलों में सरकारों की नीति को भी काफी प्रभावित करता है।

प्रत्येक राष्ट्रीय मंडल अन्तःसंसदीय संघ के सम्मेलन में स्वीकृत ऐसे संकल्पों के बारे में अपनी संसद् को सूचित करता है जिन पर संसदीय अथवा सरकारी कार्यवाही की आवश्यकता हो और फिर उस पर की गई कार्यवाही की सूचना संघ के कार्यालय को देता है।

भारत तथा अन्तःसंसदीय संघ

अन्तःसंसदीय संघ के वार्षिक सम्मेलनों में भारतीय संसदीय मंडल १९४९ से प्रतिनिधिमंडल भेज रहा है। १९४८ के सम्मेलन में भारत ने औपचारिक रूप से अपना प्रतिनिधि मंडल नहीं भेजा था, क्योंकि उस समय भारत संघ का सदस्य नहीं बना था। केवल दो पर्यवेक्षक, डा० केसकर तथा आर० आर० दिवाकर भेजे गये थे। १९४९ से स्टाकहोम (१९४९), डबलिन (१९५०), इस्तम्बूल (१९५१), बर्न (१९५२), वाशिंगटन (१९५३), वियना (१९५४), हैलसिंकी (१९५५), तथा बेंकाक (१९५६), में हुए सम्मेलनों में औपचारिक प्रतिनिधि मंडल भेजे गये हैं। गत वर्ष से भारतीय मंडल भी परिषद् तथा अध्ययन समितियों में भी अपने प्रतिनिधि भेजता रहा है।

भारत के अन्तःसंसदीय संघ में सम्मिलित होने के तुरन्त पश्चात् १९४९ में स्टाकहोम के सम्मेलन में श्री मोहन लाल गौतम को संघ की कार्यकारी समिति का सदस्य चुना गया। एशिया का एक महत्वपूर्ण देश होने के नाते यह सम्मान भारत के उपयुक्त ही था। १९५२ के चुनाव के बाद जब श्री गौतम संसद् के सदस्य नहीं रहे तब उन के स्थान पर श्री अ० चं० गुह आये और वह १९५३ तक कार्यकारी समिति के सदस्य रहे।

भारतीय संसदीय मंडल के निमंत्रण पर अन्तर्संसदीय संघ की कार्यकारी समिति का १०१वां सत्र दिसम्बर, १९५५ में दिल्ली में हुआ। संघ के इतिहास में यह बैठक पहली बार एशिया में हुई। कार्यकारी समिति की बैठक में लंका, फिन्लैंड, इराक, इटली, स्विटजरलैंड तथा सोवियत रूस के प्रतिनिधियों ने भाग लिया जो कार्यकारी समिति के सदस्य हैं। इन बैठकों की अध्यक्षता लार्ड स्टैंसगेट ने की जो कि अन्तर्संसदीय संघ की कार्यकारी समिति तथा परिषद् के अध्यक्ष हैं। कार्यकारी समिति की बैठक से पहले दो दिन तक एशिया के मंडलों तथा अन्त:संसदीय व्यूरो के प्रतिनिधियों में अनौपचारिक बातचीत हुई। बर्मा, लंका, भारत, पाकिस्तान तथा थाईलैंड के राष्ट्रमंडलो के प्रतिनिधियों ने सम्मेलन में भाग लिया। इस अनौपचारिक बातचीत का प्रयोजन ऐशियां में अन्त:संसदीय सहयोग को बढ़ाने के साधनों पर विचार करना था। एशियाई मंडल की अनौपचारिक बैठक में व्यक्त की गई राय के अनुसार बैंकाक में भारतीय संसदीय सम्मेलन के नेता डा० एच० एन० कुंजरू ने राजनैतिक तथा संगठन संबंधी समिति के सामने यह सुझाव दिया कि अन्त:संसदीय संघ के तत्वाधान में एशियाई-अफ्रीकी प्रादेशिक सम्मेलन भी होने चाहियें। यह मामला अन्त:संसदीय संघ की कार्यकारी समिति को सौंपा गया। राजनैतिक समिति में डा० कुंजरू ने जो कहा था, कार्यकारी समिति ने उस पर विचार किया और राष्ट्रीय एशियाई मंडल द्वारा व्यक्त की गई इस इच्छा का स्वागत किया कि उन के क्षेत्र में इस मंडल के काम से जनता को अधिकाधिक परिचित कराया जाय, जिस से राष्ट्रीयता की कड़ी और भी मजबूत हो। अब इस प्रश्न पर अप्रैल, १९५७ में अन्त:संसदीय संघ की अगली बैठक में विचार होगा।

बैठक में हुई आर्थिक तथा वित्त समिति की बैठक में भारतीय प्रतिनिधि श्री बी० सी० घोष, संसद् सदस्य, ने "अविकसित देशों में योजनायें बनाने की समस्याओं सम्बन्धी प्रणाली नामक" विषय को समिति के अगले सत्र की कार्यवाही में सम्मिलित करने का सुझाव दिया। समिति ने सुझाव मान लिया और इस विषय को कार्यावलि में सम्मिलित कर लिया गया है। अन्तर्संसदीय संघ की कार्यकारी समिति ने मूल वस्तुओं के स्थानीयकरण की समस्या पर विचार करने के लिये पांच सदस्यों की एक उपसमिति बनाने का निर्णय बैंकाक में किया। इस उपसमिति की बैठक १९५७ में होगी और इस समिति में भारतीय मंडल को एक प्रतिनिधि भेजने का निमंत्रण दिया गया है।

१९५५ में डबरोवनीक में श्री रघुरामैया ने भारतीय तथा सूडानी मंडलों की ओर से निम्न संकल्प पेश किया जो समिति ने ७ अप्रैल, १९५६ को स्वीकार किया :—

"अन्त:संसदीय संघ का ४५वां सम्मेलन, यह विश्वास करते हुए कि स्वराज्य प्रत्येक राष्ट्र का जन्म-सिद्ध अधिकार है, इस बात पर ध्यान देते हुए कि जब कोई राष्ट्र यह समझे कि उसके द्वारा प्रशासित क्षेत्र अभी तक स्वराज्य प्राप्त करने के योग्य नहीं हुआ और अभी अन्त:कालीन अवधि का रखना वांछनीय है, यह सिफारिश करता है, कि संबंधित पक्षों में समझौता न होने पर स्वराज्य प्राप्त करने की योग्यता के प्रश्न को संयुक्त राष्ट्र के सुपुर्द कर देना चाहिये;

और यह भी सिफारिश करता है कि ऐसे मामलों में जिन में संयुक्त राष्ट्र संघ का यह विचार हो कि एक राष्ट्र अभी स्वराज्य प्राप्त करने के लिये तैयार नहीं है, वह यह बताये कि किस समय तक तथा किस तरीके से सम्बद्ध लोग उसके योग्य हो सकेंगे और प्रशासन करने वाला राष्ट्र प्रशासित देश के स्वराज्य प्राप्त करने तक इस लक्ष्य की ओर होने वाली प्रगति के बारे में समय समय पर संयुक्त राष्ट्र संघ को प्रतिवेदन दे।"

इस प्रकार जब से भारत अन्त:संसदीय संघ का सदस्य बना है उस ने संघ के कार्य में उसी समय से बड़ी दिलचस्पी ली है।

राष्ट्रमंडल संसदीय संघ

राष्ट्रीय संसदीय संघ, जैसा कि इस के नाम से पता चलता है उन देशों के विधानमंडलों में बनी शाखाओं का संगठन है जो राष्ट्रमंडल में सम्मिलित हैं। इस संगठन में राष्ट्रमंडल के स्वतन्त्र सदस्य देशों की राष्ट्रीय संसदों की मुख्य शाखायें, वहां की राज्य अथवा प्रान्तीय विधान-सभाओं में बनी राज्य की अथवा प्रान्तों की शाखायें, ऐसे देशों की विधान-सभाओं की सहायक शाखायें जो अभी पूर्ण रूप से स्वायत्तशासी नहीं हैं किन्तु उत्तरदायी सरकार के अधीन हैं तथा राष्ट्रमंडल के अन्य ऐसे भागों की विधान-सभाओं की संवद्ध शाखायें हैं जो कि उत्तरदायी अथवा प्रतिनिधि सरकार के अधीन हैं।

उद्देश्य

संघ का उद्देश्य राष्ट्रमंडल के संसदीय सरकारों वाले देशों में पारस्परिक सहयोग तथा सहकारिता बढ़ाना है और उस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उसका कार्य जानकारी का आदान प्रदान करना तथा सदस्यों के दौरों की व्यवस्था करना है, इन्हीं तरीकों से वह राष्ट्रमंडल से बाहर के देशों के सदस्यों तथा राष्ट्रमंडल के देशों के सदस्यों के बीच सहयोग बढ़ाता है।

राष्ट्रमंडल संसदीय संघ १९११ में आरम्भ हुआ था। इस संस्था का प्रादुर्भाव १९११ में हुआ। सम्राट जार्ज पंचम के सिंहासनारूढ़ होने के अवसर पर हुआ था जब श्री एल० एस० एमरी ने एक सुझाव दिया था। उन्होंने यह विचार पेश किया कि "साम्राज्य के प्रत्येक भाग से तत्रभवान् सम्राट् की स्वामिभक्त प्रजा अपने सदस्यों के प्रतिनिधि मंडलों द्वारा सम्राट के राज गद्दी पर बैठने के अवसर पर उपस्थित हों।" उस समय यह प्रतिनिधि मण्डल वहां एकत्रित हुए और यह संघ (उस समय साम्राज्य संसदीय संघ कहलाता था) बना।

आयोजित सम्मेलन

युद्ध से पहले १९३५ तथा १९३७ में दो बड़े महत्वपूर्ण सम्मेलन हुए। इन दो सम्मेलनों में वैदेशिक कार्यों, प्रतिरक्षा, नौवहन, संचार, व्यापार, वित्त, कृषि, प्रव्रजन तथा संसदीय सरकार के विषयों पर चर्चा हुई। इन सम्मेलनों में राष्ट्रमंडल के विभिन्न भागों (जिन में भारत भी था) के सदस्यों ने भाग लिया जिन की संख्या १९३५ में १५२ तथा १९३७ में १९५ थी।

द्वितीय युद्ध के बाद १९४८ में लन्दन में, १९५० में वैलिंगटन (न्यूजीलैंड) में, १९५२ में ओटावा में तथा १९५४ में नैरोबी में हुए सम्मेलनों में भी उसी प्रकार की बातों पर चर्चा हुई—अन्तिम सम्मेलन में प्रत्यायोजित विधान के विषय पर भी चर्चा हुई। दिल्ली में इस वर्ष होने वाले सम्मेलन में राष्ट्रमंडल के अविकसित देशों की समस्या पर विचार किया जायेगा तथा राष्ट्रमंडल में अंग्रेजी भाषा के महत्व पर भी चर्चा होगी।

सामान्य परिषद्

सामान्य परिषद् के स्थापित होने के समय से उद्देश्य यह हो गया है कि इस सम्मेलन का हर दो वर्ष के बाद आयोजन किया जाये।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद महसूस किया गया और यह समझा गया कि संघ का काम, जिसे पहले इंगलैंड की शाखा करती थी, वास्तव में समस्त संस्था का काम है तथा राष्ट्रमंडल में संवैधानिक परिवर्तनों के बाद यह आवश्यक भी हो गया कि सम्पर्क के लिये एक केन्द्रीय संगठन स्थापित हो।

अक्तूबर, १९४८ के राष्ट्रमंडल संसदीय सम्मेलन में इस बात पर सहमति प्रकट की गई कि एक सामान्य परिषद् बनाई जाये तथा संस्था का नाम "साम्राज्य संसदीय संघ" के बदले "राष्ट्रमंडल संसदीय संघ" रखा जाये।

परिषद् का मुख्यालय लन्दन में है। यह कार्यालय विविध प्रकाशन निकालता है, सम्मेलनों का आयोजन करता है, और राष्ट्रमंडल के मामलों पर, समस्त शाखाओं के सदस्यों के लिये जानकारी उपलब्ध कराता है और गवेषणा की व्यवस्था करता है।

राष्ट्रमंडल संसदीय संघ के सदस्यों को प्राप्त सुविधाएं तथा विशेषाधिकार

संघ के सदस्यों को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं :—

(क) **परिचय तथा आतिथ्य :** संघ की शाखा, संवद्ध शाखा या संलग्न मंडल राष्ट्रमंडल के अन्य देशों से आने वाले सदस्यों की आतिथ्य तथा परिचय की सुविधायें

देता है। किसी देश में संघ के सचिव को वहां जाने वाले सदस्य के देश का सचिव दौरे के बारे में सूचना देता है— और फिर उसके स्वागत का प्रबन्ध किया जाता है और यदि वह चाहे तो उसके लिये वैयक्तिक परिचय की व्यवस्था की जाती है।

(ख) **यात्रा की सुविधाएं :** संघ ऐसे देशों में, जहां उसकी शाखाये हैं, अपने सदस्यों की यात्रा के लिये विशेष सुविधायें उपलब्ध कराता है। शाखायें सदस्यों को यात्रा करने के लिये बहुत सी रियायतें देती हैं अर्थात् कहीं कहीं सदस्यों तथा उन के परिवार के लिये निःशुल्क परिवहन की व्यवस्था होती है और कहीं रेलवे का किराया आधा लगता है।

(ग) **संसदीय विशेषाधिकार :** ऐसे देश में जहां संघ की कोई शाखा, संबद्ध शाखा या संलग्न मंडल हो, सदस्यों को विधान मंडलों की गैलरियों, कक्षों, भोजन तथा धूम्रपान के कमरों में जाने तथा वाद विवाद सुनने और संघ के अन्य सदस्यों से मिलने के बारे में प्राथमिकता दी जाती है।

(घ) **विशेष जानकारी :** मुख्य सचिव तथा शाखाओं के सचिव सदस्यों को उन विषयों पर विशेष जानकारी देने का प्रयत्न करते हैं, जिन के बारे में सदस्य अनुसन्धान करना चाहें।

(ङ) **मिलने जुलने को सामान्य सुविधाएं :** संघ के पदाधिकारी आदि सम्बद्ध देशों के संसद सदस्यों को एक दूसरे देश में आनेजाने के लिये चाहे एक सस्दय हो या कई, आवश्यक सुविधायें देते हैं। सामान्य रुचि के विषयों पर पूरी जानकारी देने के लिये भी संघ की पूरी सहायता ली जा सकती है।

(च) **प्रकाशन :** संस्था तीन त्रैमासिक प्रकाशन निकालती है जिनमें नियमित रूप से पूरी पूरी जानकारी दी जाती है: वे प्रकाशन ये हैं। "जरनल आफ पार्लियामेंट्स आफ दी कामन्वैल्थ," "रिपोर्ट आन फारेन अफेयर्स", तथा "समरी आफ दी कांग्रेशनल प्रोसीडिंग्स, यू० एस० ए०"। "जरनल" में कामन्वैल्थ की विभिन्न संसदों के तीन महीने के वाद-विवादों का सारांश, सांविधानिक परिवर्तन तथा अन्य ऐसी बातों दी जाती हैं, जो सदस्यों के लिये लाभदायक हों। "रिपोर्ट ऑन फारेन अफेयर्स" में सम्बद्ध देशों में होने वाली मुख्य घटनाओं के बारे में विशिष्ट टिप्पण दिये जाते हैं। "समरी आफ कांग्रेशनल प्रोसीडिंग्ज़" में, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, अमेरिका की कांग्रेस के वाद-विवाद का सारांश होता है जो कामन्वैल्थ के लिये बड़ा रुचिकर होता है। चूंकि "रिपोर्ट आन फ़ारेन अफेयर्स" तीन महीने से पहले नहीं मिल सकती, इसलिये हाल ही में वैदेशिक कार्यो पर एक मासिक टिप्पण निकाला जाने लगा है जिसे हवाई जहाज के द्वारा उन सदस्यों के पास भेज दिया जाता है जो उसे मंगवाना चाहें। जो सदस्य वैदेशिक मामलों का अध्ययन करते हैं, उन्हें इससे नवीनतम समाचार पता लगते रहते हैं।

उपर्युक्त प्रकाशनों के अतिरिक्त राष्ट्रमंडल संसदीय संघ की सामान्य परिषद्, राष्ट्रमंडल आर्थिक समिति के प्रकाशनों की पर्याप्त प्रतियां प्रत्येक शाखा को भेजती हैं—राष्ट्रमण्डल आर्थिक समिति सरकारी संगठन है जिसे राष्ट्रमंडलीय सरकारों ने १९२५ में स्थापित किया था। समिति की सूचना शाखा द्वारा "राष्ट्रमंडल व्यापार" (कॉमनवैल्थ ट्रेड) पर जो लेख तथा समीक्षा टिप्पण तैयार किये जाते हैं वह बहुत ही उच्च स्तर के होते हैं। दूसरा प्रकाशन सात खंडों का है जिसका नाम "कमौडिटी सीरीज़" है। यह हर वर्ष निकाला जाता है। इसमें विश्व के उत्पादन तथा राष्ट्रमंडलीय देशों में कुछ वस्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा उनकी इन देशों में खपत के बारे में संक्षिप्त और नवीनतम विवरण दिया जाता है।

सम्मेलन

सम्मेलन तथा प्रतिनिधि मंडल : संघ का एक महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्रमंडल संसदीय सम्मेलनों का आयोजन करना है जो दो वर्ष के बाद होते हैं। इन सम्मेलनों में प्रत्येक शाखा के प्रतिनिधि आते हैं और यह सम्मेलन राष्ट्रमंडल के किसी देश की राजधानी में होता है। सम्मेलन के प्रतिनिधि निमन्त्रण देने वाली शाखा के अतिथि होते हैं और निमन्त्रण देने वाली शाखा प्रतिनिधियों के आने जाने का प्रबन्ध भी स्वयं ही करती है। कई बार यह भी होता है कि एक से अधिक शाखा मिल कर निमन्त्रण दें। नई दिल्ली में जो सम्मेलन इस वर्ष दिसम्बर में होगा उसके लिये भारत तथा लंका ने निमंत्रण दिया है। पाकिस्तान से भी बातचीत हो रही है कि क्या वह भी उनके साथ शामिल होने को तैयार है।

जो शाखायें एक दूसरे के निकट हैं और जिनमें कई पारस्परिक रुचि के मामले चर्चा-योग्य होते हैं, वहां ये

शाखायें प्रादेशिक सम्मेलन भी बुलाती हैं। ऐसे सम्मेलन आस्ट्रेलिया, वेस्ट इंडीज, सिंगापुर तथा मलाया संघ में हुए हैं। एक शाखा के प्रतिनिधि राष्ट्रमंडल के दूसरे देश में दौरे भी करते हैं, ताकि उन्हें दूसरे देशों के बारे में जानकारी हो सके। सामान्यतया इन प्रतिनिधियों का स्वागतादि उस देश की शाखा वहां की सरकार की सहायता से करती है और उन प्रतिनिधियों को यात्रा तथा स्थान आदि के लिये कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ता है।

राष्ट्रमंडल में संघ का स्थान : संघ के एक प्रकाशन में उसके काम के बारे में इस प्रकार लिखा गया है : "संघ आज तक के अपने जीवन में किसी विख्यात संकल्प को पारित करने के लिये श्रेय का दावा नहीं करता—किन्तु इस संस्था ने राष्ट्रमंडल के देशों तथा अन्य देशों में विचारों के विकास में एक महान् भाग लिया है। वास्तव में यह संस्था अपने नाम (राष्ट्रमंडल संसदीय संघ) से प्रकट होने वाले अर्थों के महत्व से कुछ अधिक महत्व रखती है। जो सुविधायें यह देती है उनके द्वारा बहुत से सदस्य एक दूसरे देश की समस्याओं को समझ सकते हैं—इस तरीके के बगैर एक सामान्य तरीका निकालना सम्भव नहीं है। ये सदस्य एक दूसरे से परिवार के सदस्यों की भांति बातचीत कर सकते हैं और इस प्रकार उन्हें बहुत कुछ अनुभव हो सकता है। इस अनुभव से वे अपने साथियों तथा अपने निर्वाचन क्षेत्र के लोगों को अपनी संसदीय कार्यवाही के सिलसिले में लाभ पहुंचा सकते हैं। इन तरीकों से समस्त राष्ट्रमंडल में विचारधारा की एक समान पृष्ठ-भूमि तैयार की जा सकती है जिससे अन्तर्राष्ट्रीय संकट के समय लोगों की राय का पता लगाया जा सकता है और उसी के अनुसार कार्यवाही करने के लिये शीघ्र ही आवश्यक कदम उठाये जा सकते हैं।

भारत तथा राष्ट्रमंडल संसदीय संघ

संघ की भारतीय शाखा के प्रतिनिधियों ने लन्दन (१९४८), वैलिंगटन (१९५०) और ओटावा (१९५२), में हुए सम्मेलनों में भाग लिया है और सामान्य परिषद् की भारतीय शाखा के प्रतिनिधियों ने परिषद् की न्यूजीलैण्ड, लंका, कनाडा, इंग्लैण्ड तथा जमाइका में हुई वार्षिक बैठकों में भाग लिया है।

संघ की राज्य शाखायें छः भारतीय राज्यों अर्थात् पश्चिमी बंगाल बम्बई, मद्रास, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश में बनी हैं। ये शाखायें स्वायत्तशासी हैं और इनका सम्बन्ध संघ की सामान्य परिषद् से सीधा है। मुख्य शाखा की भांति ये शाखायें वार्षिक सम्मेलनों तथा परिषद् की बैठकों में अपने प्रतिनिधि सीधे ही भेजती हैं। अभी तक केवल पश्चिमी बंगाल ने ही प्रतिनिधि मंडल भेजे हैं, क्योंकि शेष राज्यों की शाखायें हाल ही में बनी हैं।

राष्ट्रमंडल संसदीय संघ की एक विशेषता यह है कि वहां किसी प्रकार के संकल्प नहीं रखे जाते और न ही कोई निर्णय किये जाते हैं। चर्चा के लिये एक विषय रखा जाता है और सदस्य उस पर अपने विचार प्रकट करते हैं। किस दृष्टिकोण पर अधिक सदस्य सहमत हैं यह बात कार्यवाही को पढ़ कर ही जानी जा सकती है—सम्मेलन में पहुंचे गये निष्कर्षों द्वारा नहीं। यह बात राष्ट्रमंडल की व्यवस्था के अनुकूल ही है कि इन सम्मेलनों में निर्णय नहीं किये जाते, केवल रायें ही मालूम की जाती हैं। इस प्रकार संघ की कोई अध्ययन समितियां नहीं होतीं या विभिन्न देशों की सरकारों द्वारा विचार करने के लिये उसके स्पष्ट निर्णय नहीं होते।

इस संघ की एक और विशेषता यह है कि निमन्त्रण देने वाले एक या कई देश भाग लेने वाले प्रतिनिधियों के लिये जिनकी संख्या १०० से अधिक होती है, सम्मेलन से पहले और बाद में चार या पांच सप्ताह तक की अवधि में दौरों का प्रबन्ध करते हैं। प्रतिनिधियों को निमन्त्रण देने वाला देश अपने खर्च पर इन लोगों को अपने यहां के महत्वपूर्ण स्थानों की सैर कराता है और उन्हें वहां के जीवन के सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, तथा आधुनिक पहलुओं से परिचित कराता है। इन पर्यटनों में विभिन्न सदस्यों को आपस में मिलने जुलने का मौका मिलता है और इसके द्वारा वे अपने देश में महत्वपूर्ण राजनैतिक स्थान रखने वाले नेताओं से पारस्परिक महत्व के बहुत से विषयों पर स्पष्ट रूप से बातचीत और विचार विनिमय कर सकते हैं। इस प्रकार बाहर से आये प्रतिनिधि बिना खर्च के देश के सारे महत्वपूर्ण स्थान देख लेते हैं और निमन्त्रण देने वाले देश को इस बात की तसल्ली रहती है कि ऐसे विख्यात लोग उनके देश के बारे में अपने अच्छे विचार बनायेंगे और अपने देश में सद्भावना तथा मैत्री का सन्देश लोगों तक पहुंचायेंगे। गत सम्मेलनों के अनुभव ने यह स्पष्ट रूप से बता दिया है कि इस प्रकार व्यय किया गया धन व्यर्थ नहीं जाता बल्कि उससे बड़े अच्छे परिणाम निकलते हैं।

संसद् में विधि-निर्माण की प्रक्रिया

एन० सी० नन्दी,

उपसचिव, लोक-सभा सचिवालय ।

अंग्रेजी शब्द-कोष में संसद् (पार्लियामेंट) शब्द का अर्थ बताया गया है—चर्चा के लिये बैठक । इस शब्द की उत्पत्ति "पार्ले" शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—भाषण करना । इसलिये संसद् यानी पार्लियामेंट का अर्थ हुआ तर्क-संगत चर्चा का स्थान ।

अन्य देशों की संसदों की भांति, हमारे देश में भी संसद् उच्चतम विधान मण्डल है । संसद् राष्ट्रपति और राज्य-सभा तथा लोक-सभा से मिल कर बनती है । संविधान के अन्तर्गत, लोक-सभा ही मन्त्रि-परिषद् के प्रति उत्तरदायी होती है । लोक-सभा ही देश का प्रशासन चलाने के लिये रुपया मंजूर करती है और यह मंत्रिमण्डल पर नियंत्रण रखने का एक प्रभावशाली साधन है । लोक-सभा अपने प्रश्नोत्तरों और चर्चाओं के द्वारा कार्यपालिका सरकार की कार्यवाहियों की आलोचना करती है और अविश्वास का प्रस्ताव पारित करके मंत्रिमण्डल को भंग कर सकती है । इसलिये, काफी सीमा तक इस सभा की सर्वोच्चता निर्विवाद है ।

संसद् का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कृत्य है—विधि-निर्माण । संविधान द्वारा वे विषय निश्चित कर दिये गये हैं जिनके सम्बन्ध में संसद् विधि-निर्माण कर सकती है । संघ-विषयों सम्बन्धी विधि-निर्माण के क्षेत्र में संसद् एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न निकाय है । चूंकि हमारा संविधान संघात्मक है, इसलिये राज्य-सूची के क्षेत्र में राज्यों को स्वायत्त शक्तियां प्रदान की गई हैं । जो मामले संघ-सूची में हों और राज्य या समवर्ती सूचियों में भी हों उनके सम्बन्ध में संसद् को ही सर्वोपरि अधिकार रहता है ।

भारत में विधि-निर्माण का कार्य किस प्रकार किया जाता है ? विधेयक, जो किसी वैधानिक प्रस्थापना का मसौदा होता है, किसी मंत्री या किसी गैर-सरकारी सदस्य द्वारा पुरःस्थापित किया जा सकता है । यदि किसी मंत्री द्वारा पुरःस्थापित किया गया हो, तो वह सरकारी विधेयक कहलाता है; और यदि गैर-सरकारी-सदस्य पुरःस्थापित करे, तो उसे गैर-सरकारी सदस्य का विधेयक कहते हैं ।

भारत में गैर-सरकारी विधेयक नाम के विधेयक नहीं होते जैसे कि इंगलैण्ड की कामन्स सभा में होते हैं । इंगलैण्ड में ऐसे विधेयकों को गैर-सरकारी विधेयक कहा जाता है, जो किसी व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों के हित या लाभ के लिये हों, और वे सरकारी नीति से सम्बन्धित विधानों से भिन्न होते हैं । कामन्स सभा में ऐसे विधेयकों के लिये जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सरकारी विधेयकों की प्रक्रिया से नितान्त भिन्न है । भारत के केन्द्रीय विधान-मण्डल में, १९११ में, सर कावसजी जहांगीर को "बैरन" की उपाधि देने के लिये एक विधेयक पारित किया गया था । यदि भारत में भी, इंगलैण्ड की तरह ही गैर-सरकारी विधेयकों की कोई श्रेणी होती, तो हम इस विधेयक को उस श्रेणी में रख सकते थे ।

विभिन्न प्रक्रमों से होकर गुजरने के बाद और राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त कर लेने के बाद विधेयक संसद् का अधिनियम बन जाता है । विधेयक के कई भाग होते हैं । नाम लेकर पुकारने की सुविधा के लिये, प्रत्येक विधेयक को एक संक्षिप्त नाम दिया जाता है, जो विधेयक के शीर्ष पर छपा रहता है और विधेयक के प्रथम खंड में भी उसे सम्मिलित किया जाता है ।

इंगलैण्ड में, इसके विपरीत संक्षिप्त नाम अन्तिम खण्ड में दिया जाता है । संविधान के मामले में हमने इंगलैण्ड के संविधान का अनुकरण किया है । हमारे संविधान के अनुच्छेद ३९३ में उसका संक्षिप्त नाम दिया गया है, और इसके बाद के दो अनुच्छेदों में संविधान के आरम्भ होने और निरसन सम्बन्धी उपबन्ध हैं

इसके अतिरिक्त, विधेयक का एक पूरा नाम भी होता है जो सामान्य रूप से उस विधेयक के प्रयोजनों को बताता है और जिसमें सभा द्वारा स्वीकृत किसी संशोधन के अनुसार आवश्यकता पड़ने पर संशोधन किया जा सकता है।

विधेयक की एक प्रस्तावना भी होती है, जिसमें प्रस्तावित विधान की आवश्यकताओं और उसके अपेक्षित प्रभावों को बताया जाता है। लेकिन, आजकल विधेयकों में सामान्यतः कोई प्रस्तावना नहीं रखी जाती, क्योंकि विधेयक के साथ रहने वाले उद्देश्यों तथा कारणों के व्याख्यात्मक विवरण से ही सामान्यतः उक्त बातों का का काम चल जाता है।

विधेयक का अधिनियमन सूत्र उसके उपबन्धों के पहले एक संक्षिप्त कण्डिका के रूप में होता है। अधिनियमन सूत्र में दिया जाता है कि "संसद् द्वारा भारतीय गणतन्त्र के अमुक वर्ष में इस प्रकार अधिनियमित किया जाये।"

इसके बाद एक क्रम में विधेयक के विभिन्न खण्ड होते हैं, और जिनमें से प्रत्येक के सामने उसका परिचयात्मक शीर्षक दिया जाता है। जो खण्ड बहुत बड़े बड़े होते हैं, उन्हें उपखण्डों में, और उपखण्डों को भी भागों और उपभागों में बांट दिया जाता है।

यदि विधेयक के उपबन्धों के सम्बन्ध में ब्यौरेवार विवरणों की अनुसूचियां भी हों, तो उन्हें विधेयक के अन्त में संलग्न कर दिया जाता है। खण्डों की भांति ही, अनुसूचियां भी विधेयक का अंग मानी जाती हैं और उन्हें भी सभा पारित करती है। वे उद्देश्यों तथा कारणों के विवरण की तरह नहीं होतीं।

प्रत्येक विधेयक के साथ उद्देश्य तथा कारणों का एक विवरण भी रहता है, जिसमें उसे सभा में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का स्पष्टीकरण रहता है, लेकिन उसमें तर्क नहीं दिये जाते।

यदि विधेयक के कोई खण्ड ऐसे हों जिनमें किन्हीं व्ययों का उपबन्ध हो, तो उस विधेयक के साथ एक वित्तीय ज्ञापन भी संलग्न रहना चाहिये, जिसमें बताया गया हो कि उस व्यय को कैसे पूरा किया जायेगा और क्या वह व्यय आवर्ती है अथवा अनावर्ती।

यदि विधेयक में विधायिनी शक्ति के प्रत्यायोजन के प्रस्ताव हों तो उसके साथ भी एक ज्ञापन होना चाहिये, जिसमें उन प्रस्तावों की व्याख्या की गई हो और उनके क्षेत्राधिकार की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए बताया गया हो कि वे अधिकार सामान्य प्रकार के हैं या असमान्य प्रकार के।

सभा के सदस्य ही विधेयक को पुरःस्थापित कर सकते हैं। हमारे संविधान में मंत्रियों को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वे दोनों सभाओं में भाषण दे सकते हैं और अपना कार्य कर सकते हैं, पर वे मतदान केवल उसी सभा में कर सकेंगे जिस सभा के वे सदस्य हैं। मंत्री संसद् की किसी भी सभा में विधेयक को पुरःस्थापित कर सकते हैं।

गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों के लिए एक महीने की पूर्व-सूचना की अवधि रखी गई है। पर अध्यक्ष यदि यह समझे कि अमुक विधान आवश्यक और अविलम्बनीय है तो, वह, अपने स्वविवेक से, इस अवधि को घटा भी सकता है।

गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों की परीक्षा, छानबीन और उन्हें उचित रूप में रखने का कार्य लोकसभा सचिवालय करता है।

जब कोई विधेयक पुरःस्थापित हो जाता है तो उसे सरकारी गजट में प्रकाशित किया जाता है। पर, अध्यक्ष की अनुमति से, किसी विधेयक को उसके पुरःस्थापित होने के पूर्व भी गज़ट में प्रकाशित किया जा सकता है। यदि सभा का सत्र न हो रहा हो और सरकार उस अन्तःकाल में ही किसी महत्वपूर्ण विधान के सम्बन्ध में लोकमत जानना चाहती हो, तो वह अध्यक्ष से अनुरोध कर सकती है कि उस विधेयक को उसके पुरःस्थापित होने से पहले ही गज़ट में प्रकाशित कर दिया जाय और समुचित मामलों में अध्यक्ष इसकी अनुमति दे देता है।

विधेयक के विभिन्न प्रक्रम

विधेयक को, चाहे वह सरकारी हो या गैर-सरकारी सदस्य का, विभिन्न प्रक्रमों से होकर गुज़रना पड़ता है। पहले प्रक्रम को पुरःस्थापन कहते हैं। सदस्य को विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुमति मांगनी पड़ती है। सभा की अनुमति मिलने पर ही, विधेयक को

पुरःस्थापित किया जाता है । यदि कोई विधेयक पहले ही गज़ट में प्रकाशित हो चुका हो, तो उसे पुरःस्थापित करने के लिये अनुमति नहीं मांगनी पड़ती और उसे सीधे पुरः-स्थापित कर दिया जाता है । इस प्रक्रम को विधेयक का प्रथम वाचन कहते हैं ।

इंगलैण्ड में, कोई भी सदस्य औपचारिक रूप से पूर्व सूचना देने के बाद विधेयक को प्रस्तुत कर सकता है । फिर, जब उचित समय पर अध्यक्ष उस सदस्य से विधेयक प्रस्तुत करने के लिये कहता है, तब वह सदस्य सभा-पटल पर अपने 'विधेयक की अनुकृति'* रखता है, जिसमें विधेयक का नाम तथा उस सदस्य का और विधेयक के समर्थकों का नाम रहता है । सभा का 'क्लर्क'† विधेयक का नाम पढ़ कर सुनाता है और यही उसका प्रथम वाचन मान लिया जाता है । इस प्रकार, इंगलैण्ड की कामन्स सभा में प्रथम वाचन केवल एक औपचारिकता ही रह गया है ।

इसके पश्चात् कामन्स सभा उसके मुद्रण के लिये, औपचारिक रूप में आदेश देती है, और उसके द्वितीय वाचन के लिये एक तिथि नियत कर दी जाती है । बाद में, विधेयक के द्वितीय वाचन का प्रस्ताव किये जाने पर, केवल सामान्य सिद्धान्तों पर, उसके ब्योरों को छोड़ कर, चर्चा करने का अवसर दिया जाता है । यदि सभा उन सिद्धान्तों का अनुमोदन कर देती है, तो उसे विधेयक का द्वितीय वाचन मान लिया जाता है ।

कामन्स सभा में सभी विधेयकों को, द्वितीय वाचन के बाद, समिति के प्रक्रम से होकर गुजरना पड़ता है । प्रत्येक विधेयक को स्थायी समिति में अवश्य भेजा जाता है और महत्वपूर्ण विधेयकों को सम्पूर्ण सभा की समिति को भी सौंप दिया जाता है । इस सम्पूर्ण सभा की समिति की बैठक में अध्यक्ष पीठासीन नहीं होता । उसका कार्य-संचालन एक सभापति करता है ।

इस के बाद, प्रतिवेदन का प्रक्रम होता है । इंगलैण्ड की कामन्स सभा में, समिति द्वारा प्रतिवेदित विधेयकों पर सभा में पुनः ब्यौरेवार विचार किया जाता है । इस अवस्था पर, अध्यक्ष को संशोधनों को छांटने का अधिकार होता है । वह उन संशोधनों पर चर्चा की अनुमति नहीं देता जिन पर समिति में विचार किया जा चुका होता है ।

अन्त में, तृतीय वाचन का प्रक्रम होता है, जो कि वहां भी सामान्यतः वैसा ही है जैसा कि हमारे देश में है । कामन्स सभा में तृतीय वाचन के समय केवल शाब्दिक संशोधन ही प्रस्तुत किये जा सकते हैं । यदि विधेयक में कोई महत्वपूर्ण संशोधन करना आवश्यक हो, तो तृतीय वाचन के क्रम को भंग करके, उस विधेयक को फिर से समिति को सौंपना पड़ता है ।

भारत में, यदि किसी विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुमति के प्रस्ताव का विरोध किया जाये, तो अध्यक्ष, अपने स्वविवेक से प्रस्ताव करने वाले सदस्य को तथा प्रस्ताव का विरोध करने वाले सदस्य को एक संक्षिप्त व्याख्यात्मक वक्तव्य देने की अनुमति दे सकता है । तत्पश्चात्, बिना किसी अग्रेतर वाद-विवाद के वह प्रश्न को सभा के सामने मतदान के लिये रख सकता है । इस प्रक्रम पर कोई सदस्य यह बात भी उठा सकता है कि विधेयक एक ऐसे विधान का सूत्रपात करता है जो सभा की वैधानिक क्षमता के बाहर है ।

हमारी संसद् में, द्वितीय वाचन में विधेयक पर विचार होता है; इसे दो प्रक्रमों में विभक्त किया जा सकता है । प्रथम प्रक्रम में विधेयक पर सामान्य चर्चा होती है, जिसमें विधेयक के सिद्धान्त पर चर्चा होती है । इस प्रक्रम पर सभा को अधिकार होता है । इंगलैण्ड की भांति हमारे यहां अनिवार्य नहीं है कि वह विधेयक को सभा की प्रवर समिति को या दोनों सभाओं की संयुक्त समिति को सौंप दे या उस पर राय जानने के लिये उसे परिचालित करे या सीधे उस पर विचार आरम्भ करे ।

प्रवर समिति विधेयक पर खण्डवार विचार ठीक उसी तरह करती है जैसे सभा करती है । प्रवर समिति के सदस्य विभिन्न खण्डों के संशोधनों का प्रस्ताव कर सकते हैं । प्रवर समिति उन संस्थाओं, सार्वजनिक निकायों तथा विशेषज्ञों का साक्ष्य भी ले सकती है जो विधान में दिल-चस्पी रखते हों । इस प्रकार विधेयक पर विचार कर लेने के बाद प्रवर समिति अपना प्रतिवेदन सभा के समक्ष

---

* Dummy Bill

† Clerk-at-the-Table.

1057 LS—10.

प्रस्तुत करती है। समिति की ओर से, सभापति उस प्रतिवेदन पर हस्ताक्षर करता है। कुछ समय पहले, प्रवर समिति के सभी सदस्य प्रतिवेदन पर हस्ताक्षर किया करते थे।

यदि किसी विधेयक को, उस पर राय जानने के लिये, परिचालित किया जाता है, तो इस प्रकार की रायें राज्य सरकारों द्वारा प्राप्त की जाती हैं।

यदि किसी विधेयक को, उस पर राय जानने के लिये परिचालित कर दिया गया हो तो, अगला प्रस्ताव उस विधेयक को प्रवर समिति को सौंपने का ही प्रस्ताव होना चाहिये। ऐसी अवस्था में विधेयक पर विचार आरम्भ करने का प्रस्ताव प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

द्वितीय वाचन का दूसरा प्रक्रम तब आरम्भ होता है जब विधेयक के बारे में प्रवर समिति का प्रतिवेदन प्राप्त हो जाता है या जब यह तय हो जाता है कि विधेयक को प्रवर या संयुक्त समिति को सौंपे बिना उस पर सीधे विचार किया जाये। इस प्रक्रम पर विधेयक पर खण्डवार विचार होता है। विधेयक के प्रत्येक खण्ड पर चर्चा होती है और खण्डों के संशोधन प्रस्तुत किये जाते हैं। प्रत्येक खण्ड और उसके प्रत्येक संशोधन को सभा के सामने मतदान के लिये रखा जाता है। यदि संशोधन, उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत द्वारा स्वीकृत हो जाते हैं, तो वे विधेयक के अंग बन जाते हैं। जब खण्डों, अनुसूचियों, अधिनियमन सूत्र तथा विधेयक के संक्षिप्त नाम पर मतदान हो जाता है और उन्हें निबटा दिया जाता है तब द्वितीय वाचन को समाप्त समझा जाता है।

तत्पश्चात् भारसाधक सदस्य विधेयक के तृतीय वाचन का प्रस्ताव कर सकता है। इस प्रक्रम में, वाद-विवाद को, विधेयक के ब्यौरे का, आवश्यकता से अधिक उल्लेख न करते हुये, या तो विधेयक के समर्थन या अस्वीकृति के तर्कों तक ही सीमित रखा जाता है। सभा सामान्य तौर पर विधेयक के समर्थन या उसके विरोध की चर्चा कर सकती है और ऐसा कोई भी संशोधन प्रस्तुत नहीं किया जा सकता जो विधेयक पर विचार करने के समय किये गये किसी संशोधन से आनुषंगिक न हो अथवा औपचारिक या शाब्दिक न हो।

किसी सामान्य विधेयक को पारित करने के लिये उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों का साधारण बहुमत आवश्यक होता है। पर, संविधान में संशोधन करने वाले विधेयक की स्थिति में सभा की समस्त सदस्य संख्या का बहुमत तथा उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों का कम-से-कम दो-तिहाई बहुमत होना अनिवार्य है।

विधेयक को पारित करने के बाद, दूसरी सभा में भेज दिया जाता है, और उस सभा में भी उस पर लोक-सभा की तरह ही विचार किया जाता है। जब कोई विधेयक दोनों सभाओं द्वारा पारित हो जाता है, तो वह सभा, जिसके पास अन्त में वह विधेयक रहता है राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त करती है। राष्ट्रपति किसी विधेयक पर अपनी अनुमति दे सकता है, या अपनी अनुमति रोक सकता है या वह किसी विधेयक को अपनी सिफारिश के साथ वापस लौटा सकता है। यदि दोनों सभायें विधेयक को दोबारा, राष्ट्रपति द्वारा की गयी सिफारिशों के बिना या उसके सहित पारित कर देती हैं तो राष्ट्रपति को उस पर अपनी अनुमति देनी पड़ती है।

यदि लोक-सभा द्वारा पारित किसी विधेयक से राज्य-सभा सहमत न हो और गतिरोध उत्पन्न हो जाये, तो उस गतिरोध को हटाने के लिए राष्ट्रपति दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक बुला सकता है। संयुक्त बैठक की अध्यक्षता लोक-सभा का अध्यक्ष करता है।

धन विधेयक

धन विधेयकों को अधिनियमित करने का पूरा अधिकार लोक-सभा को ही है। संविधान के अनुच्छेद ११० में धन विधेयक की परिभाषा दी गई है। कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं, इस सम्बन्ध में निर्णय देने का अन्तिम प्राधिकार अध्यक्ष को ही है। अध्यक्ष इस सम्बन्ध में किसी से मंत्रणा करने के लिये बाध्य नहीं है।

धन विधेयकों के सम्बन्ध में राज्य-सभा के अधिकार बहुत सीमित हैं; वह ऐसे विधेयकों को केवल एक पखवारे तक रोक सकती है। उसे ऐसे विधेयक को अपनी सिफारिश के साथ, या बिना किसी सिफारिश के चौदह दिनों में ही लौटाना पड़ता है। लोक-सभा को यह अधि-

कार है कि वह राज्य-सभा की किसी सिफारिश को माने या न माने। यदि राज्य-सभा चौदह दिनों में उस विधेयक को नहीं लौटाती, तो भी उसे पारित मान लिया जाता है। कामन्स सभा में भी यही प्रक्रिया है, लेकिन वहां इसके लिये चौदह दिनों के बजाय एक महीने का समय है।

किसी भी धन विधेयक को राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना लोक-सभा में पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता।

धन विधेयकों के अतिरिक्त कुछ अन्य विधेयक भी ऐसे हैं जिन्हें राष्ट्रपति की सिफारिश या पूर्व-अनुमति के बिना पुरःस्थापित या पारित नहीं किया जा सकता। किसी नये राज्य के निर्माण या किसी राज्य की सीमा में हेरफेर करने वाले विधेयक को भी राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता। वित्त विधेयकों को अर्थात् ऐसे विधेयकों को जिनमें करावान से सम्बन्धित अथवा संविधान के अनुच्छेद ११० (१) में दिये गये अन्य मामलों से सम्बन्धित उपबन्धों के अलावा अन्य उपबन्ध भी हों, राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता। यदि किसी कराधान में राज्यों का हित निहित हो तो उस कराधान पर प्रभाव डालने वाले विधेयक को पुरःस्थापित करने के लिए भी राष्ट्रपति की सिफारिश आवश्यक है।

कुछ अन्य विधेयक भी होते है, जिनके अधिनियमन और प्रवर्तन से भारत की संचित निधि से व्यय करना अभीष्ट होता है। ऐसे विधेयकों को भी संसद् की कोई भी सभा तब तक पारित नहीं कर सकती, जब तक कि राष्ट्रपति ने उस सभा से उस पर विचार करने की सिफारिश न कर दी हो।

संविधान के आरम्भ होने से पन्द्रह वर्ष की अवधि तक, उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों और अधिनियमों, विधेयकों इत्यादि में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा से संबंधित किसी विधेयक को भी राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता।

सार रूप में तो इंगलैण्ड और भारत में विधि-निर्माण की प्रक्रिया सामान्यतः एक ही है; लेकिन साथ ही, हमारे संविधान में कुछ असाधारण परिस्थितियों का सामना करने के लिये भी कुछ व्यवस्थायें की गई हैं।

अध्यादेश

राष्ट्रपति को संविधान द्वारा अधिकार दिया गया है कि यदि संसद् का सत्र न चल रहा हो तो वह अध्यादेश जारी कर विधि-निर्माण कर सकता है, यदि वह समझता है कि उन परिस्थितियों में उसको तुरन्त कार्यवाही करनी चाहिये। लेकिन इस प्रकार प्रख्यापित अध्यादेश को, यदि उसे राष्ट्रपति द्वारा पहले ही वापस नहीं ले लिया गया हो तो, संसद् के सामने पेश करना आवश्यक है है और संसद् के पुनः समवेत होने पर, वह अध्यादेश प्रभाव-शून्य हो जायेगा। यदि संसद् की दोनों सभायें उसे अस्वीकृत कर देती हैं, तो वह उसी समय प्रभाव-शून्य हो जायेगा।

इस प्रकार राष्ट्रपति अध्यादेश द्वारा वही बातें अधिनियमित कर सकता है जो संसद् विधि द्वारा अधिनियमित करती है। यदि किसी अध्यादेश में, कोई विचाराधीन विधेयक समूचा ही या आंशिक रूप से सम्मिलित हो या उसमें उस विधेयक के उपबन्धों को रूपभेद करके सम्मिलित किया गया हो तो, अध्यादेश के प्रख्यापन के बाद होने वाले सत्र के आरम्भ में एक ऐसा विवरण भी सभा-पटल पर रखना आवश्यक होगा जिसमें यह बताया गया हो कि किन परिस्थितियों से विवश होकर अध्यादेश द्वारा अविलम्ब विधि-निर्माण करना आवश्यक हो गया था। जब भी किसी अध्यादेश को, रूपभेदों के साथ या उनके बिना, प्रतिस्थापित करने के लिए कोई विधेयक सभा में पुरःस्थापित किया जाता है, तो भी ऐसा ही एक विवरण प्रस्तुत करना आवश्यक होता है।

संक्षेप में हमारी संसद् में विधि-निर्माण का व्यावहारिक रूप यही रहा है।

नियंत्रण के साथ उसका मेल कैसे बैठाया जाये । कार्यपालिका को विधान बनाने का कार्य सौंपना सुविधाजनक भले ही हो, लेकिन किसी भी प्रकार से उसे लोकतांत्रिक नहीं कहा जा सकता, और न वह सदा ही एक निरापद मार्ग माना जा सकता है । मैं यह नहीं कहता कि वह इसलिये निरापद नहीं है कि मंत्रिगण और अधिकारी अनुत्तरदायी होते हैं, या ऐसे मामलों में उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता । मंत्रिगण और अधिकारी भी देश के भले के लिये ही, संसद् सदस्यों की भांति, कार्य करते हैं। हम उन पर विश्वास कर सकते हैं कि वे जनता के लिये कोई अविवेकपूर्ण या संदिग्ध नियम नहीं बनायेंगे । यदि ऐसा है तो अधीनस्थ विधान के मार्ग को निरापद क्यों नहीं माना जाता ? उसका कारण यह है कि कुछ ऐसी परिस्थितियां होती हैं जिनमें कार्यपालिका व्यक्ति और उसकी स्वतंत्रता की अपेक्षा प्रशासकीय सुविधा और लोक हित को अधिक महत्व देती है । ऐसा हो सकता है कि कार्यपालिका द्वारा बनाये गये नियमों में किसी व्यक्ति को होने वाली कठिनाइयों और उसकी स्वतंत्रता के उल्लंघन की ओर उचित ध्यान न दिया जाये । इतना ही नहीं, एक चीज़ और भी होती है, जो "अधिकारियों का उत्साह" कहलाती है । इस उत्साह के कारण अधिकारीगण किसी विशेष दिशा में सफलता प्राप्त करने की धुन में कभी-कभी ऐसे नियम भी बना सकते हैं, जिनसे नागरिकों को बहुत कठिनाइयां होने लगती हैं और उनके प्रति घोर अन्याय किया जा सकता है । यही कारण है कि संसद्, नागरिकों के अधिकारों और उनकी स्वतंत्रताओं के अभिरक्षक के रूप में, इन नियमों को नियंत्रित और इनकी छानबीन करती है ।

प्रत्यायोजित विधान पर संसदीय नियंत्रण

संसद् इन नियमों की छानबीन करने और उन पर नियंत्रण रखने का कार्य किस प्रकार करती है ? संसद् नीचे दिये गये प्रक्रमों में से किसी पर भी यह कार्य कर सकती है :—

(क) जब मूल अधिनियम अर्थात् शक्तियों का प्रत्यायोजन करने वाले विधेयक पर विचार हो रहा हो, तब इन नियमों के स्वरूप तथा उद्देश्य पर वाद-विवाद किया जा सकता है, उनकी ठीक प्रकार से व्याख्या की जा सकती है तथा उन्हें सीमित किया जा सकता है ।

(ख) अथवा, जब नियम बनाये जायें तब वह यह स्पष्ट कर सकती है कि इन नियमों के मसौदे को संसद् के समक्ष उसकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के लिये रखा जायेगा ।

(ग) अथवा उनके बनाये जाने के बाद, वह उन्हें क़ानून द्वारा बदलने या रद्द करने की कोशिश कर सकती है अथवा सभा में प्रश्नों के माध्यम से उनके औचित्य या पर्याप्तता पर आपत्ति कर सकती है ।

(घ) और सब से बढ़कर, एक समिति के द्वारा छानबीन का यह काम किया जा सकता है जो सदैव सतर्क रहेगी ।

जैसा कि पहले बताया गया है लोक-सभा ने उस प्रयोजन के लिये एक समिति नियुक्त की है जिसे अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति कहते हैं ।

अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति के कार्य की व्याप्ति की परिभाषा प्रक्रिया संबंधी नियमों में दी गई है । इस समिति का काम जांच तथा नियंत्रण करना है । नियमों के पीछे जो नीति है उस बात की जांच यह समिति नहीं कर सकती ; नियमों का स्वरूप तथा उनका संवैधानिक औचित्य अथवा जनता को उनसे होने वाली कठिनाइयों के प्रश्न पर ही विचार कर सकती है । किसी भी मंत्रालय से यह समिति ऐसा ज्ञापन मांग सकती है जिसमें उस मंत्रालय को एक विचाराधीन नियम या उसके मसौदे की व्याख्या करनी होगी । यह समिति मंत्रालय को एक प्रतिनिधि भेजने के लिये भी कह सकती है जो आकर नियमों की व्याख्या करे और सन्दिग्ध बातों का स्पष्टीकरण करे और संसद् द्वारा पारित किये गये सभी केन्द्रीय अधिनियमों के अन्तर्गत बनाये गये समस्त नियमों की छानबीन यह समिति करती है । समिति इसके सामने रखे गये नियम के निम्न पहलुओं पर विचार करती है :—

(क) क्या नियम संविधान या उस अधिनियम के, जिसके अनुसरण में वह बनाया गया है, सामान्य उद्देश्यों के अनुकूल है;

समिति ने उस नियम की ओर किस कारण से ध्यान आकर्षित किया है। इस अवधि में कई महत्वपूर्ण बातें हुई हैं जिन का पता समिति के प्रतिवेदनों से चलता है। आरम्भ से अब तक, समिति ने सभा को विलम्ब के २२२ मामलों से अवगत कराया है। अब मंत्रालय भी समय के कुछ अधिक पावंद होने लगे हैं।

अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति ने कई ठोस काम किये हैं। दिल्ली परिवहन प्राधिकार नियम, १९५२ के मामले में समिति ने बताया था कि मुख्य लेखा पदाधिकारी की बातों को रद्द कर देने की सभापति की शक्ति मूल अधिनियम की धारा १६(३) के विरुद्ध है। तीन दूसरे मामलों में, समिति ने बताया था कि नियमों द्वारा जो कुछ उपवन्ध किये गये थे वे बड़े सारवान् थे और इसलिये उनकी व्यवस्था वास्तव में मूल अधिनियम में ही की जानी चाहिये थी। एक मामले में, जिसमें कार्यपालिका ने नियम बनाने की अपनी शक्तियों को उप-प्रत्यायोजित कर दिया था, समिति ने कहा था कि उस मामले में मूल अधिनियम द्वारा नियम बनाने के लिये दी गई शक्तियों का अप्रत्याशित तथा असामान्य प्रयोग किया गया था। समिति ने सिफारिश की कि जब मूल अधिनियम में इस प्रकार की व्यवस्था की भी गई हो, तब भी शक्ति का उप-प्रत्यायोजन पर्याप्त संरक्षणों के साथ ही करना चाहिये। ऐसे नियमों की भी समिति ने निन्दा की है, जिनसे न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में रुकावट पैदा हुई हो। ऐसे दो मामलों में, समिति ने कहा था कि न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में रुकावट पैदा करना अवांछनीय था, और दोनों मामलों में सरकार ने मूल अधिनियम में यथाशीघ्र संशोधन करना स्वीकार कर लिया था।

समिति ने किसी भी नियम के कारण जनता को होने वाली कठिनाइयों की ओर भी सदा ध्यान दिया है। उदाहरणार्थ, केन्द्रीय उत्पादन शुल्क नियम (संशोधन) १९४४, में यह उपवन्ध था कि कर संग्रह करने वाला पदाधिकारी खोये या वर्वाद माल पर तो परिहार दे सकता है किन्तु चोरी गये माल पर नहीं। समिति ने यह सिफारिश की थी कि चोरी गये माल के बारे में यही व्यवस्था होनी चाहिये। सीमा-शुल्क प्रत्याहरण (ड्रावैक) नियम में, समिति ने कहा था कि जब प्रत्याहरण की किसी योजना का निरसन किया जाये, तब उससे पहले पर्याप्त अवधि की सूचना दी जानी चाहिये। एक दूसरे मामले में, समिति ने सिफारिश की थी कि जनता के लाभ के लिये लोक महत्व के समस्त नियमों तथा आदेशों का प्रकाशन केन्द्र और राज्यों में होना चाहिये और उसी के साथ ही सभी प्रादेशिक भाषाओं में उनका अनुवाद भी प्रकाशित होना चाहिये। इस वात पर भी ज़ोर दिया गया था कि महत्वपूर्ण नियमों के सामान्य आशय तथा प्रभाव के स्पष्टीकरण के लिये समाचार पत्रों में विज्ञप्तियां भी दी दी जायें।

समिति ने पदाधिकारियों की न्यायपूर्ण सेवा की शर्तों पर भी ध्यान दिया है। तीन मामलों में, समिति ने कहा था कि सभी शर्तें मूल अधिनियम में ही रखी जानी चाहियें—उनकी व्यवस्था करने का कार्य नियमों पर नहीं छोड़ना चाहिये। संसद् को यह कहने का अवसर मिलना चाहिये कि वे शर्तें युक्तियुक्त तथा न्यायसंगत हैं या नहीं। एक दूसरे मामले में, समिति ने कहा था कि सरकारी कर्मचारियों को स्थानीय निकायों के चुनाव लड़ने का अधिकार नहीं होना चाहिये। यदि आवश्यक हो, तो नियमों में ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे सरकार उनका नाम-निर्देशन कर सके।

समिति ने नियमों के सामान्य पहलुओं पर भी ध्यान दिया है, जैसे उनका रूप और प्रारूपण। समिति ने कहा है कि नियमों को वनाते समय अस्पष्ट भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिये। नियमों के संक्षिप्त नाम ऊपर तथा नियम में भी दिये जाने चाहिये—और प्रथम वार या संशोधन के रूप में प्रकाशित प्रत्येक नये नियम के साथ व्याख्यात्मक टिप्पणी भी होनी चाहिये। एक दूसरे मामले में, जिसमें एक नियम में बहुत से संशोधन किये गये थे, समिति ने सिफारिश की थी कि ऐसे मामलों में जनता की सुविधा के लिये उन नियमों को संशोधित रूप में पुनः प्रकाशित किया जाये। एक अन्य मामले में, समिति ने यह कहा था कि अधिक अच्छा यह होगा की समस्त संविहित नियम या आदेश गजट के एक ही भाग में प्रकाशित हों तथा उनकी संख्या क्रमशः चले—जिससे लोग शीघ्र ही उन्हें ढूढ सकें।

समिति ने संसद्-सदस्यों सम्बन्धी नियमों में भी कई अनियमितताओं का उल्लेख वड़ी तत्परता से किया है। लोक-सभा तथा राज्य-सभा के सदस्यों की संख्या

लोक लेखा समिति और उसका कार्य

वी० सुब्रह्मण्यन्

उप-सचिव, लोक-सभा सचिवालय

यह वात सही और बिल्कुल उचित है कि जब संसद् करदाताओं के धन को व्यय करने की मंजूरी देती है, तो वह, उन्हीं के हित में, यह आशा भी करे कि ठीक समय पर उस के समक्ष व्यय का व्यौरेवार विवरण आये—जिस से कि संसद् को इस वात का संतोष रहे कि जो रकमें उस ने मंजूर की हैं वे उन्हीं उद्देश्यों के निमित्त व्यय की गई हैं। जिन की पहले कल्पना की गई थी और रुपये का खर्चा बड़ी बुद्धिमत्ता और मितव्ययता से ही किया गया है। स्पष्ट है कि जो अभिकरण संसद् को लेखा प्रस्तुत करे वह कार्यपालिका के अधीन नहीं होना चाहिये; उसे सीधे संसद् के प्रति ही उत्तरदायी होना चाहिये। इस प्रकार का अभिकरण लगभग सभी लोकतांत्रिक देशों में है, जैसे फ्रांस में कोर्ट आफ एकाउंट्स, और इंगलैंड तथा भारत में नियंत्रक महालेखापरीक्षक।

भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक की नियुक्ति, राष्ट्रपति स्वयं अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा करता है, और उस के पद को कार्यपालिका से इतना स्वतन्त्र बना दिया गया है जितना कि संविधान के उपबन्धों के आधार पर संभव था। उसे एक प्रकार से संसद् का ही एक पदाधिकारी कहा जा सकता है। वह वार्षिक लेखे की पूर्णतया परीक्षा करता है और जांच पड़ताल के बाद उन्हें ठीक प्रमाणित करता है—वह इसी के साथ उस पर अपने विचार भी प्रकट कर सकता है और अपना प्रतिवेदन संसद् को पेश करता है। उस के प्रतिवेदनों में केवल गलत तरीके के बजट बनाने तथा वित्तीय अनियमितताओं पर ही टिप्पण नहीं होते, बल्कि व्यर्थ तथा हानिकारक व्यय तथा अदक्षता पर भी वह अपने विचार प्रकट करता है। ये प्रतिवेदन संसद् के समक्ष संविधान के अनुच्छेद १५१ के अनुसरण में राष्ट्रपति द्वारा पेश कराये जाते हैं।

उपर्युक्त लेखे तथा प्रतिवेदन कई जिल्दों में छापे जाते हैं—जैसे कि डाक व तार विभाग, प्रतिरक्षा विभाग तथा असैनिक विभागों के विनियोग लेखे—जो कई सौ पृष्ठों में छपते हैं। सरकारी व्यय के आधिक्य तथा विभिन्नता की वृद्धि के परिणामस्वरूप, लेखे का विषय बहुत ही कठिन तथा प्राविधिक हो गया है। इसलिये संसद् के लिये व्यौरेवार लेखापरीक्षा करना यदि असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य है। इस के अतिरिक्त संसद् इस के लिये आवश्यक समय भी नहीं दे सकती। ऐसे काम के लिये संसद् की एक समिति ही अधिक उपयुक्त है। जो समिति संसद् की ओर से लेखे का व्यौरेवार परीक्षण करती है, वह लोक लेखा समिति कहलाती है।

लोक लेखा समिति का इतिहास :

भारत में सर्व प्रथम १९२१ में मॉंटफोर्ड सुधारों के बाद लोक-लेखा समिति बनी थी। समिति के चुनाव के प्रस्ताव को विधान सभा में प्रस्तुत करते समय, श्री डब्ल्यू० एम० हेली ने ये विचार प्रकट किये थे :—

> "समिति सभा का ध्यान किसी ऐसे मामले पर दिलायेगी जो कि ऐसी बात से सम्बन्धित हो जिस में वित्तीय नियमों का उल्लंघन हुआ हो या सरकारी धन का अपव्यय किया गया हो—और फिर सभा चाहे संकल्प द्वारा अथवा अपनी शक्ति के अनुसार अन्य संवैधानिक तरीके से सरकार पर जोर देगी कि वह ऐसे मामले में उपयुक्त कार्यवाही करे। जब समिति पूरी तरह काम शुरू करेगी—तो उसका कार्यक्षेत्र और भी बढ़ जायेगा और उस समय वह बहुत से ऐसे मामलों का रहस्योद्घाटन कर सकेगी जिनमें बिना सोचे समझे तथा जल्दबाजी से व्यय किया गया है।

> जिन लोगों को इंगलैंड की लोक लेखा समिति के प्रतिवेदन के बारे में जानकारी है, वे जानते हैं कि वहां इस समिति का कितना प्रभाव है और किस प्रकार यह समिति सरकारी कामों में मितव्ययता बरतने में जोर देती है ।"

वित्त मंत्री समिति का सभापति होता था और समिति के लिये कर्मचारियों आदि की सहायता वित्त विभाग करता था । समिति ने वर्ष १९२०–२१ के लेखे की परीक्षा की थी ।

१९५० तक उपर्युक्त व्यवस्था जारी रही । १९५० में नये संविधान के लागू होने पर, लोक-लेखा समिति की रचना में भारी परिवर्तन हो गया । यह समिति एक संविहित संसदीय समिति बन गई, जिस का प्रधान एक गैर-सरकारी सदस्य होता है और जिसे अध्यक्ष नियुक्त करता है । सचिवालय का काम भी संसद् सचिवालय (अब लोक सभा सचिवालय) ने ले लिया है । प्रथम समिति के सभापति ने यह कहा था कि "इस परिवर्तन से समिति स्वतन्त्र वातावरण में काम कर सकने योग्य हो गई है और अब निर्वाध रूप में आलोचना कर सकती है ?"

समिति का गठन

केन्द्र में लोक लेखा समिति संसद् के दोनों सदनों द्वारा प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिये गठित की जाती है । इस में २२ सदस्य होते हैं, १५ लोक सभा के और ७ राज्य-सभा के । १९५४–५५ से पहले, समिति में पन्द्रह सदस्य होते थे, जिन्हें लोक सभा द्वारा निर्वाचित किया जाता था । १९५४–५५ से, राज्य-सभा के भी सात सदस्य लिये जाने लगे हैं । समिति में विभिन्न दलों के सदस्यों का प्रतिनिधित्व मोटे तौर पर उन दलों की सदस्य संख्या के आधार पर होता है । इस प्रकार समिति में समस्त दलों का प्रतिनिधित्व रहता है और सरकारी दल का बहुमत रहता है । सदस्य लेखा परीक्षा करते समय दलगत भावनाओं से ऊपर उठ कर काम करते हैं । इस प्रकार दलबन्दी की भावना से अप्रभावित लेखापरीक्षा शान्त वातावरण में होती है । वस्तुत: समिति की सिफारिशें अपने स्वतन्त्र दृष्टिकोण और आलोचना के लिये प्रसिद्ध हैं ।

समिति के सभापति की नियुक्ति उस के सदस्यों में से अध्यक्ष द्वारा की जाती है । यदि उपाध्यक्ष समिति का सदस्य हो, तो सभापति वही होता है । अभी तक समिति का सभापति सरकारी दल का सदस्य ही रहा है—इंगलैंड में इस के विपरीत प्रथा है, वहां प्राचीन परम्पराओं के आधार पर इस पद पर विरोधी दल का सदस्य नियुक्त किया जाता है ।

समिति के कृत्य

समिति का मुख्य कार्य संसद् द्वारा सरकारी व्यय के लिये मंजूर की गई राशियों के विनियोग के लेखे तथा संसद् के सामने रखे गये अन्य ऐसे लेखाओं की परीक्षा करना है जिसे समिति ठीक समझे । नियंत्रक महालेखा-परीक्षक द्वारा पेश किये गये विनियोग लेखे तथा लेखा-परीक्षा प्रतिवेदन के आधार पर ही समिति परीक्षा करती है । जांच के समय समिति यह देखती है कि व्यय की गई राशि संसद् द्वारा मंजूर की गई राशि से ज्यादा तो नहीं है और धन का व्यय अनुदान में बताई गई मदों पर ही किया गया है तथा किसी ऐसी नयी सेवा पर तो व्यय नहीं किया गया जिन का अनुदान में उल्लेख नहीं था । समिति की जांच इतने तक ही सीमित नहीं है । समिति व्यय करने में प्रयोग की गई "बुद्धिमत्ता, सत्य-निष्ठा तथा मितव्ययता" पर भी ध्यान देती है ।

ऐसे मामले, जिन में हानि, अत्यधिक व्यय तथा अन्य वित्तीय अनियमिततायें हुई हों, उनकी कड़ी आलोचना की जाती है । राज्य निगमों, जैसे दामोदर घाटी निगम, व्यापार तथा निर्माण योजनायें, स्वायत्त तथा अर्द्ध-स्वायत्त निकायों जैसे हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट लिमिटेड , सिन्दरी फर्टिलाइजर्स लिमिटेड, इण्डियन टेलीफोन इंडस्ट्रीज लिमिटेड आदि के लेखे तथा उन पर नियंत्रक महालेखा-परीक्षक के प्रतिवेदन की भी समिति परीक्षा कर सकती है । सब से अन्तिम लेकिन काफी महत्वपूर्ण बात यह है कि समिति स्वीकृत अनुदानों या विनियोगों से अधिक होने वाले व्यय के सभी मामलों की परीक्षा करती है । जब समिति इस अधिक व्यय को नियमित करने की सिफारिश कर दे, तभी सरकार संविधान के अनुच्छेद ११५ के अनुसार संसद् में अतिरिक्त मांगें प्रस्तुत करती है ।

समिति अपना काम प्रभावशाली ढंग से कर सके, इसी कारण समिति को पर्याप्त शक्तियां दी गई हैं। समिति अपने विचाराधीन मामलों के सम्बन्ध में साक्ष्य के लिये किसी भी व्यक्ति को बुला सकती है, और संबंधित कागज, फाइलें तथा अभिलेख देखने के लिये मंगवा सकती है। जब समिति सरकार तथा किसी निजी समवाय या किसी अन्य गैर-सरकारी निकाय के बीच हुए करार की परीक्षा करती है, तो यदि वह आवश्यक समझे तो निजी समवाय या निकाय के प्रतिनिधियों को अपने सामने साक्ष्य देने या कोई ऐसी बात बताने के लिये, जिस के सम्बन्ध में उसे और जानकारी चाहिये या किसी ऐसी बात के लिये जिसे वे प्रतिनिधि समिति के समक्ष रखना चाहें, बुला सकती है। समिति की कार्यवाही शब्दशः दर्ज की जाती है।

नीति सम्बन्धी प्रश्नों से समिति का कोई संबंध नहीं है। वह तो नीति की क्रियान्विति और उसे लागू करने के परिणामों की परीक्षा करती है। यद्यपि सामान्यतया समिति नीति के प्रश्नों पर अपनी कोई राय नहीं देती, तथापि समिति इस बात पर अवश्य राय जाहिर करती है कि नीति की कार्यान्विति में धन की फिजूलखर्ची हुई है या नहीं, और क्या वे त्रुटियां पहले से नीति में ही अन्तर्निहित थीं। ऐसे मामले में, एक बात में जाये बिना दूसरे की जांच नहीं की जा सकती। समिति व्यय के अविवेकपूर्ण तरीकों की रोकथाम करती है—इस कारण यह लेखा सम्बन्धी प्रशासनीय त्रुटियों पर भी सरकार का ध्यान दिलाती है लेकिन इन गलतियों को ठीक करने का दायित्व सरकार पर छोड़ देती है। यद्यपि समिति सीधे ही प्रशासनीय मामलों में हस्तक्षेप नहीं करती किन्तु समिति जिन मामलों की ओर ध्यान दिलाती है, उन में सरकार द्वारा की जाने वाली अनुशासनिक तथा अन्य कार्यवाही में रुचि रखती है तथा ऐसी कार्यवाही की पर्याप्तता के बारे में अपनी राय व्यक्त करती है, ताकि भविष्य में सार्वजनिक हित सुरक्षित रहें और वित्तीय मामलों में जनता का नैतिक स्तर ऊंचा रहे। अपचारी अधिकारियों के बारे में समिति का रवैया व्यक्तिपरक नहीं होता क्योंकि यह तरीके से सम्बन्धित है न कि व्यक्ति से

जैसा कि पहले बताया गया है समिति का चुनाव एक वर्ष के लिये किया जाता है और उस के बाद नयी समिति का चुनाव होता है। किन्तु व्यवहार में बहुत से सदस्य वर्षों तक समिति के सदस्य बने रहते हैं। यह बातं वांछनीय है और जरूरी भी है, क्योंकि इस प्रकार बहुत से अनुभवी सदस्य समिति में रहते हैं और समिति का काम दक्षता से चलता रहता है।

लोक लेखा समिति के कार्य का तरीका

चुनाव के बाद शीघ्र ही समिति बैठ कर अपना कार्यक्रम निर्धारित करती है। विनियोग लेखे चूंकि बहुत विस्तृत होते हैं, इस कारण समिति प्रत्येक लेखे के ब्यौरेवार परीक्षण के लिये समय नहीं निकाल सकती। इसलिये समिति उन बातों पर ही अधिकतर ध्यान देती है जिन पर नियंत्रक महालेखापरीक्षक ने अपने प्रतिवेदन में टिप्पण दिये होते हैं। कार्यक्रम निश्चित हो जाने के बाद, समिति का सचिव संबंधित मंत्रालयों के सचिवों को सूचना भेज देता है। केन्द्र में, यह प्रथा बहुत पुरानी है कि सामान्यतया समिति के समक्ष संबंधित मंत्रालय के सचिव उपस्थित होते हैं। अपने मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ, सचिव नियत किये गये दिनों पर वहां आते हैं, और मुख्य साक्षी वही होते हैं। मंत्रालय का वित्तीय सलाहकार भी उन के साथ साक्षी के रूप में आता है। नियंत्रक महालेखापरीक्षक भी समिति द्वारा की जाने वाली परीक्षा की सहायतार्थ प्रति दिन वहां आता है। वह समिति के मुख्य संचालक के रूप में कार्य करता है, और एक प्रकार से वह समिति का पथ-प्रदर्शक, मित्र और बुनियादी सिद्धान्तों के बारे में सलाहकार होता है। समिति अर्द्ध गोलाकार मेज पर बैठती है—मेज के एक ओर सभापति बैठता है, जिस की बायीं ओर समिति के सचिव और दायीं ओर नियंत्रक महालेखापरीक्षक बैठते हैं।

सामान्यतया, समिति परीक्षण के समय साक्षियों से प्रश्न पूछती है। यद्यपि, साक्षियों की भांति, सदस्य विशेषज्ञ नहीं होते किन्तु अनुभव तथा अध्ययन से इन समस्याओं के बारे में उन्हें पर्याप्त ज्ञान हो जाता है। विभिन्न कार्य करने तथा विचारधाराएं रखने वाले सदस्य, मौलिक तथा आलोचनात्मक दृष्टिकोण से काम करते हैं—और कई बार जिरह बहुत लम्बी हो जाती है। इस प्रकार के प्रश्नों तथा आलोचनाओं के वातावरण में इन साक्षियों को अपने मामले से सम्बन्धित बातें बतानी पड़ती हैं और उनकी तर्क-संगति सिद्ध करनी पड़ती है। यह इन लोगों के लिये वास्तव में बड़ी मेहनत का काम है।

समिति की बैठकों के संचालन में, सभापति ही मुख्य कार्य करता है। सभी बैठकों में वह सदैव आता है—अन्य बहुत ही कम सदस्य इतने नियमित होते हैं। नियंत्रक महालेखापरीक्षक और समिति के सचिव सभापति को पहले से सभी मामले ब्योरेवार बता देते हैं और सभापति उन्हीं के आधार पर साक्षियों से मुख्य-मुख्य प्रश्न पूछते हैं। यह देखना भी सभापति का ही कार्य है कि सदस्यगण परीक्षा के क्षेत्र से बाहर न जायें। वे प्रश्न पूछने की पद्धतियों को अनियमित करार देते हैं, या उसे निरुत्साहित करते हैं।

समिति अपने समक्ष पेश किये गये तथ्यों के आधार पर ही अपनी सिफारिशों और उपपत्तियों को तैयार करती है और उन्हें एक प्रतिवेदन के रूप में संसद् के समक्ष प्रस्तुत करती है। इसके बाद, उस प्रतिवेदन को प्रकाशित और प्रचारित किया जाता है।

यदि समिति का कार्य संसद् में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत कर देने के बाद ही समाप्त मान लिया जाये, तो फिर उसकी इतनी मेहनत का कोई मूल्य ही नहीं रह जायेगा। हालांकि समिति को यह शक्ति नहीं दी गई है कि वह कार्यपालिका को सिफारिशों के सम्बन्ध में कार्यवाही करने के लिये बाध्य कर सके, फिर भी सरकार समिति की सिफारिशों पर बड़ी गम्भीरता से विचार करती है। समिति इस पर भी नजर रखती है कि सरकार ने उसकी सिफारिशों को कहां तक स्वीकार या कार्यान्वित किया है। यही क्रम निरन्तर चलता रहता है। सरकार उसकी अधिकांश सिफारिशों को स्वीकार और कार्यान्वित कर देती है। यदि सरकार कुछ मामलों में समिति के किसी सुझाव को मानने या उसकी किसी सिफारिश को कार्यान्वित करने में कुछ कठिनाई महसूस करती है, तो वह उसके कारण समिति के विचारार्थ प्रस्तुत कर देती है। समिति, सरकार के विचारों को देखते हुए, उन मामलों पर पुनःविचार करती है। इस तरीके से, सामान्यतया दोनों के मतभेद यथासम्भव दूर कर लिये जाते हैं, और एक समझौता कर लिया जाता है। लेकिन यदि इसके बाद भी मतभेद बने रहें, तो समिति संसद् को दिये जाने वाले अपने प्रतिवेदन में उसकी ओर ध्यान दिलाती है और उसमें की जाने वाली आवश्यक कार्यवाही बताती है।

संसद् इस समिति के प्रतिवेदनों पर चर्चा नहीं करती। लेकिन इस कारण समिति के महत्व में कोई कमी नहीं होती। इंग्लैण्ड के स्वर्गीय नियंत्रक महालेखापरीक्षक श्री मैल्कौम रैमसे ने १९३१ में प्रक्रिया सम्बन्धी प्रवर समिति के समक्ष साक्षी देते हुए कहा था: "लोक लेखा समिति के बिना मैं बिलकुल अनुपयोगी हो जाऊंगा, या यों कहना चाहिये कि इस समय से कुछ अधिक अनुपयोगी बन जाऊंगा।" कोई भी सचिव यह नहीं चाहता कि समिति के प्रतिवेदनों में उसके अपने मंत्रालय का अधिक विस्तार से उल्लेख हो। यह उक्ति आज भी सच है कि "व्यय करने वाले विभाग सभा की अपेक्षा लोक लेखा समिति से संभवतः इसलिये अधिक डरते रहते हैं कि इसकी जांच से बच निकलने की गुंजाइश बहुत कम होती है"।

यहां एक सवाल उठ सकता है कि लोक लेखा समिति का यह सारा कार्य शव-परीक्षा के समान ही है क्योंकि रुपया खर्च हो जाने के बाद उसकी जांच करने से क्या लाभ? उसका महत्व इससे अधिक और क्या है। आप कह सकते हैं कि इसकी अपेक्षा तो अमरीकी प्रणाली अपनाना ही ठीक होगा, जिसमें व्यय होने से पहले ही सारी परीक्षा कर ली जाती है। इसके उत्तर में, यह भी तर्क दिया जा सकता है कि चिकित्सा-विज्ञान की वर्तमान कार्य-क्षमता में शव-परीक्षाओं ने भी कुछ कम योग नहीं दिया है। कुछ ऐतिहासिक कारणों से, हमारी वित्तीय नियंत्रण की प्रणाली इंग्लैण्ड की प्रणाली के नमूने पर ही ढाली गई है। तदनुसार, संसद् में प्रस्तुत किये जाने से पहले वित्त मंत्रालय ही प्राक्कलनों की छानबीन करता है; यथासमय प्राक्कलन समिति प्राक्कलनों की छानबीन करती है; नियंत्रक महालेखापरीक्षक संसद् द्वारा मंजूर किये गये अनुदानों के उपयोग के ढंग की निरन्तर जांच करता रहता है; और अन्तिम अवस्था में ही लोक लेखा समिति लेखाओं की परीक्षा करती है। नियंत्रण की यह प्रणाली पर्याप्त तथा कार्य-क्षम है या नहीं—इस बात को लेकर लोगों में मतभेद हो सकता है। लेकिन समितियों के माध्यम से नियंत्रण करने की इस प्रणाली का विकास इंग्लैण्ड जैसे उन्नत लोकतांत्रिक देशों में कई शताब्दियों के दौरान में क्रमशः ही हुआ है; और अब हम उसी को अपने देश की परिस्थितियों के अनुसार अपना रहे हैं और अपनी परिस्थितियों के अनुकूल

समायोजित कर रहे हैं। अन्य देशों द्वारा अपनाई जाने वाली अन्य प्रणालियों की भी बहुत सी अच्छाइयां हो सकती हैं, लेकिन समितियों द्वारा सरकारी व्यय के नियंत्रण की हमारी अपनी प्रणाली की एक अच्छाई यह है कि इसमें चर्चा करने के बाद ही निर्णय करने की सुविधा है। बेजाहट ने कहा भी है कि प्रशासन की सफलता विशेषज्ञों और गैर-विशेषज्ञों के विचारों के एक उचित समायोजन पर ही निर्भर करती है"।

प्राक्कलन समिति का कार्य-कलाप

एस० एल० त्रिवेदी
उप-सचिव, लोक-सभा सचिवालय

भारत सरकार के तीन अंग हैं (१) न्यायपालिका, (२) व्यवस्थापिका, और (३) कार्यपालिका।

न्यायपालिका में भारत का उच्चतम न्यायालय सम्मिलित है जो देश का सब से बड़ा न्यायालय है, जिसको मूल अपीलीय और मंत्रणात्मक क्षेत्राधिकार प्राप्त है तथा जो संविधान का अन्तिम निर्वचनकर्ता है। जनता को बिना किसी भय और पक्षपात के न्याय प्राप्त हो सके इस हेतु न्यायपालिका अन्य दो अंगों से प्रायः पूर्णतः स्वतन्त्र होती है।

व्यवस्थापिका में दो सदन हैं, अर्थात् राज्य-सभा और लोक-सभा। यह देश के कानून-निर्माण और देश की प्रशासन विधि संबंधी नीतियों के निर्धारण के लिये उत्तरदायी होती है।

कार्यपालिका, राष्ट्रपति, जो संविधानिक प्रधान होता है, और प्रधान मंत्री, जो सरकार का कार्यकारी प्रधान होता है, तथा उसकी मंत्रिपरिषद्, से मिल कर बनती है। प्रधान मंत्री अपनी मंत्रि-परिषद् सहित संसद् के प्रति इस बात के लिये उत्तरदायी होता है कि देश का प्रशासन संसद् द्वारा निर्धारित नीतियों के अनुसार किया जाय।

कार्यपालिका पर उचित नियंत्रण रखने के लिये संसद् के पास अनेक युक्तियां हैं, जिनमें से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण युक्ति वित्तीय नियंत्रण है। सामान्यतः कार्यपालिका संसद् की स्वीकृति प्राप्त किए बिना व्यय नहीं कर सकती। प्रति वर्ष नए वित्तीय वर्ष के प्रारम्भ होने के पूर्व संसद् को आय-व्ययक पारित करना होता है जो सरकार को व्यय करने का प्राधिकार देता है। चूंकि आय-व्ययक के प्रस्तुत किए जाने और उसके पारित किये जाने के बीच समयावधि थोड़ी होती है इससे यह स्पष्ट है कि संसद् आय-व्ययक का, उसको मंजूर करने से पूर्व, विस्तृत अध्ययन नहीं कर सकती। अतएव सदन की ओर से विचार के दौरान में यह केवल कुछ मुख्य नीतियों का अनुमोदन और निर्णय कर सकती है जिनके अनुसार प्रशासन चलाना होता है। इसके अतिरिक्त, संसद् के सामने वर्ष भर इतना अधिक विधान-कार्य रहता है कि वह आय-व्ययक की विस्तृत जानकारी के लिये पर्याप्त समय नहीं दे सकती। इसलिये संसद् को सरकार द्वारा किए जाने वाले व्यय की उचित जानकारी करने में समर्थ बनाने के लिये संसदीय समितियों की स्थापना की गई है। ऐसे नियंत्रण के प्रयोग के लिये लोक लेखा समिति और प्राक्कलन समिति दो अत्यन्त महत्वपूर्ण समितियां हैं।

लोक लेखा समिति का मुख्य कार्य सदन द्वारा भारत सरकार के व्यय के लिये मंजूर की गई राशियों के विनियोग को दर्शाने वाले लेखाओं, भारत सरकार के वार्षिक वित्त लेखाओं और सदन के समक्ष रखे गये अन्य ऐसे लेखाओं की जांच करना है। जिन्हें समिति ठीक समझे।

इसके अतिरिक्त यह समिति प्राक्कलनों की जांच के सम्बन्ध में भी है—ऐसे प्राक्कलनों की जो समिति ठीक समझे अथवा जो सदन द्वारा उसे विशेष रूप से निर्दिष्ट किए जाएं। लोक लेखा समिति के सदस्य संसद् के दोनों सदनों द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं, जबकि प्राक्कलन समिति के सदस्य केवल लोक-सभा द्वारा ही निर्वाचित किए जाते हैं। लोक लेखा समिति तो सरकार द्वारा किए जा चुके व्यय की राशि की जांच करती है और प्राक्कलन समिति सरकार द्वारा किए जाने वाले व्यय के लिये प्रस्तावित प्राक्कलनों की छानबीन करती है। इस प्रकार लोक लेखा समिति और प्राक्कलन समिति का कार्य यह सुनिश्चित करना है कि संसद् द्वारा मंजूर धन उचित रूप से और संसद् द्वारा निर्धारित स्थूल नीतियों के अनुसार ही व्यय किया जाये।

प्राक्कलन समिति की उत्पत्ति :

भारत में अंगीकृत संसदीय कार्य-प्रणाली और प्रक्रिया ग्रेट ब्रिटेन में अपनाई जाने वाली कार्य-प्रणाली और प्रक्रिया से बहुत प्रभावित हुई है । लोक लेखा समिति और प्राक्कलन समिति की विधियां ब्रिटिश प्रणाली से अंगीकृत की गई हैं । इंग्लैण्ड में लोक लेखा समिति का अस्तित्व १८६१ से चला आ रहा है, जबकि प्राक्कलन समिति की उत्पत्ति अपेक्षाकृत हाल की ही है । १९१२ में हाउस आफ कामन्स में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया था :

> "एक प्रवर समिति नियुक्त की जाए जो इस सदन को प्रस्तुत किए जाने वाले ऐसे प्राक्कलनों की जांच करे जो समिति को ठीक लगें और वह यह रिपोर्ट दे कि उनमें उन प्राक्कलनों में अन्तर्निहित नीतियों से संगत कौन सी मितव्ययतायें, यदि कोई हों, लागू की जानी चाहिएं ।"

यह समिति विश्व-युद्ध काल को अपवाद स्वरूप मानते हुए जबकि उस समिति के स्थान पर कुछ समय के लिये राष्ट्रीय व्यय सम्बन्धी प्रवर समिति (सिलेक्ट कमेटी आन नेशनल एक्सपेन्डीचर) निर्मित की गई थी प्रायः नियमित रूप से कार्य करती आ रही है ।

भारत में लोक लेखा समिति १९२२ से चली आ रही है । परन्तु प्राक्कलन समिति की उत्पत्ति बहुत हाल की है और उसका निर्माण १० अप्रैल, १९५० को हुआ था । वर्ष १९५० से प्राक्कलन समिति का निर्वाचन प्रतिवर्ष लोक-सभा द्वारा किया जाता है और वह नियमित रूप से कार्य कर रही है ।

क्षेत्र और कार्य :

प्राक्कलन समिति में अधिक से अधिक ३० सदस्य होते हैं जो लोक-सभा द्वारा प्रत्येक वर्ष अपने सदस्यों में से अनुपाती प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं । कोई मंत्री समिति का सदस्य नहीं बनाया जाता है । यदि कोई सदस्य समिति के लिये निर्वाचित होने के बाद, मंत्री नियुक्त किया जाता है तो वह ऐसी नियुक्ति की तिथि से समिति का सदस्य नहीं रह जाता । समिति के सदस्यों की पदावधि एक वर्ष है । समिति का सभापति अध्यक्ष महोदय द्वारा समिति के सदस्यों में से नियुक्त किया जाता है परन्तु यदि उपाध्यक्ष समिति का सदस्य होगा तो वह समिति का सभापति नियुक्त किया जायेगा । समिति किन्हीं भी विषयों की जांच करने के लिए, जो उसे निर्दिष्ट किये जायें, एक या अधिक उप-समितियां नियुक्त कर सकती है जिनमें से प्रत्येक को अविभक्त समिति की शक्तियां प्राप्त होंगी और ऐसी उप-समिति के प्रतिवेदन सम्पूर्ण समिति के प्रतिवेदन समझे जायेंगे, यदि वे संम्पूर्ण समिति के किसी अधिवेशन में अनुमोदित हो जायें । समिति अधिकारियों के बयान सुन सकती है या जांच किए जाने वाले प्राक्कलनों से संबंधित अन्य साक्ष्य ले सकती है और समिति को यह अधिकार है कि वह अपने समक्ष दिए गए किसी भी साक्ष्य को गोपनीय या गुप्त रखे। समिति वर्ष भर तक समय समय पर प्राक्कलनों की जांच जारी रख सकेगी और जांच होते समय भी प्रतिवेदन दे सकेगी । समिति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह किसी एक वर्ष के समस्त प्राक्कलनों की जांच करे । भले ही समिति ने प्रतिवेदन न दिया हो तो भी अनुदानों के लिये मांगों को अंतिम रूप से पारित किया जा सकेगा ।

प्राक्कलन समिति के कृत्य ये हैं :

(क) यह प्रतिवेदन देना कि प्राक्कलनों से सम्बन्धित नीति से संगत क्या मितव्यय-तायें, संघटन में सुधार, कार्यपटुता, या प्रशासकीय सुधार किये जा सकते हैं ;

(ख) प्रशासन में कार्यपटुता और मितव्ययता लाने के लिये वैकल्पिक नीतियों का सुझाव देना ;

(ग) यह जांच करना कि प्राक्कलनों में अन्तर्निहित नीति की सीमाओं में रहते हुए धन ठीक ढंग से लगाया गया है या नहीं;

(घ) यह सुझाव देना कि प्राक्कलन किस रूप में संसद् में उपस्थित किए जायं।

उपर्युक्त निर्देश पदों से ज्ञात होगा कि समिति का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत है क्योंकि उसको, जहां वह आवश्यक समझे, वैकल्पिक नीतियों के सुझाव देने का अधिकार है।

प्राक्कलन समिति के उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त जो लोक-सभा के प्रक्रिया और कार्य संचालन नियमों में विनिहित हैं, लोक-सभा के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ग० वा० मावलंकर ने, जिन्होंने भविष्य में पथ-प्रदर्शन करने के लिए अनेक स्वस्थ संसदीय रूढ़ियों की नींव रखी है, १८ अप्रैल, १९५० को प्राक्कलन समिति की पहली बैठक में अपने भाषण में इन विभिन्न संसदीय समितियों के अस्तित्व का प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार बताया था:—

"(१) अधिकाधिक सदस्यों को शासन से संबद्ध करना और न केवल प्रशासन विधियों का प्रशिक्षण देना, वरन् उन्हें उन समस्याओं से भी भली प्रकार परिचित कराना जिनका सामना सरकार को प्रतिदिन करना होता है;

(२) कार्यपालिका पर नियंत्रण रखना ताकि वह अत्याचारी और स्वच्छंद न बन जाय;

(३) सरकार की नीतियों को प्रभावित करना; और

(४) सरकार और सामान्य जनता के बीच सम्पर्क स्थापित करना।"

उन्होंने यह भी कहा कि इस दृष्टि से समिति के सदस्यों, प्रशासन के लिये उत्तरदायी मंत्रियों और संबंधित पदाधिकारियों की तुलना एक सुखी परिवार के समूह से की जा सकती है जिसके सदस्य समस्याओं के हल और देश में नागरिक जीवन की भलाई के लिए एक साथ मिलकर कार्य करते हैं। स्पष्टतः, यह समिति और संसद् भी नीतियों के निर्णय के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकती और उन नीतियों की विस्तृत व्याख्या और उसे यथासंभव सर्वोत्तम ढंग से कार्यान्वित करना पूर्णतः कार्यपालिका पर छोड़ देती है। निस्संदेह इस सदन की समितियां उनके कार्यान्वयन पर निगाह रखेंगी ताकि वे आश्वस्त हो सकें कि ऐसा कार्यान्वयन विनिहित नीति की सीमाओं के अन्तर्गत है और यथासंभव सर्वोत्तम विधि से किया गया है। समितियां यह भी देखेंगी कि क्या परिणामों की दृष्टि से नीति का पुनरीक्षण आवश्यक है।"

प्रक्रिया :

प्रत्येक वित्तीय वर्ष के प्रारंभ में प्राक्कलन समिति सम्बन्धित वर्ष के दौरान में जांच करने के लिये किसी मंत्रालय अथवा मंत्रालयों के प्राक्कलनों के किसी भी भाग से संबंधित विषयों को छांट लेती है। जिस मंत्रालय या मंत्रालयों के प्राक्कलनों की समिति द्वारा जांच की जानी होती है उनसे लोक-सभा सचिवालय लिखित रूप में प्राक्कलनों के समर्थन में समिति की जानकारी के लिए आवश्यक सामग्री प्रदान करने के लिए कहता है। जिस रूप में समिति को सामग्री प्रदान की जानी होती है वह निम्न प्रकार का है:—

"(१) मंत्रालय तथा उसके संलग्न एवं अधीनस्थ कार्यालयों का संगठन।

[जानकारी एक रेखाचित्र (डायग्राम) के रूप में दिखाई जानी चाहिए जिसकी पुष्टि संक्षित व्याख्यात्मक टिप्पणी से की गई हो।]

(२) मंत्रालय तथा उससे संलग्न और अधीनस्थ कार्यालयों के कार्य।

(३) प्राक्कलनों के आधार का स्थूल व्यौरा।

(४) प्राक्कलनों की अवधि में मंत्रालय और उसके संलग्न तथा अधीनस्थ कार्यालयों के कार्य का परिमाण जिसमें तुलना के लिए गत तीन वर्षों के तत्संवादी आंकड़े दिए हों।

(५) मंत्रालयों द्वारा प्रारंभ की गई योजनायें अथवा परियोजनायें।

(योजना का नाम और व्यौरा, व्यय के प्राक्कलन, वह अवधि जिसमें उसके पूर्ण होने की संभावना हो, प्राप्ति, यदि कोई हो, व अद्यतन प्रगति दी जानी चाहिए।)

(६) पूर्वगामी तीन वर्षों में प्राक्कलनों के प्रत्येक उप-शीर्षक के अन्तर्गत किया गया वास्तविक व्यय।

(७) गत तीन वर्षों के वास्तविक व्यय और चालू प्राक्कलनों के बीच अन्तर के कारण, यदि कोई हो।

(८) मंत्रालय द्वारा अपने कार्यकरण पर जारी किए गए प्रतिवेदन, यदि कोई हों।

(९) कोई भी अन्य जानकारी जो समिति मांगे अथवा जिसका देना मंत्रालय आवश्यक या उचित समझे।"

लोक-सभा सचिवालय में कागजात प्राप्त होते ही सदस्यों को परिचालित किए जाते हैं, जिससे उन्हें पढ़ने के पश्चात् सदस्य वे प्रश्न तैयार कर सकें जिन पर उन्हें और जानकारी चाहिए।

प्राक्कलन समिति अपने को उप-समितियों में विभाजित करती है जो मंत्रालय तथा उसके संलग्न और अधीनस्थ कार्यालयों के सामने आने वाली विभिन्न समस्याओं का मौके पर अध्ययन करने के लिए दौरा करती हैं। इस प्रकार संगृहीत जानकारी के आधार पर प्रश्नावली तैयार की जाती है और मंत्रालय अथवा मंत्रालयों के पास उनके लिखित उत्तरों के लिए भेजी जाती है। लिखित उत्तर प्राप्त होते ही, समिति के सदस्यों में परिचालित कर दिए जाते हैं।

उस तिथि या तिथियों को जब समिति संबंधित मंत्रालय के प्रतिनिधियों को बुलाने का निश्चय करती है सचिव अथवा विभागाध्यक्ष और वित्त मंत्रालय का अधि-प्रेषित प्रतिनिधि ऐसी सूचना प्रदान करने के लिए जैसी कि समिति मांगे, उपस्थित होते हैं। समिति विचाराधीन प्रश्नों पर साक्ष्य देने के लिए उपयुक्त गैर-सरकारी साक्षी भी चुन सकती है।

संबंधित मंत्रालय के वार्षिक प्रतिवेदन, तदर्थ समितियों के, जो मंत्रालय की विशिष्ट समस्याओं की जांच करने के लिए नियुक्त की गई हों, विशेष प्रतिवेदन, मंत्रालय द्वारा प्रदान की गई सामग्री, लिखित प्रश्नावली के उत्तर, अध्ययन हेतु किए गए दौरों के दौरान में हुए अनुभवों व सरकारी तथा गैर-सरकारी साक्षियों के साथ हुई बातचीत के आधार पर प्राक्कलन समिति के प्रतिवेदनों के प्रारूप तैयार किए जाते हैं। समिति द्वारा प्रतिवेदन के प्रारूप पर विचार किए जाने तथा उसके अंगीकृत किए जाने के पश्चात उसकी एक प्रति "गोपनीय" अंकित करके तथ्य संबंधी ब्यौरों के सत्यापन और ऐसी कार्यवाही के लिए जो आवश्यक हो, संबंधित मंत्रालय के पास भेज दी जाती है तथा एक प्रति वित्त मंत्रालय के पास भी भेजी जाती है। संबंधित मंत्रालय द्वारा प्रतिवेदन के तथ्यात्मक सत्यापन के पूर्ण होने के पश्चात् वह मुद्रित किया जाता है और प्राक्कलन समिति के सभापति द्वारा सदन में प्रस्तुत किया जाता है। प्रति-वेदन एक बार सदन में प्रस्तुत किए जाने पर गुप्त नहीं रहता और हर किसी को मिल सकता है।

ऊपर वर्णित प्रक्रिया से यह पता चलेगा कि प्राक्क-लन समिति उस मंत्रालय से संबंधित, जिसके प्राक्कलनों की जांच होती है, विभिन्न समस्याओं का बहुत विस्तृत अध्ययन करती है और कोई भी सिफारिशें करने के पूर्व बहुत परिश्रम करती है। इसलिए सरकार प्राक्कलन समिति द्वारा की जाने वाली सिफारिशों को बहुत महत्व देती है। फिर संबंधित मंत्रालय कालान्तर में प्राक्कलन समिति के समक्ष एक विवरण प्रस्तुत करता है जिसमें समिति की सिफारिशों पर उसके द्वारा की गई कार्यवाही का उल्लेख होता है। प्राक्कलन समिति सम्बन्धित मंत्रालय द्वारा की गई कार्यवाही का पुनरीक्षण करती है और मंत्रालय द्वारा की गई कार्यवाही पर एक और प्रतिवेदन सदन के समक्ष प्रस्तुत करती है।

प्राक्कलन समिति को कार्य करते हुए देखना शिक्षा-प्रद है। एक ओर तो वरिष्ठ अधिकारियों का संचित अनुभव होता है जिन्होंने अपना जीवन अपने प्रभारी कार्य के लिए अर्पित कर दिया है। दूसरी ओर जनता के प्रतिनिधि-वास्तविक प्रभु हैं जिनको चर्चाधीन विषयों का विस्तृत विशारदों जैसा ज्ञान नहीं होता परन्तु जो जनता के साथ अपने निकट सम्पर्क के कारण इस बात की जान-कारी रखते हैं कि कार्यपालिका द्वारा अपनाई जाने वाली विभिन्न नीतियों और कार्यवाहियों का सामान्य जनता पर कैसा प्रभाव पड़ रहा है। दोनों समूहों के स्वतंत्र और निस्संकोच मत-विनिमय से जो प्राप्ति होती है वह ऐसी चीज है जो किसी भी एक के द्वारा अकेले नहीं प्राप्त की जा सकती थी। इससे दोनों पक्षों को लाभ होता है: कार्यपालिका को यह मालूम हो जाता है कि जनता कैसे

उनके प्रतिनिधियों की उनकी विभिन्न नीतियों और कार्यवाहियों के प्रति क्या प्रतिक्रिया है। दूसरी ओर विधायकों को भी प्रशासकों की कठिनाइयों की जानकारी हो जाती है जिनका सामना उन्हें प्रतिदिन के कार्य में करना पड़ता है। अस्तु वे कार्यपालिका की केवल आलोचना करने के स्थान पर उनकी समस्याओं को समझने लगते हैं और रचनात्मक सुझाव देने में समर्थ होते हैं। इस प्रकार प्राक्कलन समिति के सदस्यों द्वारा उपलब्ध प्रशासन के विभिन्न पहलुओं की निकट जानकारी सदस्यों के लिए प्रशासी उत्तरदायित्व वहन करने के लिए लाभकारी प्रशिक्षण का आधार बन जाती है। यह तथ्य कि अनेक मंत्री और उपमंत्री उन लोगों में से लिये गए हैं जो प्राक्कलन समिति के सदस्य रहे हैं इस बात का संकेत है कि प्राक्कलन समिति के सदस्य के रूप में उपलब्ध अनुभव को सुशासन की कला सीखने की दृष्टि से काफ़ी महत्व दिया जाता है।

किए गए कार्य का पुनरीक्षण

१९५० में अपने प्रादुर्भाव से लेकर ३१ दिसम्बर, १९५६ तक प्राक्कलन समिति ने विभिन्न मंत्रालयों पर ४३ प्रतिवेदन प्रस्तुत किए हैं। प्रत्येक वर्ष में प्रस्तुत किए गए प्रतिवेदनों की संख्या निम्न प्रकार है:—

१९५०–५१ . . .	४
१९५१–५२ . . .	१
१९५२–५३ . . .	कुछ नहीं
१९५३–५४ . . .	६
१९५४–५५ . . .	५
१९५५–५६ . . .	१७
१९५६–५७ . . .	१०

(३१ दिसम्बर, १९५६ तक)

वर्ष १९५५–५६ बहुत महत्वपूर्ण रहा। इस वर्ष में प्राक्कलन समिति ने रेलवे मंत्रालय के प्राक्कलनों का गहन अध्ययन किया और उस मंत्रालय पर १५ प्रतिवेदन प्रस्तुत किए। जहां तक प्राक्कलन समिति के एक आर्थिक सत्र में एक मंत्रालय पर प्रतिवेदनों की संख्या का संबंध है, यह सदा के लिए एक रिकार्ड रहेगा। उनकी सिफारिशों पर की गई कार्यवाही के संबंध में अभी तक प्राप्त विवरणों से यह ज्ञात होता है कि प्राक्कलन समिति द्वारा की गई अधिकांश सिफारिशें रेलवे मंत्रालय द्वारा स्वीकार कर ली गई हैं। यह तथ्य स्वयं समिति द्वारा किए कार्य की अच्छाई का द्योतक है।

प्राक्कलन समिति के कार्यकरण का सर्वप्रमुख लक्षण अच्छा वातावरण है, जिसमें उसका विचार-विमर्श चलता है। जब सरकारी साक्षियों का दृष्टिकोण समिति के सदस्यों से भिन्न होता है तो उनको (सरकारी साक्षियों को) अपने दृष्टिकोण के अपनाए जाने के कारण विस्तारपूर्वक और निस्संकोच रूप से बताने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिन में समिति के सदस्यों को तथ्यों और आंकड़ों के बल के कारण सरकारी साक्षियों का दृष्टिकोण स्वीकार करना पड़ा। ऐसे भी उदाहरण हैं जिनमें स्वतंत्र और निस्संकोच मत-विनिमय के पश्चात् सरकारी साक्षियों ने समिति के सदस्यों द्वारा प्रकट किया गया भिन्न दृष्टिकोण स्वीकार किया। अनेक मामलों में समिति द्वारा रखे गए सुझाव सरकारी साक्षियों द्वारा तत्काल स्वीकार कर लिए गए और उन्हें समिति द्वारा प्रतिवेदन के औपचारिक प्रस्तुतीकरण की प्रतीक्षा किए बिना ही कार्यान्वित कर दिया गया। इस दृष्टि से कि भारत सरकार के उच्च पदाधिकारी, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व ब्रिटिश नौकरशाही के अंग समझे जाते थे, अब अविशेषज्ञों के एक समुदाय द्वारा दिए गए रचनात्मक सुझावों को ऐसी मान्यता दें तथा विधायकगण, जो पहले समस्त सरकारी प्रस्तावों का विरोध करने के आदी थे, अब अपना पर्याप्त समय वास्तविक समस्याओं के अध्ययन में, जिनका हल करना हो, तथा स्थायी पदाधिकारियों की कठिनाइयां समझने में लगायें—यह पता चलता है कि संसदीय प्रजातंत्र की भावना सरकार तथा विधान कार्यक्षेत्रों में दृढ़ता से जम रही है और अन्ततोगत्वा भावना का ही महत्व होता है, स्वरूप का नहीं।

लोक-सभा सचिवालय में गवेषणा और निर्देश सेवा

ए० आर० शिराली

उप-सचिव, लोक-सभा सचिवालय

अनुभव से मालूम हुआ है कि विधान-मण्डल और निर्वाचक-वर्ग के प्रति अनेक सार्वजनिक उत्तर-दायित्व होने के कारण सामान्य विधायक के पास गवेषणा करने अथवा उपलब्ध सूत्रों से ऐसे तथ्य और आंकड़े जमा करने के लिए, जो विधान कार्य के लिए आवश्यक हों, समय नहीं होता। ऐसी जानकारी एक विधायक को विधान-मंडलों मे होने वाले वाद-विवादों में कार्य साधक रूप से भाग लेने में सहायता देती है। इस मामले में विधान-मंडल के सचिवालय को एक महत्व-पूर्ण कर्तव्य का पालन करना होता है ताकि न केवल विधायकों को समकालीन विचारों और घटनाओं की जानकारी कराये वरन् वे जो जानकारी चाहें उस के प्राप्त करने में उन को साचिविक सहायता भी उप-लब्ध कराये। जहां तक लोक-सभा का सम्बन्ध है, इन कार्यों का सम्पादन लोक-सभा सचिवालय की रिसर्च एण्ड रैफरेंस शाखा करती है। वह संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस की लेजिस्लेटिव रैफरेंस सर्विस तथा वेस्टमिंस्टर में हाउस आफ कामन्स के पुस्तकालय के रिसर्च एण्ड रैफरेंस डिवीजन के समनुरूप है, परन्तु आकार में अपेक्षाकृत छोटी है। इन का संक्षिप्त वर्णन यहां असंगत नहीं होगा।

संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस में :

संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस में लेजिस्लेटिव रैफरेंस सर्विस की स्थापना १९१४ में की गई थी। कानून द्वारा उस के कार्यक्षेत्र और प्रयोजन की व्याख्या निम्न प्रकार की गई है :

> "अनुवादों, अनुक्रमणिकाओं, सार-संग्रहों, संकलनों और सूचनापत्रों (बुलेटिन) में तथा अन्यथा उपलब्ध विधान सम्बंधी आंकड़ों का संग्रह, उन का वर्गीकरण तथा उन्हें कांग्रेस को उपलब्ध कराना तथा ऐसे आंकड़ों को कांग्रेस तथा उस की समितियों और सदस्यों के लिये उपयोगी बनाना।"

इस सर्विस को परिनियत स्वीकृति लेजिस्लेटिव रिआर्गेनाइज़ेशन ऐक्ट, १९४६ के अन्तर्गत प्राप्त हुई। इस अधिनियम ने सेवा के कार्यों का विस्तार भी किया जो उस के सदस्यों के लिये किये जाने वाले कार्य के अतिरिक्त निम्न प्रकार था :

> "किसी भी सदन की किसी भी समिति अथवा किसी भी संयुक्त समिति को उस के समक्ष लम्बित विधान-प्रस्तावों, अथवा राष्ट्रपति अथवा किसी कार्य-कारी अभिकर्ता द्वारा कांग्रेस को प्रस्तुत सिफारिशों के विश्लेषण, परिचय तथा मूल्यांकन में परामर्श और सहायता देना, और अन्य प्रकार से समिति के समक्ष कार्यों के उचित निर्णय के लिये आधार प्रदान करने में सहायता देना और कांग्रेस की समितियों के समक्ष सार्वजनिक सुनवाइयों और किसी भी सदन में पुरःस्थापित सार्वजनिक सा-मान्य विधेयकों और संकल्पों के संक्षेप और सार संग्रह तैयार करना।"

लेजिस्लेटिव रैफरेंस सर्विस में वकीलों, अर्थ-शास्त्रियों, राजनैतिक वैज्ञानिकों, इतिहासकारों, पुस्त-कालयाध्यक्षों, गवेषणा-कर्ताओं और विश्लेषयिताओं की संख्या १५० से अधिक है। वह सात उप-विभागों में विभाजित है, अर्थात्, इतिहास और सामान्य गवेषणा अमेरिकी विधि, अर्थ-शास्त्र, वैदेशिक कार्य, सरकार

और पुस्तकालय सेवायें । उस के कार्यों में सम्मिलित विधेयकों पर ज्ञापन और प्रतिवेदन, भाषणों और लेखों के प्रारूप, चार्ट और बिन्दुरेखा (ग्राफ़) और ग्रन्थसूची तैयार करना सम्मिलित है । विशेष सेवाओं में सार्वजनिक सामान्य विधेयकों का सार-संग्रह, समितियों के लिये पृष्ठभूमि-सामग्री और समिति की सुनवाइयों का सारांश तैयार करना सम्मिलित है । दस वर्षों की संक्षिप्त अवधि में ही यह सेवा जार्ज गैलोव के शब्दों में "कांग्रेस का प्रमुख गवेषणा अंग बन गई है ।"*

हाउस आफ कामन्स में :

हाउस आफ़ कामन्स पुस्तकालय के रैफरेंस एण्ड रिसर्च डिवीजनों की स्थापना गत महायुद्ध के तुरन्त पश्चात् पुस्तकालय संबंधी प्रवर समिति (१९४५-४६) की सिफारिशों के अनुसार की गई थी, जिन में पुस्तकालय को अधिक सामग्री और कर्मचारी देने की आवश्यकता पर जोर दिया गया था, ताकि वह संसत्सदस्यों को विशद सहायता और विभिन्न विषयों पर परामर्श देने में समर्थ हो सके । रैफरेंस डिवीजन आधुनिक निर्देश सामग्री की सहायता से सदस्यों की पूछताछ के तुरन्त तथा सही उत्तर प्रदान करता है । दूसरी ओर रिसर्च डिवीजन उन पूछताछों का हल करता है जिनका उत्तर रैफरेंस डिवीजन के कर्मचारियों द्वारा सरलता और शीघ्रता से नहीं दिया जा सकता । रिसर्च डिवीजन का कार्य मोटे तौर से तीन श्रेणियों में विभाजित है : (१) वाद-विवादों से पूर्व सदस्यों के लिये उपयोगी मामलों में गवेषणा ; (२) सदस्यों की वैयक्तिक पूछताछ और (३) संसद् के बाहर के व्यक्तियों और संगठनों की प्रार्थना पर उन्हें जानकारी देना । उपर्युक्त प्रथम श्रेणी के कार्य में कर्मचारी स्वयं अपनी ओर से ग्रन्थ-सूचियां ज्ञापन और सांख्यिकीय-ज्ञापन तैयार करते हैं, जो ससत्सदस्यों को दिये जाते हैं । परन्तु अग्रिमता दूसरी श्रेणी के गवेषणा कार्य, अर्थात् सदस्यों की वैयक्तिक पूछताछ के उत्तर देने को दी जाती है । १९५४ में पुस्तकालय के कुल ३३ कर्मचारियों में से एक-तिहाई निर्देश अथवा गवेषणा कार्यों पर नियुक्त थे ।

लोक-सभा में :

केन्द्रीय विधानमंडल के सचिवालय में [जो उस समय विधान-सभा विभाग (लेजिस्लेटिव असेम्बली डिपार्टमेंट) विभाग कहलाता था] निर्देश विभाग स्थापित करने के प्रस्ताव १९४७ में रखे गये थे । मितव्ययिता समिति के उपयोग के लिये तैयार किये गये एक ज्ञापन में सचिव (श्री महेश्वर नाथ कौल) ने विस्तारपूर्वक विधान मंडल सचिवालय में गवेषणा और निर्देश सेवा की आवश्यकता निम्न प्रकार समझाई थी :

"दूसरा विषय है निर्देश । इस विभाग में कर्मचारी सदस्यों द्वारा साधारण विषयों पर मांगी गई जानकारी एकत्र करेंगे । उदाहरणार्थ, कोई विधेयक सदन में विचाराधीन है । किसी विशेष खण्ड पर चर्चा हो रही है, अथवा ऐसा हो सकता है कि उस सदस्य ने विधेयक का विचारपूर्ण अध्ययन किया था और वह किसी विशेष पहलू पर सामग्री प्राप्त करना चाहता है, जिसका विधेयक के उस खंड में उल्लेख है । वह यह प्रश्न निर्देश विभाग के कर्मचारियों को निर्दिष्ट करेगा और वे तुरन्त उसका हल निकालने में लग जायेंगे और चूंकि उनका मस्तिष्क उस विशेष कार्य में ही लगा रहता है तथा उन्हें प्राविधिक ज्ञान भी होता है, वे तुरन्त ही समस्त जानकारी इकट्ठी कर लेंगे और न केवल सदस्य को समस्त पुस्तकें दे देंगे, वरन् तुरन्त ही लगभग आधे पृष्ठ का एक संक्षिप्त टिप्पणी भी तैयार कर देंगे जिसमें मुख्य-मुख्य बातें और मुख्य निर्देश दिए होंगे जिनका अध्ययन सदस्य कर सकता है और यह निश्चित कर सकता है कि वह उस विषय की सामग्री देखने के बाद सदन में

---

* जार्ज बी० गैलोवे द्वारा लिखित "दि लेजिस्लेटिव रेफरेंस सर्विस ऑफ कांग्रेस" संसदीय कार्य वसन्त, १९५५ ।

क्या दृष्टिकोण अपनाए। इसके लाभ बहुत स्पष्ट हैं और मुझे इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है कि सदन के समस्त सदस्य इसे पसंद करेंगे। यह भी उतना ही स्पष्ट है कि इस प्रकार के कार्य के लिए हम लिपिक (क्लर्क) अथवा साधारण सहायक (असिस्टेंट) नहीं भर्त्ती कर सकते, वरन् हमें ऐसे व्यक्ति भर्त्ती करने होंगे, जिनका प्रारंभिक वेतन अच्छा हो तथा जो पुस्तकालयाध्यक्ष के पथ-दर्शन में प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे और एक वर्ष या ऐसे ही कुछ समय में इस कार्य में पूर्णतः दक्ष हो जायेंगे।

"पुस्तकालय का सबसे महत्वपूर्ण भाग स्पष्टतः उच्च गवेषणा विभाग (एडवांस्ड रिसर्च सैक्शन) है। जैसा कि माननीय अध्यक्ष* महोदय ने हाल में कहा था, जब तक सदस्य स्वयं तथ्यों के व्यौरे से भली प्रकार परिचित नहीं होते जो सरकारी सचिवालय जानता है, तब तक उस कार्य की, जो सरकार करना चाहती है, आलोचना करना अथवा उसका उचित दृष्टि से अध्ययन करना संभव नहीं है। ऐसे अध्ययन के बिना जो आलोचना की जायगी अथवा जो सुझाव दिए जायेंगे, वे व्यर्थ जायेंगे, क्योंकि सचिवालय को, जो मंत्रियों को अनुदेश देता है, तथ्यों की अधिक अच्छी जानकारी होती है।

वर्तमान समय में जब कोई महत्वपूर्ण विधेयक, जैसे दामोदर घाटी विधेयक अथवा आण्विक शक्ति विधेयक, सदन के समक्ष लाया जाता है, तो उसके पूर्व सरकारी विभागों में विशेषज्ञों द्वारा उसका विस्तृत अध्ययन किया जाता है; कभी-कभी प्रश्न के किसी विशेष पहलू का अध्ययन करने के लिए समितियां नियुक्त की जाती हैं। विभिन्न समस्याओं के अध्ययन के दौरान में जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न विधेयक बनते हैं, सरकार उस विषय पर बहुत सी बहुमूल्य जानकारी इकट्ठी करती है जो उसके ही पास रहती है और सदस्यों की जानकारी और पथ-प्रदर्शन के लिए विधान-सभा पुस्तकालय को उपलब्ध नहीं होती। इसलिए सदस्यों की दृष्टि से पुस्तकालय में एक उच्च गवेषणा विभाग का होना महत्वपूर्ण है।

ज्यों ही सरकार यह निर्णय करे कि कोई जटिलसा विधेयक सदन के समक्ष लाया जाना है और वह उस पर सामग्री इकट्ठा करना प्रारंभ करे, ऐसी सामग्री पुस्तकालय के पास भी भेज दी जानी चाहिए अथवा पुस्तकालय स्वयं भी उस विषय पर सामग्री इकट्ठी कर सकता है। उच्च गवेषणा कर्ताओं को इन सब प्रश्नों का विस्तृत अध्ययन करना चाहिए। ये सब प्राविधिक मामले हैं। अमेरिका में इन उच्च गवेषणा कर्ताओं द्वारा किए ज ने वाले अध्ययन को बहुत महत्व दिया जाता है। यह अध्ययन इन गवेषणा कर्ताओं द्वारा किया जाता है और पुस्तिकाओं के रूप में उन सदस्यों को तुरन्त उपलब्ध हो सकता है जो उसमें रुचि रखते हों। मैं जानता हूँ कि यह एक कठिन कार्य है परन्तु मुझे यह भी विश्वास है कि यह काम किसी न किसी दिन उचित कर्मचारियों से युक्त एक समर्थ और योग्यता प्राप्त पुस्तकालयाध्यक्ष की देख रेख में

* उस समय स्वर्गीय श्री गणेश वासुदेव मावलंकर उस पद पर आसीन थे।

करना ही होगा। जब तक विधान मंडल के पुस्तकालय की यह कमी पूरी नहीं की जाती, सदस्यों द्वारा जो भी अध्ययन किया जायगा उसके अक्षमेण होने की संभावना रहेगी। जैसा कि माननीय अध्यक्ष महोदय को ज्ञात है, मंत्री के पास विधेयकों और उसके विस्तृत उपबन्धों और उनके अन्तर्गत नीतियों और सिद्धान्तों के संबंध में परामर्श और अनुदेश देने के लिए सम्पूर्ण सचिवालय और सरकार के समस्त संसाधन होते हैं। जहां तक सदस्यों का संबंध है, उनको प्रारंभ में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इन कठिनाइयों को केवल उस तरीके से दूर किया जा सकता है। जिनका उल्लेख मैंने इन टिप्पणों में किया है।"

मितव्ययिता समिति ने विधान सभा विभाग (लेजिस्लेटिव असेम्बली डिपार्टमेंट) से संलग्न कर्मचारीवर्ग के संबंध में अपने विचारों में अन्य बातों के साथ साथ निम्न विचार भी प्रकट किए थे:

"दो परियोजनायें ऐसी हैं जिन पर विचार करने की आवश्यकता है। ये एक निर्देश विभाग की स्थापना और पुस्तकालय के पुनर्नवीकरण से संबंधित हैं। अमेरिकी नमूने पर एक 'निर्देश विभाग' (रेफरेंस सैक्शन्) सभा के सदस्यों के लिए उपयोगी होगा। अन्य बातों के साथ-साथ उसका कार्य विधान मंडल के सदस्यों द्वारा चाही गई जानकारी इकट्ठी करना और उसे उनके प्रयोग के लिए एकीकृत रूप में उपस्थित करना होगा।"

प्रथम दो वर्ष (१९५०-५२): निर्माण काल

१५ अप्रैल, १९५० को संसद् सचिवालय में (जैसा कि लोक-सभा सचिवालय को उस समय पुकारा जाता था) एक छोटा सा रिसर्च एण्ड रैफरेंस सेक्शन स्थापित किया गया था जिसमें चार गवेषणा अधिकारी (रिसर्च आफिसर) थे जो पहले संविधान सभा के सचिवालय में कार्य करते थे। वर्तमान संगठन का मूल आकार यह था जिसमें अब ३५ कर्मचारी हैं एक मुख्य गवेषणा अधिकारी (चीफ रिसर्च आफिसर) चार गवेषणाधिकारी (रिसर्च आफिसर) और आठ सहायक गवेषणाधिकारी (असिस्टेंट रिसर्च आफिसर) सम्मिलित हैं। अपने कार्यकरण के प्रथम दो वर्षों में ब्रांच ने अच्छी सफलता प्राप्त की, चाहे उसे अभिदर्शनीय भले ही न कहा जाय। किए गए कार्य में विभिन्न मंत्रालयों द्वारा संसद के समक्ष लाए जाने के लिए प्रस्तावित महत्वपूर्ण विधेयकों पर ग्रन्थसूचियां तैयार करना, प्रासंगिक महत्व के कतिपय विषयों पर पुस्तिकायें तैयार करना (उदाहरणार्थ मोनोग्राफ आन कोलम्बो प्लान, मोनोग्राफ आन कोरिया, इलेक्शन मैनुअल), लेखों की वर्गीकृत सूची का प्रकाशन (जिसका नाम "मन्थली लिस्ट आफ सेलेक्टेड आर्टिकिल्स" है), लेखों का सारांश और पुस्तक समीक्षायें ("एब्सट्रेक्टिंग सर्विस") तैयार करना और उसे साइक्लोस्टाइल किये गये रूप में निकालना और संविधान के अनुच्छेदों पर प्रभाव डालने वाले उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णयों के संकलन का प्रकाशन करना। इनके अतिरिक्त विभाग ने संसत्सदस्यों के प्रयोग के लिए अनेक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विषयों पर गवेषण टिप्पण तैयार किए।

तीसरा और चौथा वर्ष (१९५३-५४)—विकासकाल

१९५२ में सामान्य निर्वाचन के पश्चात् विधान-मंडल के दो सदनों का निर्माण हुआ जिनमें कुल ७५० सदस्य थे। सचिवालय की अन्य शाखाओं के साथ रिसर्च सेक्शन पर भी विधान-मंडल के सदस्यों की संख्या में वृद्धि के कारण अधिक उत्तरदायित्व आ पड़ा। सचिवालय की अन्य ब्रांचों के विपरीत रिसर्च सेक्शन ने संसद के दोनों सदनों के सदस्यों का पूछताछ संबंधी कार्य किया। १९५४ में हुए तीन सत्रों के दौरान में संसत्सदस्यों से आर्थिक और राजनैतिक महत्व के विषयों पर १६६ निर्देश प्राप्त हुए। "मन्थली लिस्ट आफ सेलेक्टेड आर्टिकिल्स" का प्रकाशन जारी रहा और "ऐब्सट्रेक्टिंग सर्विस" सदा की तरह सत्र के दिनों में निकलती रही।

विस्तार काल : १९५५-५६

जबकि १९५३-५४ का समय रिसर्च एण्ड रेफरेंस ब्रान्च के लिए संगठन और विकास का था, १९५५-५६ का समय उसके कार्यों के महत्वपूर्ण विस्तार का था। सदस्यों के लिए 'मन्थली लिस्ट आफ सेलेक्टेड आर्टिकिल्स' और 'ऐब्सट्रेक्टिंग सर्विस' न केवल जारी रखी गई वरन् उन्हें दृढ़ भी बनाया गया। नए प्रकार के कार्य प्रारंभ किए गए, कार्य की नई विधियां लागू की गई और इस प्रयोजन के लिए ब्रांच का पुनर्गठन किया गया। प्रारंभिक काल में अधिक जोर निर्देश कार्य पर दिया जाता था, बाद में वह किसी हद तक गवेषणा कार्य पर दिया जाने लगा। यद्यपि रिसर्च एण्ड रैफरेंस ब्रान्च में किए जाने वाले गवेषणा कार्य की तुलना विश्वविद्यालय के निवन्ध (थीसिस) लिखने वाले के गवेषणा कार्य से तो ठीक तरह नहीं की जा सकती किन्तु फिर भी वह अधिदर्शनीय न होते हुए भी धैर्ययुक्त एवं विस्तृत अध्ययन पर आधारित है और उसमें प्राय: वह अध्ययन करना पड़ता है, जो उस विषय पर पहले ही प्रकाशित हो चुका है, उसका संक्षेप करना होता है और उसे इस प्रकार रखना पड़ता है जिससे विधायक उसे शीघ्र समझ सकें और लम्बित विषय पर तुरन्त निर्णय कर सकें। इस प्रयोजन के लिए गवेषणाकर्ता समकालीन मामलों का गहन और निरन्तर अध्ययन भी करता है और आधुनिक विचारों की जानकारी रखता है।

यह ब्रान्च जिन साधनों से विधायकों को विभिन्न क्षेत्रों की समकालीन समस्याओं की जानकारी कराती रहती है उनमें से एक समय-समय पर पुस्तिकाओं और सूचना-विवरणिकाओं का प्रकाशित करना है। आधुनिक संसार में धटना चक्र इतनी तेजी से चलता है कि जब तक पुस्तकें प्रकाशित होकर आती है तब तक वह विषय पुराना हो जाता है। इसलिए गवेषणाधिकारी समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और अन्य प्रकाशनों, सरकारी और गैर-सरकारी दोनों के, द्वारा समकालीन घटनाओं की जानकारी रखता है। तब विभिन्न सूत्रों से प्राप्त सूचना छोटी छोटी पुस्तिकाओं के रूप में संगृहीत की जाती है जो मूलत: विधायकों के लिये होती है परन्तु उनकी इससे अधिक उपयोगिता भी होती है कि यह भविष्य निर्देश के लिये स्वयं गवेषणाकर्ताओं के ही काम आती है। जहां विषय न्यायसंगत सिद्ध हो, पुस्तिकायें और सूचना विवरणिकायें इसलिये तैयार नही की जातीं कि उनमें विनिहित सूचना अन्यत्र उपलव्ध नही है वरन् इसलिये की जाती हैं कि सदस्यों को विभिन्न संलेखों में उपलब्ध सूचना एक स्थान पर सूत्रवद्ध और अधिक ग्राह्य रूप में प्राप्त हो सके।

श्री गैलोवे के अनुसार लेजिस्लेटिव रैफ्रेरेंस सर्विस के विशेषज्ञ राजनीति से विरत रहते हैं। उनकी यह परम्परा रही है कि वे सामयिक राजनीतिक विवादग्रस्त विषयों पर तटस्थ रहे है। जो वात संयुक्त राज्य अमेरिका की काग्रेस के पुस्तकालय के विशेषज्ञों के संवंध में कही गई है वह लोक-सभा सचिवालय के गवेषणा कर्मचारियों के संवंध में भी ठीक है। वे विना किसी व्यक्तिगत पक्षपात के सत्य और तथ्यों की खोज करने वाले हैं।

१९५५ और १९५६ पत्री वर्षो में रिसर्च एण्ड रेफ्रेरेंस ब्रांच ने राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक महत्व के विषयों पर २७ पुस्तिकायें और ३ सूचना विवरणिकायें प्रकाशित कीं। "पंचशील", "स्वेज केनाल", "रिपोर्ट ऑन इंडियाज एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम बाई डाक्टर पॉल एच० एप्पलबी (कम्मेंट्स एण्ड रिएक्शन्स)" "स्टेट्स रिआर्गेनाइजेशन रिपोर्ट (कम्मेंट्स एण्ड रिएक्शन्स)", "प्रेस कमीशन रिपोर्ट (कम्मेंट्स एण्ड रिएक्शन्स)", "इन्सटीट्यूशन्स फॉर इंडस्ट्रियल फाइनेन्स एण्ड डेवलपमेंट (विद स्पेशल रिफ्रेंन्स टु इंडिया)" और "हॉरर कामिक्स" पुस्तिकायें विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन प्रकाशनों का प्रेस तथा जनता ने स्वागत किया और उनमें से कुछ प्रकाशनों के संवंध में सदस्यों ने सदन में प्रशंसात्मक शब्द भी कहे थे। इस ब्रांच के नवीनतम प्रकाशनों में "एवाउट इलेक्शन्स ऐंण्ड इलेक्टर्स", "एटोमिक एण्ड हाइड्रोजन वेपन्स (कम्मेंट्स एण्ड रिएक्शन्स)" और स्वर्गीय अध्यक्ष श्री ग० वा० मावलंकर के भाषणों और लेखों का संग्रह सम्मिलित है।

आम तौर से लोगों को यह मालूम नहीं है कि रिसर्च एण्ड रेफ्रेरेंस ब्रांच पुस्तिकाओं और सूचना विवरणिकाओं के अतिरिक्त विधेयकों तथा चुने हुये विषयों पर ९ पत्रिकायें तथा ग्रन्थसूचियां भी प्रकाशित करती है। पत्रिकाओं में संसदीय पत्रिका (जरनल आफ पालियामेंटरी इन्फार्मेशन) का स्थान महत्वपूर्ण

है, जो पूर्व में अपनी तरह की एकमात्र पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य संसदीय कार्यप्रणालियों और प्रक्रियाओं पर, जिनका भारत तथा बाहर के देशों के विभिन्न विधान मंडलों में विकास हो रहा है, जानकारी प्रदान करना है। यह पत्रिका, जिसका प्रारम्भ अप्रैल, १९५५ में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के आशीर्वाद से हुआ था, विधायकों में प्रिय बन चुकी है। अनेक देशों के विख्यात संसद्विज्ञों से उसकी सफलता की शुभकामनाओं के संदेश प्राप्त हुये हैं। पत्रिका के प्रथम अंक के प्राक्कथन में स्वर्गीय अध्यक्ष श्री मावलंकर ने लिखा था : "मैं विश्वास करता हूं कि 'संसदीय पत्रिका' (जनरल आफ पार्लियामेंटरी इन्फार्मेशन) न केवल भारत के विधान-मंडलों की महत्वपूर्ण घटनाओं का उपयोगी अभिलेख होगा वरन् भारत के लिये प्रजातंत्र के सर्वोत्तम स्वरूप के विकास में योग देने वाले विचारों और अभिमतों के व्यक्त करने का माध्यम भी होगा।"

उन दो पत्रिकाओं अर्थात् 'मन्थली लिस्ट आफ सिलेक्टेड आर्टिकिल्स' और 'एब्सट्रेक्टिंग सर्विस' के अतिरिक्त, जो ब्रांच के प्रारंभिक निर्माण-काल में प्रारम्भ की गई थीं और परिवर्तित एवं परिवर्धित सज्जा के साथ प्रकाशित होती रहीं, गत दो वर्षों में छः और सामयिक पत्रिकायें प्रारम्भ की गई। ये पत्रिकायें निम्नलिखित हैं :—

(१) फोर्टनाइटली न्यूज डाइजेस्ट (पाक्षिक) जिसमें भारतीय तथा विदेशी समाचारपत्रों में प्रकाशित होने वाले महत्वपूर्ण समाचारों और सम्पादकीय टिप्पणियों का सार रहता है ;

(२) एब्सट्रेक्ट्स आफ रिपोर्टस् (त्रैमासिक) जिसमें भारत में तथा विदेशों में सरकारों और विधान मंडलों द्वारा नियुक्त समितियों और आयोगों के प्रतिवेदनों की रूपरेखा रहती है ;

(३) एटामिक न्यूज डाइजेस्ट (मासिक) जिसमें भारत तथा विदेशों में अणु शक्ति के प्रयोग से संबंधित समाचार और विचार रहते हैं ;

(४) डाइजेस्ट आफ सेन्ट्रल ऐक्ट्स (त्रैमासिक) जिसमें संसद् द्वारा पारित, राष्ट्रपति द्वारा अनुमत तथा भारत के राजकीय गजट में प्रकाशित समस्त परिनियमों की रूपरेखा रहती है ;

(५) जूरिडिकल डाइजेस्ट (त्रैमासिक) जिसमें संविधान के उपबन्धों से संबंधित मामलों पर उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के निर्णयों का सार रहता है ; और

(६) वीकली लिस्ट आफ सेलेक्टेड आर्टिकिल्स (साप्ताहिक) जिसमें भारत के प्रमुख समाचारपत्रों में प्रकाशित होने वाले महत्वपूर्ण लेखों की वर्गीकृत सूची रहती है।

वर्ष १९५१ और १९५५ के बीच उच्च न्यायालयों और न्यायाधिकरणों के समक्ष जो महत्वपूर्ण निर्वाचन संबंधी मामले आये तथा जिन पर निर्णय दिये गये उनका भी एक विशेष सार-संग्रह प्रकाशित किया गया। इसकी तथा जूरिडिकल डाइजेस्ट की न केवल सदस्यों द्वारा, वरन् सामान्य जनता द्वारा भी प्रशंसा की गई।

१९५५–५६ के दौरान में विधेयकों और स्थानीय महत्व के विषयों पर तैयार की गई ग्रन्थसूचियों में प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन आफ बुक्स (एमेंडमेट) बिल, १९५५, कापीराइट बिल, १९५६, बिबलियोग्राफीज आॅन "चाइना" एंड "पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन" मुख्य हैं।

पुस्तिकाओं और पत्रिकाओं के अतिरिक्त संसत्सदस्यों से विशिष्ट प्रश्नों पर सूचना प्रदान करने के लिये प्राप्त निर्देशों की संख्या से जिनके उत्तर दिये गये, मालूम होगा कि इस ब्रांच ने सदस्यों की कितनी सहायता की। लोक-सभा के तीन सत्रों (१२वां, १३वां, तथा १४वां) के दौरान में सदस्यों से आर्थिक, सामाजिक, सांविधानिक, विधि संबंधी और संसदीय विषयों पर २८७ निर्देश प्राप्त हुये और पूछी गई बातों का शीघ्र ही पूरा उत्तर देने का प्रत्येक प्रयत्न किया गया। इस कार्य का महत्व सदस्यों ने अनुभव किया और १४ वें सत्र के अन्त में अनेक सदस्यों ने नेताओं और विरोधी दल के सदस्यों समेत ब्रांच को विशेष रूप से धन्यवाद दिया।

सामयिक घटनाओं तथा संसार की विचार-धाराओं को प्रभावित करने वालों के अभिमतों से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखने के लिये इस ब्रांच में एक प्रेस क्लिपिंग यूनिट है, जो गवेषणा कर्मचारियों के लिये प्रतिदिन आवश्यक विभिन्न विषयों के समाचारों का संग्रह रखता

है। इस यूनिट में प्रायः सभी मुख्य समाचारपत्र—भारतीय और विदेशी—आते हैं।

१९५६ के बजट सेशन के दौरान में संसद् ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारूप की चर्चा के लिये एक नई प्रक्रिया अपनाई थी। चूंकि योजना के प्रारूप की चर्चा में बहुत से सदस्य भाग लेना चाहते थे और चूंकि सदन के पास पर्याप्त समय नहीं था इसलिये लोक-सभा की कार्य मंत्रणा समिति ने चार तदर्थ समितियों के निर्माण की सिफारिश की जिनमें से प्रत्येक को योजना की प्रारम्भिक चर्चा के लिये कुछ विषय दिये जाने थे। ये सिफारिशें लोक-सभा द्वारा स्वीकार कर ली गईं और राज्य-सभा ने भी उन पर अपनी सहमति दे दी। चार तदर्थ समितियां (जिनका नाम क, ख, ग और घ समिति रखा गया) निर्मित की गईं जिनमें संसद् के दोनों सदनों के सदस्य थे। इस प्रकार निर्मित समितियों को योजना के प्रारूप के विभिन्न पहलुओं पर केवल अपने विचार व्यक्त करने थे, कोई निर्णय नहीं करना था और न कोई संकल्प पास करना था। इन समितियों की बैठकें मई और जुलाई १९५६ में विभिन्न तिथियों को हुईं तथा उन्होंने जुलाई–अगस्त, १९५६ में अपनी कार्यवाहियों की रूपरेखा संसद् को प्रस्तुत की।

इन समितियों का समस्त सचिविक कार्य रिसर्च एण्ड रैफरेंस ब्रांच द्वारा किया गया।

रिसर्च एण्ड रैफरेंस ब्रांच ने अपने प्रादुर्भाव से ६ वर्षों के अन्दर सदस्यों तथा अन्य लोगों में लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। इसकी प्रकाशित सूचना के लिये प्रार्थनायें न केवल इस देश की संस्थाओं से ही प्राप्त होती हैं वरन् बाहर के देशों की अनेक संस्थाओं से भी। इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि समर्थ एवं अधिकृत गवेषणा विभिन्न सूत्रों से प्राप्त तथ्यों और आंकड़ों सहित विभिन्न विषयों पर प्रकाशित सामग्री के विश्लेषण और लम्बित विधान को प्रभावित करने का प्रयत्न किये बिना उनके तथ्यात्मक उपस्थापन के एक साधन के रूप में रिसर्च एण्ड रैफरेंस ब्रांच के संसत्सदस्यों के लिये अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है।

संसद् में प्रश्नकाल

ए० एस० रिखी

उप-सचिव, लोक-सभा सचिवालय

प्रश्नों का महत्व

मई, १९५२ में वर्तमान संसद् के प्रारम्भ से १४ सत्रों में ८७,६७५ प्रश्नों की सूचनायें लोक-सभा सचिवालय में प्राप्त हुईं जिनमें से ४३,५६२ प्रश्न लोक-सभा में पूछे गये और उनके उत्तर दिये गये। अभी पिछले साल प्रश्नों की संख्या २२,६५१ तक पहुंच गयी थी। इन आंकड़ों से यही ज्ञात होता है कि हमारी संसदीय कार्यवाही में प्रश्नकाल कितना महत्वपूर्ण हो गया है। तुलनात्मक दृष्टि से उसका इतिहास संक्षिप्त होते हुये भी हमारे सदन के प्रश्नकाल में भी 'संसद्-जननी' की सभी विशिष्ट बातें आ गयी हैं।

इस एक घंटे के दौरान में, जो कि सदन में विधान कार्य तथा अन्य कार्य प्रारम्भ होने के पहले गैर-सरकारी सदस्यों द्वारा प्रश्न पूछे जाने के लिये प्रतिदिन अलग रखा जाता है, प्रशासन तथा सरकारी नीति का प्रत्येक पहलू, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही, उठाया जाता है। यह सरकार की परीक्षा का समय होता है और जिस मंत्री की उत्तर देने की वारी हो उसे खड़ा होना पड़ता है और अपने अथवा अपने प्रशासन के वृत्त और अवृत कार्यों के लिये उत्तर देना पड़ता है।

गैलरियों में बैठे दर्शकों के लिये, प्रश्नकाल का मुख्य आकर्षण "अक्ल की लड़ाई", आक्रमण और प्रत्या-क्रमण, हंसी के चुटकुले और एक क्षण इस ओर हंसी तो दूसरे क्षण दूसरी ओर हंसी का होता है। मुख्य प्रश्न तो अनुपूरक प्रश्नों की वौछार के लिये केवल एक संकेत मात्र होता है जिन्हें विरोधी दल मंत्री को परास्त करने के लिये या उनके द्वारा असावधानी से कोई तथ्य स्वीकार कर लेने या कोई कार्यवाही करने का आश्वासन ले लेने के लिये ढूंढ निकालते हैं। गम्भीर और कभी कभी उत्तेजनापूर्ण वातावरण में मंत्री की योग्यता और संसदकार्य के लिये उनकी रुचि की कठिन परीक्षा होती है और जिस हदतक कि मंत्री का तथ्यों पर पूरा प्रभुत्व हो, वे हाजिरजवाव हों और अपने कार्य के प्रति सावधान हों, उसी हद तक वे अपने मंत्रिपद का कार्य-काल सफल वना सकते हैं या बिगाड़ सकते हैं।

सदस्यों के लिये, प्रश्नकाल, अध्यक्ष का ध्यान आकृष्ट किये बिना या दल-सचेतक की सम्मति मांगे विना ही, सार्वजनिक मामलों की चर्चा में भाग लेने के लिये एक अचूक अवसर होता है।

प्रश्नकाल से समाचार पत्रों के लिये भी एक निश्चित सामग्री प्राप्त होती है और समाचार पत्रों में जिन अनेक विषयों की चर्चा की जाती है उनके लिये प्रेरणा संसदीय प्रश्नों और उनके उत्तरों से प्राप्त होती है।

प्रश्नकाल मंत्रियों के लिये परेशानी का कारण न होकर उन्हें नीति अथवा अपने प्रशासन के कार्यों की व्याख्या करने का एक अवसर प्रदान करता है। प्रश्नों के उत्तर में मंत्रियों ने राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर कई महत्वपूर्ण वक्तव्य दिये हैं। इस प्रश्नकाल के द्वारा ही सरकार को राष्ट्र की भावनाओं का तुरन्त पता लग जाता है और वह तदनुरूप अपनी नीति और कार्यवाही बना लेती है। प्रश्नों के माध्यम से मंत्रियों को अनेक बुराइयों का पता चल जाता है जिनका अन्यथा उन्हें पता नहीं लगता। कभी कभी प्रश्नों से आयोग, जांच न्यायालय तक की नियुक्ति हो जाती है और कभी विधान का सूत्रपात हो जाता है जब कि उपस्थित किये गये विषय जनता में आतंक फैलाने के लिये पर्याप्त गम्भीर होते हैं।

प्रश्न प्रक्रिया का विकास

भारतीय संसद में प्रश्न प्रक्रिया के विकास का विधान मंडल की रचना, कार्य और शक्तियों में समय समय पर किये गये संवैधानिक परिवर्तनों से वड़ा घनिष्ट संबंध रहा है। ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में लागू किये गये प्रत्येक संवैधानिक सुधार के साथ, विधान मंडल में प्रश्न पूछने का क्षेत्र बढ़ता गया और प्रश्नों के संबंध में नियम तदनुसार जोड़े गये या उनमें परिवर्तन किया गया, जिससे लोकसभा में प्रक्रिया के वर्तमान नियम अनेक वर्षों के अनुभव के परिणामस्वरूप हैं।

प्रश्नों के प्रकार

प्रश्न तीन प्रकार के होते हैं : तारांकित, अतारांकित और अल्पसूचना प्रश्न। जव कोई सदस्य चाहता है कि प्रश्न का मौखिक उत्तर दिया जाये तव वह प्रश्न की सूचना देते समय उस प्रश्न पर तारा का चिन्ह लगा देता है। यदि वह अपने प्रश्न पर ऐसा चिन्ह नहीं लगाता तो उसका केवल लिखित उत्तर ही प्राप्त होता है। एक दिन की सूची में एक सदस्य के मौखिक उत्तर के केवल तीन ही प्रश्न हो सकते हैं यद्यपि लिखित उत्तरों के संबंध में उसके अधिकार पर ऐसा कोई निर्वन्धन नहीं है।

प्रक्रिया नियम के अधीन, प्रश्न के उत्तर के लिये कम से कम १० दिन की सूचना आवश्यक है। किन्तु सत्र के दौरान में ऐसे अवसर आ सकते हैं जवकि सदस्य दस दिन से कम अवधि में अविलम्वनीय लोक-महत्व के कुछ प्रश्नों का उत्तर चाहें। ऐसे अवसरों के लिये, नियमों में "अल्पसूचना प्रश्न" का उपवन्ध है। इसके अलावा सदस्य मौखिक अथवा तारांकित प्रश्नों के उत्तरों से उत्पन्न होने वाले अनुपूरक प्रश्न तत्काल पूछ सकते हैं।

प्रश्नकाल की उपांग के रूप में नियमों में किसी प्रश्न से उत्पन्न होने वाले विपयों पर, जिसका विषय ऐसे अविलम्वनीय लोक-महत्व का हो कि उसका और आगे स्पष्टीकरण आवश्यक हो, "आधे घंटे की चर्चा" का उपवन्ध है। उसकी विशेषता यह है कि मतदान के लिये सभा के समक्ष कोई औपचारिक प्रस्ताव नहीं रखा जाता। उससे सदस्य को उस विषय पर वक्तव्य देने और संवंधित मंत्री को उसका उत्तर देने के लिये पर्याप्त अवसंर मिल जाता है।

लोक-सभा में प्रश्न प्रक्रिया के अंग

हमारी संसदीय कार्यवाही में प्रश्नकाल को जो महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है उसे और अधिकाधिक सदस्यों की उस अवसर से लाभ उठाने की इच्छा को ध्यान में रखते हुये, लोक-सभा में प्रक्रिया नियम इस प्रकार वनाये गये हैं कि संसदीय समय की अधिकतम बचत हो और उपलव्ध सीमित समय के भीतर ही सदन के अधिक से अधिक सदस्यों को अधिक से अधिक प्रश्न पूछने का अवसर प्राप्त हो।

लोक-सभा में ९५ प्रतिशत प्रश्नों की सूचना मौखिक उत्तर के लिये दी जाती है। तारांकित प्रश्न का उत्तर एक लम्वा वक्तव्य या सांख्यकीय जानकारी या स्थानीय हित के साधारण से विषय के संबंध में तथ्यों का एक विवरण हो सकता है। यदि प्रश्न काल ऐसे प्रश्नों का मौखिक उत्तर देने में व्यतीत होने दिया जाये तो यह स्पष्ट है कि वास्तव में लोक महत्व के ज्वलन्त विषयों से संबंधित प्रश्न पीछे पड़ जायेंगे या उनके मौखिक उत्तर के लिये समय नहीं मिलेगा और इस प्रकार सदस्य अनुपूरक प्रश्न पूछने के अवसर से वंचित रह जायेंगे।

तारांकित प्रश्नों को अतारांकित बनाना

अतः लोक-सभा के नियमों में अध्यक्ष को स्व-विवेक की शक्ति दी गयी है कि यदि उसकी राय में कोई प्रश्न इस प्रकार का हो कि उसका लिखित उत्तर अधिक उपयुक्त होगा तो उस प्रश्न के मौखिक उत्तर के लिये सूचना दी जाने पर भी वह उसे लिखित उत्तरों के प्रश्नों की सूची में डाल सकता है।

तदनुसार अध्यक्ष ने एक निदेश जारी किया है कि किसी दिन के लिये प्रत्येक सदस्य के नाम के प्रश्न मौखिक उत्तर के लिये प्रश्नों की सूची में तीन चक्रों में इस प्रकार रखे जायें कि प्रत्येक चक्र में एक सदस्य के एक से अधिक प्रश्न न हों। इस प्रकार प्रत्येक सदस्य के, जिसके प्रश्न किसी दिन की सूची में हों, कम से कम एक प्रश्न का उत्तर तो अवश्य ही पहले चक्र में दिया जायगा और पहला चक्र पूरा होने पर यदि प्रश्नकाल का समय वचा हो तो उसके दूसरे और तीसरे प्रश्न का

भी उत्तर दिया जायगा। इस प्रक्रिया से अधिक सदस्यों को प्रश्नकाल के दौरान में अपने प्रश्न पूछने का अवसर मिलेगा।

प्रश्नकाल में समय की बचत करने के लिये दूसरी प्रक्रिया यह है कि जहां कहीं किसी तारांकित प्रश्न या उसके किसी भाग का उत्तर एक लम्बे विवरण या सांख्यकीय जानकारी के रूप में हो, मंत्री उसे सभा पटल पर रख देते हैं और उसकी प्रतियां प्रश्नकाल प्रारम्भ होने से १५ मिनट पहले संसदीय सूचना कार्यालय में सदस्यों को देखने के लिये उपलब्ध होती हैं ताकि उनके आधार पर वे अनुपूरक प्रश्न पूछ सकें।

१९५३ से एक प्रथा यह जारी की गयी है कि जब एक ही विषय पर एक से अधिक सदस्यों से प्रश्न प्राप्त हों तो उनके नाम एक साथ रखे जाते हैं। चूंकि अनुपूरक प्रश्न पूछने में वरीयता अध्यक्ष द्वारा सर्व प्रथम उस सदस्य को दी जाती है जिसके नाम में प्रश्न हो, नाम एक साथ रखे जाने से अध्यक्ष को यह जानने में सहूलियत होती है कि प्रश्न के विषय में किन किन सदस्यों को दिलचस्पी है।

प्रश्नकाल में सदा ही यह एक खतरा रहता है कि यदि अध्यक्ष अनुपूरक प्रश्नों पर नियंत्रण न रखे तो ये एक वाद विवाद का रूप धारण कर लेते हैं। अत: अध्यक्ष को प्रश्नों के विषय के तुलनात्मक महत्व के अनुसार अनुपूरक प्रश्नों के लिये अनुमति देने में सावधान रहना पड़ता है।

सभा के अधिकार और विशेषाधिकार के संरक्षक के रूप में अध्यक्ष ऐसे प्रश्न ग्रहण करने के लिये बाध्य है जो दुरुपयोग, अन्याय, भेदभाव और प्रशासनिक कार्य कुशलता के अभाव पर प्रकाश डालते हैं। साथ ही उन्हें यह भी जांच लेना होगा कि केवल कीचड़ उछालने की दृष्टि से पूछे गये निराधार प्रश्न स्वीकार नहीं किये जाते ताकि निराधार आरोप, कलंक अथवा अनुमानों का अनुचित प्रचार न किया जाये। अत: उसे इस बात का समाधान कर लेना होगा कि प्रश्न स्वीकार कर लेने या सभा में उस विषय की चर्चा करने की अनुमति देने के लिए यथोचित कारण है।

प्रश्न उन विषयों के बारे में हो सकते हैं जिनके संबंध में सरकार के उत्तरदायित्व की सीमा स्पष्ट न हो क्योंकि हमारा संविधान संघात्मक रूप का है। ऐसे मामलों में मंत्रालय से संवैधानिक स्थिति मालूम कर लेनी होगी।

प्रश्न का उद्देश्य जानकारी प्राप्त करना या कार्यवाही के लिये आग्रह करना होता है। प्रश्नों का उत्तर देने के लिये मंत्री जितनी अवधि की सूचना पाने का अधिकारी है उस अवधि में उसके लिये सदा ही यह संभव नहीं होता कि वह सारी जानकारी एकत्र कर ले और सभा के समक्ष प्रस्तुत करे। ऐसी दशा में मंत्री को उत्तर में यह बताना पड़ता है कि जानकारी एकत्र की जायेगी और यथासमय पटल पर रख दी जायगी। यह भी संभव है कि जब सदस्य प्रश्नों या अनुपूरक प्रश्नों द्वारा कार्यवाही के लिये आग्रह करें, तो मंत्री किसी विषय पर विचार करने या उस संबंध में आश्वासन, प्रतिज्ञा अथवा वचन देने के लिये सहमत हो जायें। पहले सभा में दिये गये ऐसे आश्वासनों का उल्लेख वाद विवाद में रहता था किन्तु इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था कि वे पूरे किये गये या नहीं जबतक कि उसमें दिलचस्पी लेने वाले सदस्य स्वत: और आगे प्रश्नों के जरिये उनके संबंध में आग्रह न करें। एक बार सभा में आश्वासन दिये जाने पर वह प्रश्न पूछने वाले सदस्य और उत्तर देने वाले मंत्री के बीच का विषय नहीं रह जाता, बल्कि वह संपूर्ण सभा को दिया गया आश्वासन होता है।

सरकारी आश्वासनों संबंधी समिति

इन आश्वासनों के परिपालन की ओर ध्यान देने के हेतु अध्यक्ष ने, नियमों के अधीन, सरकारी आश्वासनों संबंधी समिति नामक एक समिति बनायी है। उसका कार्य इस ओर ध्यान देना है कि सभा में दिये गये आश्वासन, वचन और प्रतिज्ञाएं कार्यान्वित की जायें और उनका परिपालन संतोषजनक तथा यथोचित समय के अन्दर हो। दिये गये आश्वासनों की तथा सरकार द्वारा उन पर की गयी कार्यवाही की परीक्षा करने के लिये समय समय पर इस समिति की बैठक होती है और वह अपना प्रतिवेदन सभा को प्रस्तुत करती है।

लोक-सभा सचिवालय के कार्य

प्रश्नों के संबंध में अनेक विभागीय विनिश्चय, निर्णय तथा अध्यक्ष के अभिकथन के अतिरिक्त, जो कि मार्गदर्शन के लिये एक आवश्यक संहिता होती है, प्रश्नों की ग्राह्यता संबंधी नियमों के आधार पर, लोक-सभा में प्रश्न प्रक्रिया एक उलझी और पेचीदा प्रक्रिया है। दिन प्रति दिन के प्रशासन में इस संबंध में अत्यधिक सावधानी और सतर्कता की आवश्यकता है। इस प्रकार लोक-सभा सचिवालय का, सभा में प्रश्न काल के पहले की प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाने के हेतु सदस्यों तथा मंत्रियों को सहायता करने में बहुत बड़ा हाथ होता है।

लोक-सभा सचिवालय में जब प्रश्न प्राप्त होता है तब जहां कहीं आवश्यक होता है उसका सम्पादन किया जाता है और फिर उसके तारांकित, अतारांकित या अल्पसूचना प्रश्न होने के अनुसार, उसकी प्रविष्टि की जाती है और उस पर संख्या दी जाती है। उसके तुरन्त बाद प्रतियां तैयार की जाती है और संबंधित मंत्रालयों को भेज दी जाती है ताकि वे उस पर अपनी ओर से कार्यवाही कर सकें।

प्रश्नों की ग्राह्यता

प्रश्नों को निबटाने में अगली दशा ग्राह्यता की दृष्टि से उनके परीक्षण की होती है। यहां जो व्यक्ति प्रश्नों की जांच करते है उनमें बहुत अधिक ज्ञान, अनुभव और विश्वसनीय स्मरणशक्ति होना जरूरी होता है। प्रश्नों की जांच करने वाले पदाधिकारियों और कर्मचारियों को स्वदेश और विदेश की घटनाओं से पूर्ण अवगत रहना होता है। सर्वोपरि उन्हें घटनाओं को समझने के लिये पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान और तीक्ष्ण दृष्टि रखनी चाहिये।

प्रश्नों के संबंध में पुनरावृत्ति होना एक सामान्य बात है। अतः लोक-सभा सचिवालय की प्रश्न शाखा में प्रश्नों की एक पूरी और विस्तृत अनुक्रमणिका रखी जाती है। इसके अतिरिक्त, प्रश्नों में उपस्थित विषयों पर मंत्रालयों से पहले प्राप्त सभी जानकारी निर्देश के प्रयोजनों के लिये बिल्कुल तैयार रखी जाती है।

लोक-सभा सचिवालय में उपलब्ध सभी जानकारी के होने पर भी कुछ प्रश्नों के लिये यह आवश्यक होता है कि उनकी ग्राह्यता पर विचार करने के पहले कुछ और तथ्य मालूम कर लिये जायें। ऐसे मामलों में वे वास्तविक विवरण के लिये मंत्रालयों को भेजे जाते है और उसके बाद प्रश्नों की ग्राह्यता पर विचार किया जाता है।

प्रश्नों की ग्राह्यता का निर्णय करने में अध्यक्ष पर इस बात का प्रभाव नहीं पड़ता कि उससे सरकार हतबुद्धि हो जायगी या कोई विचित्र स्थिति उत्पन्न हो जायेगी या उसका उत्तर देना सार्वजनिक हित में न होगा। पहले के अनेक निर्णयों द्वारा अध्यक्ष ने सदा ही इस बात का समर्थन किया है कि किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर देना सार्वजनिक हित में है या नहीं इसका निर्णय स्वतः सरकार ही अच्छी तरह कर सकती है और उसे स्वतंत्रता है कि वह सार्वजनिक हित में किसी प्रश्न का उत्तर देने से इंकार कर दे। जहां बहुत नाजुक मामले होते हैं वहां सरकार अपने सचेतकों के द्वारा संबंधित मंत्रियों को समझा सकती है कि सार्वजनिक हित में क्यों ऐसा प्रश्न नहीं रखा जाना चाहिये।

अन्तिम आदेश पारित किये जाने के बाद प्रश्न शाखा गृहीत और अगृहीत प्रश्नों को अलग अलग कर लेती है। जो प्रश्न अस्वीकृत कर दिये गये हों या वापस ले लिये गये हों उनकी सूचना के परिपत्र वह प्रतिदिन मंत्रालयों को भेज देती है ताकि वे उनपर आगे कार्यवाही न करें।

गृहीत प्रश्न तारांकित और अतारांकित में विभाजित किये जाते हैं। उसके बाद तारांकित और अतारांकित प्रश्नों की सूचियों की पांडुलिपि मुद्रणालय को भेज दी जाती हैं और छपी हुई प्रतियां उत्तर दिये जाने वाले दिनांक से पांच दिन पहले मंत्रियों और सदस्यों को भेज दी जाती हैं।

जब प्रश्नों के लिये अनुमति नही दी जाती तो सदस्यों को उसके कारणों सहित तथ्य बता दिये जाते है। जब किसी प्रश्न के लिये इस आधार पर कि वह पर्याप्त लोक-महत्व का प्रश्न नहीं है, अनुमति नहीं दी जाती तब उस प्रश्न संबंधी तथ्य जो कि मंत्रालय से प्राप्त होते हैं, सदस्यों को बता दिये जाते हैं। यदि प्रश्न

परिवर्तित या पुनरीक्षित रूप में गृहीत होते हैं तो प्रायः सदस्यों को उसकी प्रतियां, उन्हें उचित सूची में रखे जाने के पहले ही, भेज दी जाती हैं।

जब मंत्री प्रश्नों के उत्तर में सभा पटल पर विवरण रखना चाहते हैं या दिये जाने वाले उत्तरों में पहले के उत्तरों का निर्देश होता है तब उन प्रश्नों के संबंध में विवरण सभाकक्ष में सूचनाफलक पर लगा दिये जाते हैं। इन पत्रों की प्रतियां प्रश्न काल प्रारम्भ होने के पहले सदस्यों के लिये उपलब्ध कर दी जाती हैं ताकि सभा में प्रश्न पूछे जाने पर वे, यदि चाहें तो, अनुपूरक प्रश्न पूछ सकें।

इसी प्रकार जब कोई मंत्री एक वक्तव्य द्वारा किसी प्रश्न के अपने उत्तर का शुद्धिकरण करना चाहता है तो ऐसे वक्तव्य भी पहले से ही सदस्यों को उपलब्ध कर दिये जाते हैं ताकि, यदि वे चाहें तो, पुनरीक्षित उत्तर के आधार पर सभा में प्रश्न पूछ सकें।

सदस्यों को साचिविक सहायता

कभी कभी मंत्रालय को प्रश्न स्पष्ट नहीं होते हैं। उनके स्पष्टीकरण के लिये सदस्यों से सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है। सदस्यों को सलाह दी जाती है कि यदि वे चाहें तो मंत्रालय द्वारा दिये गये तथ्यों के अनुरूप अपने प्रश्न को नये सिरे से लिखकर दे सकते हैं। सदस्यों को प्रश्न संबंधी पूछताछ के लिये संसदीय सूचना कार्यालय में व्यवस्था की गई है। यदि सदस्य प्रश्न संबंधी विषय पर चर्चा के इच्छुक हों तो सचिवालय के अधिकारियों के साथ उनकी भेंट का प्रबन्ध भी सूचना कार्यालय ही करता है। और यदि सदस्य अपनी इच्छा व्यक्त करें तो प्रश्नों को समुचित रूप में लिपिबद्ध करने के लिये अधिकारिवर्ग उनकी सहायता के लिये तत्पर रहते हैं। प्रश्नों के निवटारे के संबंध में इसी प्रकार की दृश्य अथवा अदृश्य सेवायें लोक-सभा सचिवालय की ओर से सदस्यों को दी जाती हैं। अधिकारियों का कार्य अत्यन्त दुरूह है। क्योंकि प्रत्येक सदस्य समझता है कि उसका प्रश्न ग्राह्य होने के साथ ही अत्यन्त महत्वपूर्ण है और वह छपी हुई सूची में सम्मिलित किया जाना चाहिये।

उपसंहार

अतः 'प्रश्न काल' संसदीय लोकतंत्र की आत्मा है। यह लोकतंत्र प्रणाली को गति एवं स्फूर्ति प्रदान करती है और लोकतंत्र की सफलता प्रश्न काल के उपयोग की पद्धति पर ही निर्भर है। यूरोपीय देशों की संसद अभी तक इंग्लिस्तान के स्तर तक नहीं पहुंच सकी है। इसका एक कारण यह है कि इन देशों में 'प्रश्न काल' का पूर्ण विकसित रूप अभी नहीं आ सका है।

संसद् में प्रश्नों के माध्यम से ही सदस्य अपने मतदाताओं और सामान्य जनता से सम्पर्क बनाये रखते हैं। इस प्रकार कार्यपालिका अथवा प्रशासन संबंधी कष्ट सरकार के समक्ष रखे जाते हैं। प्रश्नों से ही मंत्रियों को यह मालूम होता है कि उनकी नीति और प्रशासन के प्रति जनता की क्या प्रतिक्रिया है। असैनिक कर्मचारियों के सतर्क बने रहने का श्रेय भी संसद् में प्रश्न काल को ही है। प्रश्न काल के परिणामस्वरूप ही कर्मचारी सचेष्ट और विचारशील बने रहते हैं और नौकरशाही के साथ सामान्यतः सम्बद्ध क्षुद्र अन्यायजनक कार्यों से वे बच जाते हैं।

"पांचवीं स्वतंत्रता"

संसद् में प्रश्न पूछने का स्वतंत्र और अबाध अधिकार प्रत्येक सदस्य को प्राप्त है। संसद् के समुचित संचालन के लिये सरकार से जानकारी प्राप्त करने का अधिकार महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि लोकतंत्र में प्रश्न काल संसद् की कार्यवाही का अविभाज्य अंग है। वस्तुतः एक सुप्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार की सम्मति में यह प्रेसीडेंट रूजवेल्ट द्वारा उद्घोषित चार स्वतंत्रताओं के अतिरिक्त पांचवीं स्वतंत्रता है। प्रश्न पूछने और उत्तर देने की अवधि में देश के नागरिकों को संसदीय लोकतंत्र के संचालन में सान्निध्यपूर्वक अन्तर्दृष्टि रखने का अवसर प्राप्त होता है। इस अवधि से प्रभावित होकर ही वह इस सिद्धांत के प्रति अपनी आस्था प्रकट करता है कि लोकतंत्र सरकार जनता के द्वारा, जनता के लिये और जनता की सरकार है।

संसदीय समितियों का कार्य-कलाप

आधुनिक युग में विधान मण्डल अपना अधिकांश कार्य समितियों की सहायता से करते हैं। सभा के कुछ कार्यों का निवटारा करने के लिये सभा के सदस्यों में से चुनी गई समितियां सुविधाजनक ही नहीं हैं प्रत्युत संसद् की निर्धारित परम्पराओं के अनुसार भी हैं। यह प्रक्रिया विशेष रूप से उन मामलों पर विचार करने में सहायक होती है जिन पर टेक्नीकल अथवा विशेष स्वरूप होने से सभा की अपेक्षा समिति में अधिक विस्तृत विचार किया जा सकता है।

इन समितियों का कार्य विधेयकों पर विचार एवं उनका संशोधन करना भी है। इसके अतिरिक्त जांच पड़ताल के लिये सभा द्वारा उनको निर्दिष्ट किये गये विषयों की जांच, लोकलेखा, प्राक्कलन और संविहित लेखाओं की जांच तथा नियंत्रण, सभा के आन्तरिक कार्यों से सम्बन्धित प्रशासनिक ढंग के कार्य भी इन में सम्मिलित हैं।

ब्रिटेन के 'हाउस आफ कामन्स' की भांति भारतीय संसद् की समितियां इतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं कि अन्य वस्तुओं का महत्व ही घट जाये। वे केवल विधान-मण्डल की सहायक हैं, उपादान मात्र और आलोचना-परक हैं। अन्य देशों में समितियों का जो कार्य है उस की तुलना में उन का संचालन क्षेत्र सीमित है। वहां इन समितियों ने कार्यपालिका का कार्य भी ले लिया है। उदाहरणार्थ, अमेरिका में कांग्रेस समिति नीति निर्धारित करती है और सरकारी कार्यों में हस्तक्षेप करती है। ऐसी ही पद्धति फ्रांसीसी चेम्बर में है जहां "स्थायी आयोग" की सर्जना से 'चेम्बर' सरकार की नीति पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण करती है।

तदर्थ समितियां

लोक-सभा की समितियां दो प्रमुख वर्गों में रखी जा सकती हैं, अर्थात् तदर्थ समितियां और स्थायी समितियां। प्रथम श्रेणी की समितियां विशिष्ट प्रश्नों पर विचार करने के लिये नियुक्त की जाती हैं। विधेयकों के सम्बन्ध में बनाई जाने वाली प्रवर समितियां इसका उदाहरण हैं। इन समितियों में विधान सम्बन्धी प्रस्तावों पर पूर्णरूपेण चर्चा होती है, वादविवाद होता है, विश्लेषण किया जाता है और इस प्रकार संसद् के पर्याप्त समय की बचत ही नहीं होती वरन् विशेषज्ञों का परामर्श और टेक्नीकल ज्ञान भी उपलब्ध हो जाता है। लोक-सभा द्वारा नियुक्त इस प्रकार की अन्य समितियों के उदाहरण ये हैं : लाभपद सम्बन्धी समिति, रेलवे अभिसमय समिति, द्वितीय पंचवर्षीय योजना के मसौदे से सम्बन्धित समिति और हिन्दी पर्याय निर्धारित करने वाली समिति। यहां यह उल्लेख करना भी अनुपयुक्त नहीं होगा कि प्रत्येक तदर्थ समिति का कार्य क्या है।

लाभपद सम्बन्धी समिति

संसद् के दोनों सदनों के १५ सदस्यों की लाभ-पद सम्बन्धी समिति की रचना राज्य-सभा के सभापति के परामर्शानुसार २१ अगस्त, १९५४ को की गई थी। इस समिति का विषय संविधान के अनुच्छेद १०२(१) क के अन्तर्गत सदस्यों की अनर्हता सम्बन्धी विभिन्न विषयों पर विचार करना और इस विषय पर व्यापक विधि अधिनियमन के बारे मे सुझाव देना है।

केन्द्रीय और राज्य सरकारों के अन्तर्गत लगभग दो सौ समितियों/निकायों के, जिन में लोक-सभा के सदस्य भी हैं, अलग अलग मामलों के परीक्षण के अतिरिक्त समिति ने उन सामान्य सिद्धान्तों पर भी विचार किया जिन पर यह निश्चित करने के लिये अमल किया जाये कि अमुक पद लाभ-पद है अथवा नहीं।

२२ दिसम्बर, १९५५ को संसद् के दोनों सदनों के पटलों पर रखे गये प्रतिवेदन में समिति ने यह सिफारिश की थी कि इस विषय पर सरकार को एक व्यापक विधेयक पुरःस्थापित करना चाहिये।

ऐसे पदों के विषय में, जिन को इस विधेयक में शामिल न किया जा सके, अथवा जिन की स्थापना भविष्य में की जाये, समिति ने यह सिफारिश की है कि

ऐसे मामलों के बारे में छानबीन करने के लिये एक स्थायी संसदीय समिति गठित की जाये । इस विषय पर भविष्य में कोई विधान संसद् के समक्ष लाने से पूर्व उस के सम्बन्ध में इस समिति के विचारों पर भी उचित विचार किया जाना था ।

इस समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करने की दृष्टि से सरकार उन पर विचार कर रही है ।

रेलवे अभिसमय समिति

१९४९ के अभिसमय के अधीन रेलवे उपक्रमों द्वारा साधारण राजस्व में देय लाभांश की दर के साथ-साथ रेलवे वित्त को साधारण वित्त से पृथक करने से सम्बन्धित अन्य सहायक विषयों का पुनरीक्षण करने के लिये १२ मई, १९५४ को लोक-सभा द्वारा स्वीकृत एक संकल्प के अनुसरण में, जिस से राज्य-सभा १४ मई, १९५४ को सहमत हुई, संसद् के दोनों सदनों की एक समिति की स्थापना की गई । इस समिति में लोक-सभा के १२ और राज्य-सभा के छः सदस्य थे । ३० नवम्बर, १९५४ को समिति ने संसद् के समक्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसे संसद् के दोनों सदनों ने सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया ।

प्रारूप द्वितीय पंचवर्षीय योजना सम्बन्धी समितियां

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारूप पर चर्चा करने के लिये संसद् ने एक नई प्रक्रिया अपनाई । क्योंकि सदस्य काफ़ी बड़ी संख्या में इस चर्चा में भाग लेना चाहते थे और सभा के पास इतना समय नहीं था कि उन सब को समय दिया जा सकता, इसलिये, लोक-सभा की कार्य-मंत्रणा समिति ने योजना के प्रारूप पर प्रारम्भिक चर्चा के लिये कुछ तदर्थ समितियों की स्थापना करने का निश्चय किया । योजना पर चर्चा करने के लिये इस प्रकार की चार समितियां बनाई गईं जिन में राज्य-सभा के सदस्यों को भी सम्मिलित किया गया ।

प्रत्येक समिति की कार्यवाही का शब्दशः विवरण रखा गया और उस का संक्षिप्त विवरण जिस में सदस्यों द्वारा कही गई बातें और दिये गये सुझाव थे, संसद् के सम्मुख पेश किया गया ।

८० सदस्यों वाली समिति 'क' ने योजना संबंधी नीति, व्यय और धन के बंटवारे के बारे में विचार किया । इस की तीन बैठकें हुईं । खनिज पदार्थों, उद्योगों, परिवहन और संचार संबंधी समिति 'ख' में ११४ सदस्य थे और उस की दो प्रारम्भिक बैठकों के अलावा सात और बैठकें हुईं । समिति 'ग' ने भूमि सुधार और पशु-पालन समेत कृषि के विषयों पर विचार किया । इस के ९१ सदस्य थे और इस की एक प्रारम्भिक बैठक के अलावा ६ और बैठकें हुईं । सामाजिक सेवाओं और श्रम-नीति पर, जिस में योजना के लिये जन-सहयोग भी शामिल था, ७९ सदस्यों वाली समिति 'घ' ने विचार किया । एक प्रारम्भिक बैठक के अलावा समिति की सात बैठकें और हुईं ।

समिति के कार्यवाही-सारांश के अतिरिक्त कार्यवाही का शब्दशः विवरण और समिति को दी गई सामग्री निर्देश के लिये पुस्तकालय में रख दी गई ।

संसदीय, विधि संबंधी तथा प्रशासनिक शब्दावली के हिन्दी पर्याय निर्धारित करने वाली समिति

संसदीय, विधि सम्बन्धी तथा प्रशासनिक शब्दावली के हिन्दी पर्याय निर्धारित करने का कार्य संविधान-सभा द्वारा आरम्भ किया गया था और उस के भंग होने पर लोक-सभा सचिवालय को (जिसे उस समय संसद् सचिवालय कहा जाता था) हस्तांतरित कर दिया गया था । लगभग २६,००० शब्द एकत्र किये गये थे, जिन में से अक्षर "ए" से "सी" तक के आरम्भ होने वाले लगभग ५,००० शब्द अन्तिम रूप देने वाली समिति द्वारा अनुमोदित हो चुके थे । इस समिति के सदस्यों के अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण शेष २१,००० शब्दों के सम्बन्ध में कार्य नहीं हो सका और इसीलिये मार्च, १९५३ में उस समिति को भंग कर दिया गया ।

इस कार्य को जारी रखने के लिये लोक-सभा के अध्यक्ष ने, राज्य-सभा के सभापति की सहमति से, ५ मई, १९५६ को एक और समिति नियुक्ति की ।

इस समिति में उस के सभापति सहित दोनों सभाओं के ३८ सदस्य हैं जो संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रादेशिक भाषाओं के ज्ञाता हैं। समिति से कहा गया है कि वह अपनी पहली बैठक के, जो १० मई, १९५६ को हुई थी, छः महीने के भीतर यथासंभव शीघ्र अपना प्रतिवेदन दे दे।

लगातार कई दिनों कई कई घंटों तक समिति की बैठकें हुई परन्तु वह ६ महीने के भीतर अपना कार्य पूरा नहीं कर पाई। इसलिये अध्यक्ष ने दो बार अवधि बढ़ाना मंजूर कर लिया, पहली बार ३ महीने के लिये और दूसरी बार ३१ मार्च, १९५७ तक।

अब तक समिति की १०८ बैठकें हुई हैं और उस ने २१,००० शब्दों के हिन्दी पर्यायों पर विचार किया है और उन्हें निर्धारित किया है।

समिति ने एक ऐसी शब्दावली विकसित करने का प्रयास किया है जो देश के सभी भागों में व्यापक रूप से अपनाई जा सके। जहां तक संभव हुआ है, उस ने केवल उन्हीं हिन्दी पर्यायों को अपनाने का प्रयास किया है जो आम तौर पर समझ में आ जाते हैं और हिन्दी में जिन का प्रयोग प्रचलित है। जहां ऐसे हिन्दी पर्याय उपलब्ध नहीं थे, वहां प्रादेशिक भाषाओं के ऐसे पर्यायों को प्राथमिकता दी गई जो हिन्दी के प्रचलित शब्द-विन्यास में ठीक बैठ सकें। कुल मूल संस्कृत शब्दों के अलावा अंग्रेजी के ऐसे शब्दों को भी, जो हिन्दी में चल निकले हैं, अपना लिया गया है।

स्थायी समितियां

लोक-सभा की स्थायी समितियां अध्यक्ष द्वारा कतिपय विशिष्ट प्रकार के कार्य, जैसे सभा में सरकारी कार्य और ग़ैर-सरकारी सदस्यों के कार्य का विन्यास और क्रम, जनता की याचिकाओं, संसदीय विशेषाधिकारों, प्रक्रिया सम्बन्धी नियम आदि, पर विचार करने के लिये नियुक्त की जाती हैं।

स्थायी समितियों की तालिका उन के कृत्यों* के अनुसार निम्नलिखित क्रम से दी गई है :

१. जांच करने वाली समितियां:
   (१) याचिका समिति ;
   (२) विशेषाधिकार समिति ;

२. छान-बीन करने वाली समितियां:
   (३) सरकारी आश्वासनों सम्बन्धी समिति ;
   (४) अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति ;

३. सभा के कार्य से सम्बन्धित प्रशासनिक प्रकार की समितियां:
   (५) सभा की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति सम्बन्धी समिति ;
   (६) कार्य मंत्रणा समिति ;
   (७) ग़ैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों और संकल्पों सम्बन्धी समिति ;
   (८) नियम समिति ;

४. सदस्यों को सुविधाओं का प्रबन्ध करने वाली समितियां :
   (९) सामान्य प्रयोजन समिति ;
   (१०) आवास समिति ;
   (११) पुस्तकालय समिति ;
   (१२) संसद् सदस्यों के वेतन तथा भत्तों संबंधी संयुक्त समिति।

जांच करने वाली समितियां

याचिका समिति

लोक-सभा को, जो सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था है, याचिका भेजने का अधिकार जनता का अन्तर्विष्ट अधिकार है क्योंकि इस से उन्हें अपनी शिकायतें रखने

*वित्तीय समितियों (लोक लेखा समिति और प्राक्कलन समिति) को छोड़ कर, जिन का विवरण अलग दिया गया है।

और अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के समक्ष अपने सुझाव पेश करने का अवसर मिल जाता है। चूंकि याचिकायें बड़ी संख्या में प्राप्त होती हैं इसलिये सभा के लिये ऐसी प्रत्येक याचिका पर विचार करना संभव नहीं होता। इसलिये, इन याचिकाओं के गुणावगुण पर विचार करने और उन के बारे में सभा से सिफारिश भेजने के लिये एक समिति गठित की गई है।

१३ मई, १९५२ को पहली लोक-सभा के बुलाये जाने के बाद अध्यक्ष ने २७ मई, १९५२ को पांच सदस्यों की एक याचिका समिति नामजद कर दी थी। तदुपरांत १८ नवम्बर, १९५२ को समिति का पुनर्गठन किया गया और सरकारी दल तथा अन्य दलों को उपयुक्त प्रतिनिधित्व प्रदान करने के उद्देश्य से ७ अप्रैल, १९५४ को समिति के सदस्यों की संख्या बढ़ा कर ५ से १५ कर दी गई।

प्रथम लोक-सभा की अवधि में समिति की २३ बैठकें हुई थीं, उन में ७८ गृहीत याचिकाओं पर विचार किया गया और सभा के सम्मुख ११ प्रतिवेदन प्रस्तुत किये गये जिन में विचारणीय मामलों के संबंध में ठोस उपायों के बारे में अथवा भविष्य में इस प्रकार के मामलों की रोकथाम करने वाले उपायों के बारे में सुझाव दिये गये।

अध्यक्ष अथवा लोक-सभा सचिवालय के काम आने वाले सभी अभ्यावेदनों, संकल्पों तथा तारों आदि पर भी विचार करने के लिये ११ अप्रैल, १९५६ को समिति का कार्यक्षेत्र बढ़ा दिया गया। तदनुसार समिति ने २५ अप्रैल, १९५६ से १४वें सत्र के अन्त तक जनता की ओर से आने वाले ऐसे ३५० अभ्यावेदनों पर विचार किया जोकि सभा के प्रक्रिया नियमों के अधीन याचिकाओं के रूप में ग्राह्य नहीं थे, और उसने उन में से प्रत्येक के बारे में उपयुक्त कार्यवाही करने का निदेश दिया।

अध्यक्ष के निदेशों के अन्तर्गत ऐसी व्यक्तिगत शिकायतों के मामलों में, जिनके विरुद्ध समिति द्वारा कोई सीधी कार्यवाही नहीं की जा सकती, यदि समिति को इस बात का विश्वास हो जाये कि उन में की गई शिकायत सच्ची है, तो वह उन पर उचित कार्यवाही करने के लिये उन कागजों को सम्बन्धित प्राधिकारी के पास भेज देगी।

विशेषाधिकार समिति

संसद् के विशेषाधिकार कई ऐसे अधिकार होते हैं जिन में से कुछ तो प्रत्येक सदन को सामूहिक रूप से प्राप्त होते हैं और कुछ प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत रूप से प्राप्त होते हैं जोकि स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा तथा गरिमा को बनाये रखने के लिये आवश्यक होते हैं। इस समय संसद् के प्रत्येक सदन, प्रत्येक सदस्य तथा संसद् की प्रत्येक समिति की शक्तियां, विशेषाधिकार तथा उन्मुक्तियां संविधान के अनुच्छेद १०५(३) के अनुसार वे ही हैं जो ब्रिटेन के हाउस आफ़ कामन्स की हैं।

यदि इनमें से किसी भी अधिकार तथा उन्मुक्ति की अवज्ञा की जाये अथवा उस के सम्बन्ध में कुछ अशिष्ट वचन कहे जायें तो उसे विशेषाधिकार का भंग होना कहा जायेगा और संसद् उस पर कार्यवाही कर सकेगी।

सामान्य रीति यह है कि जब भी संसद् का कोई विशेषाधिकार भंग होता है तो वह प्रश्न प्रत्येक सदन की विशेषाधिकार समिति को सौंप दिया जाता है ताकि समस्त मामलों पर पूर्णरूपेण, सविस्तार तथा न्यायपरक विचार किया जा सके और इस बात का विनिश्चय किया जा सके कि क्या प्रस्तुत मामलों में विशेषाधिकार भंग किया गया है या नहीं, और तब वह समिति उन पर कार्यवाही करने के सम्बन्ध में अपनी सिफ़ारिशों सहित अपना प्रतिवेदन सभा के पास भेज देती है।

विशेषाधिकार का प्रश्न या तो अध्यक्ष द्वारा स्वप्रेरणा से अथवा सदन द्वारा स्वीकृत एक प्रस्ताव के द्वारा समिति को सौंपा जा सकता है।

विशेषाधिकार समिति प्रथम संसद् की अवधि में पहली बार २९ मई, १९५२ को अध्यक्ष द्वारा सर्वप्रथम नियुक्त की गई थी। प्रारम्भ में तो समिति में केवल १० सदस्य ही नियुक्त किये गये थे परन्तु २ मई, १९५५ को जब समिति का पुनर्गठन किया गया तो सदस्यों की संख्या बढ़ा कर १५ कर दी गई, ताकि

सरकारी दल और अन्य दलों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जा सके ।

लोक-सभा के उपाध्यक्ष वर्तमान समिति के सभापति हैं ।

समिति की १२ बैठकें हुईं और उस ने सदन को चार प्रतिवेदन प्रस्तुत किये । इन सभी में यही निर्णय किया गया कि इन चारों मामलों में विशेषाधिकार भंग नहीं हुआ ।

इस के अतिरिक्त समिति की राज्य-सभा की विशेषाधिकार समिति के साथ मिल कर भी तीन बैठकें हुईं । इन बैठकों का उद्देश्य यह सुझाव देना था कि किसी एक सदन में उठाये गये ऐसे विशेषाधिकार प्रश्न को निपटाने के लिये, जिस में दूसरे सदन का सदस्य अन्तर्ग्रस्त हो, क्या प्रक्रिया अपनाई जाये । २३ अगस्त १९५४ को सदनों में एक संयुक्त प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया जोकि तदुपरान्त स्वीकार कर लिया गया ।

जांच करने वाली समिति

सरकारी आश्वासनों सम्बन्धी समिति

सभा में प्रश्नों के उत्तर देते समय अथवा विधेयकों, संकल्पों, प्रस्तावों आदि पर चर्चा करते समय, मंत्रिगण कभी-कभी इस बात का आश्वासन दे देते हैं कि वे किसी मामले पर विचार करेंगे अथवा कार्यवाही करेंगे या सम्पूर्ण जानकारी बाद में सभा में प्रस्तुत की जायेगी । इस बात का ध्यान रखने के लिये कि ऐसे आश्वासन पूरे हों, लोक-सभा की ओर से अध्यक्ष के द्वारा सरकारी आश्वासनों के सम्बन्ध में एक समिति बनाई गई है ।

समिति का यह काम है कि वह मंत्रियों द्वारा समय समय पर लोक-सभा में दिये गये आश्वासनों, वचनों तथा प्रतिज्ञाओं की जांच करे और इस सम्बन्ध में प्रतिवेदन प्रस्तुत करे कि ऐसे आश्वासनों आदि को कहां तक पूरा किया गया है, उन्हें कहां कार्यान्वित किया गया है और क्या वह कार्यान्विति उस कार्य के लिये आवश्यक न्यूनतम समय में हो गई है ।

क्योंकि यदि किसी आश्वासन को न्यूनतम आवश्यक समय में पूरा न किया जाये तो उसका प्रयोजन और महत्व ही समाप्त हो जाता है, इसलिये समिति ने यह सिफ़ारिश की है कि साधारणतया सभी आश्वासन दो मास की अवधि में ही पूरे हो जाने चाहियें । तथापि, यदि किसी विशेष मामले के सम्बन्ध में यह समझा जाये कि आश्वासन आदि को कार्यान्वित करने में अधिक समय लगेगा तो सरकार द्वारा सभी परिस्थितियां समिति को समझानी पड़ती हैं और यह बताया जाना होता है कि आश्वासन पूरा होने में कितना समय लगेगा ।

अत्यन्त लोक महत्व का एक आश्वासन, जिसे समिति ने संतोषजनक रूप से कार्यान्वित कराया, २९ मई, १९५१ को तत्कालीन निर्माण, उत्पादन तथा संभरण मंत्री द्वारा दिल्ली भूगृहादि (अधिग्रहण तथा निष्कासन) संशोधन विधेयक, १९५० पर हुए वाद-विवाद के दौरान में कुछ एक वचनों के बारे में था । इस मामले पर समिति द्वारा कई बैठकों में विचार किया गया । समिति को इस सम्बन्ध में साक्ष्य देने के लिये कई सम्बद्ध मंत्रालयों के प्रतिनिधियों को भी बुलाना पड़ा । लोक-सभा को प्रस्तुत किये गये इस दूसरे प्रतिवेदन में समिति ने इन आश्वासनों को पूरा करने के सम्बन्ध में कई सिफारिशें कीं । तदुपरान्त, सरकार ने ३ अप्रैल, १९५६ को लोक-सभा पटल पर एक विवरण रखा, जिसमें सरकार द्वारा इन आश्वासनों की पूर्ति के लिये की गई कार्यवाहियों का ब्योरेवार वर्णन है ।

यह समिति प्रारम्भ में १ दिसम्बर, १९५३ को अध्यक्ष द्वारा नियुक्त की गई थी । इसकी अभी तक कुल २३ बैठकें हुई हैं और उसने लोक-सभा में तीन प्रतिवेदन प्रस्तुत किये हैं । समिति के १५ सदस्य हैं ।

अधीनस्थ विधान कार्य संबंधी समिति

राज्य की आधुनिक धारणा के अधीन, वैधानिक कार्य इतने अधिक अनुपात में बढ़ गया है कि संसद् अब विधान सम्बन्धी केवल सामान्य सिद्धान्तों पर ही विचार कर सकती है। उसके लिये यह संभव नहीं है कि वह ऐसे प्रत्येक छोटे से छोटे नियम तथा विनियम पर भी विचार करे, चर्चा करे और उसे स्वीकृति दे जो कि विभिन्न विधियों को लागू करने के उद्देश्य से अत्यन्त आवश्यक है । अतः विशेष अधिनियमों के अधीन कुछ एक मामलों में नियम बनाने की शक्ति या तो संसद के द्वारा अथवा संविधान के द्वारा कार्यपालिका को सौंप दी

जाती है। परन्तु सरकार द्वारा इस शक्ति के लिये किये जाने वाले प्रयोग पर दृष्टि रखना अत्यावश्यक है। इस प्रयोजन के लिये लोक-सभा में अधीनस्थ विधान कार्य सम्बन्धी एक समिति बनाई गयी है, जो कि इन बातों की जांच करती है और इस सम्बन्ध में सभा में प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है कि विनियम, नियम आदि बनाने की संविधान द्वारा प्रदत्त या संसद् द्वारा प्रत्यायोजित शक्ति का उचित प्रकार से प्रयोग किया जा रहा है या नहीं।

समिति के विभिन्न संविहित नियमों तथा आदेशों के बारे में सिफ़ारिशें करने वाले प्रतिवेदन समय समय पर लोक-सभा में प्रस्तुत किये जाते हैं। इसकी सिफारिश यह भी हो सकती है कि किसी नियम को पूरा पूरा रद्द कर दिया जाये, या उसके किसी भाग को रद्द कर दिया जाये, या उसे किसी विशेष दृष्टि से संशोधित कर दिया जाये। तथापि कोई भी सिफारिश करने से पूर्व, समिति प्रायः सम्बन्धित मंत्रालयों से स्पष्टीकरण मांगती है या उनके प्रतिनिधियों के बयान लेती है।

अधीनस्थ विधान कार्य सम्बन्धी समिति सर्व प्रथम १ दिसम्बर १९५३ को अध्यक्ष द्वारा स्थापित की गयी थी जिसमें दस सदस्य थे। बाद में १३ मई, १९५४ को समिति के सदस्यों की संख्या बढ़ा कर १५ कर दी गयी।

समिति की अभी तक कुल २५ बैठकें हुई हैं। उसने ८८१ नियमों/संलेखों पर विचार किया है और लोक-सभा को ६ प्रतिवेदन प्रस्तुत किये हैं।

सदन के कार्य से सम्बन्धित समितियां

सभा की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति सम्बन्धी समिति

भारत के संविधान के अनुच्छेद १०१ के खण्ड (४) के अन्तर्गत यदि संसद् के किसी भी सदन का कोई सदस्य साठ दिन की कालावधि तक सदन की अनुज्ञा के बिना उसके सब अधिवेशनों से अनुपस्थित रहे तो सदन उसके स्थान को रिक्त घोषित कर सकेगा।

अनुपस्थिति की अनुमति के लिए समस्त आवेदन-पत्र, जो लिखित रूप में अध्यक्ष को दिये जाते हैं तथा जिसमें आवश्यक अनुपस्थिति की अनुमति की अवधि तथा उसके आधार का उल्लेख रहता है, सभा की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति संबंधी समिति को निर्दिष्ट किए जाते हैं जो सर्व प्रथम १२ मार्च, १९५४ को निर्मित की गई थी। समिति में १५ सदस्य होते हैं जो एक वर्ष तक पद पर रहते हैं।

अनुपस्थिति की अनुमति के लिए आवेदन पत्रों पर विचार करने के अतिरिक्त समिति ऐसे प्रत्येक मामले की जांच करती है जिसमें कोई सदस्य सदन की बैठकों से बिना अनुमति के साठ दिन तक या उससे अधिक अनुपस्थित रहा हो और यह सिफारिश करती है कि अनुपस्थिति को माफ़ कर दिया जाय अथवा उस मामले की परिस्थितियां ऐसी हैं जिनमे सदन के लिए उसका स्थान रिक्त घोषित करना उचित होगा।

समिति अपनी सिफारिशें एक प्रतिवेदन के रूप में सदन के पास भेजती है और तब वह प्रतिवेदन सदस्यों में परिचालित किया जाता है। जब किसी सिफारिश के संबंध में सदन द्वारा कोई निर्णय कर लिया जाता है तो संबंधित सदस्य को लोक-सभा सचिवालय द्वारा तदनुसार सूचित कर दिया जाता है।

लोक-सभा के चौदहवें सत्र के दौरान में समिति ने सिफारिश की कि एक सदस्य का स्थान, जो एक लम्बे समय तक बिना अनुमति के सदन की बैठकों से अनुपस्थित रहे थे रिक्त घोषित कर दिया जाना चाहिए। इस सिफारिश को मानते हुए उस आशय का एक प्रस्ताव समिति के सभापति द्वारा ५ दिसम्बर, १९५६ को लोक-सभा में प्रस्तुत किया गया तथा वह स्वीकृत हुआ।

अपने प्रादुर्भाव के समय से अब तक समिति की २१ बैठकें हो चुकी हैं तथा उसने लोक-सभा को १९ प्रतिवेदन प्रस्तुत किए हैं।

कार्य मंत्रणा समिति

सामान्यतः संसदीय कार्यक्रम इतना व्यस्त रहता है कि सदन के कार्य को चर्चा के लिए उपलब्ध समय में आयोजित करना आवश्यक हो जाता है। इसलिए सरकारी कार्य के विभिन्न पदों की चर्चा के लिए समय का आवंटन करने के सम्बन्ध में सदन को परामर्श देने के लिए लोक-सभा में एक कार्य मंत्रणा समिति निर्मित की गई है।

समिति का कृत्य यह सिफारिश करना है कि ऐसे सरकारी विधान तथा अन्य कार्य जैसा कि अध्यक्ष सदन के नेता के साथ परामर्श करके समिति को निर्दिष्ट किए जाने के लिए आदेश करे, के प्रक्रम अथवा प्रक्रमों की चर्चा के लिए कितना समय आवंटित किया जाना चाहिए। परन्तु व्यवहार में ऐसा होता है कि अब सदन द्वारा सम्पादन किए जाने के लिये सरकारी कार्य के समस्त पद समय के आवंटन के लिए समिति को निर्दिष्ट किए जाते हैं। उपयुक्त मामलों में समिति को प्रस्तावित समय सूची में विभिन्न समय अंकित करने की शक्ति प्राप्त है जब कि किसी विधेयक अथवा अन्य सरकारी कार्य के विभिन्न प्रक्रम पूर्ण हो जाने चाहिये।

समिति अपनी ही ओर से सरकार से सभा में चर्चा के लिए विशिष्ट विषय लाने की सिफारिश भी करती है और ऐसी चर्चा के लिए समय आवंटित करती है। समिति के उपक्रम पर ही आणविक शक्ति के शांतिपूर्ण प्रयोग, सरकार की आर्थिक नीति, प्रेस आयोग का प्रतिवेदन और प्रशुल्क तथा व्यापार संबंधी सामान्य करार जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चायें हुई थी। लोक-सभा के सत्रों की अवधि बढ़ाने तथा ऐसे दिनों को लोक-सभा की बैठक रखना जिनको सामान्यतः बैठक नहीं होती है, से संबंधित प्रश्नों पर पहले इस समिति द्वारा विचार किया जाता है।

समिति द्वारा किए गए निर्णय सदैव सर्वसम्मत होते हैं तथा सदन के सामूहिक मत का प्रतिनिधित्व करते हैं। समिति अपना प्रतिवेदन सदन के समक्ष प्रस्तुत करती है जो एक रूढ़ि के अनुसार सदन द्वारा संसद्-कार्य मंत्री द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रस्ताव पर सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया जाता है। स्वीकृति के पश्चात् प्रस्ताव सदन के एक आदेश के रूप में प्रभावी होता है।

समिति का निर्माण सर्व प्रथम १४ जुलाई, १९५२ को किया गया था। उस में अध्यक्ष सहित, जो सभापति होते हैं, १५ सदस्य होते हैं। उपाध्यक्ष भी उस के एक सदस्य होते हैं।

समिति की बैठक सामान्यतः प्रत्येक सत्र के प्रारंभ में तथा उस के पश्चात् आवश्यकतानुसार होती है। अपने प्रादुर्भाव के समय से चौदहवें सत्र के अन्त तक समिति की ४७ बैठकें हो चुकी हैं तथा उसने ४७ प्रतिवेदन प्रस्तुत किये हैं।

गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों सम्बन्धी समिति

गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों सम्बन्धी समिति गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों के सम्बन्ध में वही कृत्य करती है, जो सरकारी कार्य के सम्बन्ध में कार्य मंत्रणा समिति करती है।

समिति के कृत्य ये हैं: गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों के लिये समय आवंटित करना; संविधान में संशोधन करने वाले गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों की, उन की लोक-सभा में पुरःस्थापना के पूर्व, जांच करना; गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों के उन के लोक-सभा में पुरःस्थापित किये जाने के पश्चात् उनकी प्रकृति, आवश्यकता एवं महत्व के अनुसार दो श्रेणियों में वर्गीकृत करना; और ऐसे गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों की जांच करना जिनमें सदन की विधायिनी क्षमता को चुनौती दी गई हो।

समिति का निर्माण सर्व प्रथम १ दिसम्बर, १९५३ को किया गया था। १३ मई, १९५४ के पूर्व समिति में केवल १० सदस्य हुआ करते थे। उस के पश्चात् उस की सदस्य-संख्या बढ़ा कर १५ कर दी गई। लोक-सभा के उपाध्यक्ष समिति के सभापति होते हैं। १९५६ के अन्त तक समिति की ७२ बैठकें हुई तथा उस ने ६७ प्रतिवेदन प्रस्तुत किये।

नियम समिति

संविधान के अनुच्छेद ११८(१) के अन्तर्गत संसद् के प्रत्येक सदन को अपनी प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन का विनियमन करने के लिये नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है।

लोक-सभा की नियम समिति में अध्यक्ष द्वारा मनोनीत किये गये १५ सदस्य होते हैं तथा अध्यक्ष स्वयं उस के पदेन-सभापति होते हैं। इस प्रकार मनोनीत समिति नई समिति की नियुक्ति किये जाने तक पद पर रहती है।

समिति का कृत्य सदन की प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन के मामलों पर विचार करना तथा (लोक-सभा की प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियम में) किन्हीं संशोधनों या परिवर्तनों की, जो आवश्यक समझे जायें, सिफारिश करना है ।

समिति के सदस्यों के अतिरिक्त सदन के कुछ अन्य सदस्य भी अपने विशेष हितों के आधार पर समिति की बैठकों में उपस्थित रहने के लिये आमंत्रित किये जाते हैं ताकि समिति का प्रतिनिधि स्वरूप पूर्ण हो जाय ।

१९५४ तक लोक-सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियमों में संशोधन अध्यक्ष द्वारा नियम समिति की सिफारिशों पर किये जाते थे । परन्तु २० सितम्बर, १९५४ को हुई अपनी बैठक में समिति ने यह निर्णय किया कि प्रक्रिया नियमों में कोई संशोधन किये जाने के पूर्व उस की सिफारिशें सदन द्वारा अनुमोदित की जानी चाहियें । नई प्रक्रिया १५ अक्टूबर, १९५४ से लागू की गई ।

१९५२-५६ की अवधि में नियम समिति की १६ बैठकें हुईं । १९५४ में लागू की गई नई प्रक्रिया के अनुसार समिति ने ७ प्रतिवेदन प्रस्तुत किये जिन में प्रक्रिया नियमों में कुल १३१ संशोधनों की सिफारिश की गई थी तथा जिन्हें सदन द्वारा अनुमोदित किया गया ।

लोक-सभा पटल पर २१ दिसम्बर, १९५६ को रखे गये अपने सातवें प्रतिवेदन में समिति ने सिफारिश की कि प्रक्रिया नियमों के चतुर्थ संस्करण में सन्निहित नियम, उन के छठवें और सातवें प्रतिवेदनों द्वारा संशोधित रूप में, संविधान के अनुच्छेद ११८(१) के अन्तर्गत सदन द्वारा अनुमोदित किये जायें तथा एक संशोधित संस्करण निकाला जाय । सदन ने २२ दिसम्बर, १९५६ को नियम समिति के सातवें प्रतिवेदन के प्रति अपनी सहमति प्रदान की ।

सदस्यों को सुविधायें प्रदान करने से संबंधित समितियां

सामान्य प्रयोजन समिति

सामान्य प्रयोजन समिति का निर्माण अध्यक्ष द्वारा २६ नवम्बर, १९५४ को किया गया था जिस में सभापति तालिका के सदस्यों, स्थायी संसदीय समितियों के सभापतियों, लोक-सभा के विभिन्न दलों और समूहों के नेताओं और अन्य प्रमुख सदस्यों को सम्मिलित करते हुए २० सदस्य थे तथा जिस के सभापति अध्यक्ष थे ।

समिति के कृत्य, प्रस्थापनाओं पर विचार करना और महत्वपूर्ण विषयों, विशेष कर सभा के कार्य के विकास तथा संचालन से सम्बन्धित विषयों के बारे में अध्यक्ष को परामर्श देना है ।

समिति की सात बैठकें हुईं और उस ने कई विषयों पर विचार किया, जिन में लोकसभा की बैठकों की कालावधि, तेजी से बढ़ने वाली संसदीय गति-विधियों के लिये भवनों की अतिरिक्त आवश्यकतायें, संसदीय पत्रों की शीघ्र छपाई की व्यवस्था, लोक-सभा में स्व-चालित मतदान यंत्र की स्थापना और सदस्यों के लिये एक क्लब की व्यवस्था करना विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

आवास समिति

लोक सभा के सदस्यों को दिल्ली में रहने के लिये निवास-स्थान देने और अन्य सम्बद्ध सुविधाओं की व्यवस्था के लिये लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा एक आवास समिति गठित की गई है । यह समिति निवास-स्थान के बारे में सदस्यों के अनुरोध, सुझाव और शिकायतों पर भी विचार करती है । लोक-सभा और राज्य-सभा के सदस्यों के समान हित के विषयों पर संसद् के दोनों सदनों की आवास समितियों के सभापतियों द्वारा अपनी संयुक्त बैठक में विचार किया जाता है ।

समिति में बारह सदस्य हैं और इस का कार्य-काल एक वर्ष का है तथा इस काल की समाप्ति के बाद अध्यक्ष द्वारा समिति पुनः मनोनीत की जाती है । निर्माण, आवास और संभरण और वित्त मंत्रालयों के तथा केन्द्रीय लोक कर्म विभाग के प्रतिनिधियों को भी समिति की बैठकों में भाग लेने के लिये आमंत्रित किया जाता है । वर्तमान लोक सभा के कार्यकाल में समिति की अब तक इक्कीस बैठकें हुई हैं ।

पुस्तकालय समिति

संसद् की पुस्तकालय समिति एक मंत्रणा निकाय है, जिसमें दोनों सदनों के सदस्य होते हैं। इस समिति का मुख्य कार्य संसद् पुस्तकालय में उपलब्ध सामग्री तथा वहां रखे गये कर्मचारियों की सेवाओं से लाभ उठाने में सदस्यों को सहायता प्रदान करना है। यह समिति एक प्रकार से संसद् के सदस्यों और पुस्तकालय के बीच सम्पर्क बनाये रखती है। पुस्तकालय और उस की निर्देश सेवाओं के विकास के बारे में उपयोगी और रचनात्मक सुझाव देने के लिये यह समिति सदस्यों को प्रोत्साहन भी देती है। पुस्तकालय से सम्बन्धित सभी मामलों—जैसे पुस्तकों का चयन, पुस्तकालय के बारे में नियम बनाना, भावी आयोजन इत्यादि, के बारे में समिति अध्यक्ष को परामर्श देती है।

मौजूदा समिति में नौ सदस्य हैं—छः लोकसभा-के और तीन राज्य-सभा के। लोक-सभा के सदस्यों को अध्यक्ष नामनिर्देशित करता है जबकि राज्य-सभा के सदस्यों का नामनिर्देशन राज्य-सभा के सभापति द्वारा किया जाता है। उपाध्यक्ष समिति के सभापति हैं। एक सत्र में समिति की साधारणतः एक बैठक होती है। वर्तमान लोक-सभा के कार्यकाल में समिति की अब तक चौदह बैठकें हुई हैं।

संसद सदस्यों के वेतन और भत्तों सम्बन्धी संयुक्त समिति

संसद् सदस्यों के वेतन और भत्ते १ जून, १९५४ से संसद् सदस्यों के वेतन और भत्ते अधिनियम १९५४ के अधीन विनियमित किये जाते हैं।

अधिनियम के अधीन संसद् सदस्यों को दिये जाने वाले दैनिक और यात्रा भत्ते का विनियमन करने और उन्हें चिकित्सा, टेलीफोन और डाक सम्बन्धी सुविधायें देने के लिये संसद् सदस्यों के वेतन और भत्तों सम्बन्धी एक संयुक्त समिति गठित की गई है जिसमें राज्य-सभा और लोक-सभा के क्रमशः पांच और दस सदस्य होते हैं।

संयुक्त समिति द्वारा बनाये गये नियम, राज्य-सभा के सभापति और लोक-सभा के अध्यक्ष द्वारा अनुमोदित किये जाने और भारत सरकार के गजट में प्रकाशित होने के बाद लागू होते हैं।

समिति की अब तक तेरह बैठकें हुई हैं।

वित्तीय समितियों का कार्य-कलाप

लोक लेखा समिति

१९५२-५३ में गतिविधियां

वर्ष १९५२-५३ की लोक लेखा समिति की, जो ३० जून, १९५२ को निर्वाचित हुई थी, पच्चीस बैठकें हुईं और उस ने वर्ष १९४९-५० के लिये विनियोग लेखे (रेलवे), (डाक तथा तार) और (असैनिक) और वर्ष १९४८-४९ के लिये असमाप्त लेखे (असैनिक) और तत्सम्बन्धी लेखा-परीक्षा प्रतिवेदनों का परीक्षण किया । उस ने विभिन्न राज्य व्यापार तथा निर्माण योजनाओं की वित्तीय कार्य प्रणाली के बारे में वित्त मंत्रालय द्वारा दी गई समीक्षाओं का भी परीक्षण किया ।

इस वित्तीय वर्ष में सर्वप्रथम निम्न विषयों के परीक्षण के लिये उप-समितियां नियुक्त की गई :—

(१) हीराकुड बांध परियोजना ।

(२) सरकारी व्यय पर राज्य-कोष नियंत्रण ।

(३) जापानी कपड़े का आयात और उस की बिक्री ।

(४) १९४९-५० के लिये विनियोग लेखे (रेलवे), (डाक तथा तार) और (असैनिक) तथा तत्सम्बन्धी लेखा-परीक्षण प्रतिवेदनों के बारे में टिप्पणों/ज्ञापनों पर विचार ।

(५) टायर और ट्यूबों का निपटान ।

हीराकुड बांध परियोजना सम्बन्धी उपसमिति के सदस्य बांध के स्थान को स्वयं जा कर भी देखा ।

समिति ने लोक सभा में निम्न प्रतिवेदन प्रस्तुत किये ।

(१) 'सरकारी व्यय पर राज्य-कोष नियंत्रण' के सम्बन्ध में तीसरा प्रतिवेदन ;

(२) जापानी कपड़े के आयात और विक्रय के सम्बन्ध में चौथा प्रतिवेदन ;

(३) 'विनियोग लेखे (रेलवे) और (डाक तथा तार), १९४९-५०' के बारे म पांचवां प्रतिवेदन ।

(४) 'हीराकुड बांध परियोजना' के बारे में छठा प्रतिवेदन ।

(५) 'विनियोग लेखे (असैनिक) १९४९-५० और असमाप्त लेखे (असैनिक) १९४८-४९' के बारे में सातवां प्रतिवेदन ।

लोक-लेखा परीक्षा प्रतिवेदनों का शीघ्रता से पूरा किया जाना

विनियोग लेखे और तत्सम्बन्धी लेखापरीक्षण प्रतिवेदनों के प्रस्तुत किये जाने में होने वाले विलम्ब के प्रश्न पर समिति ने विचार किया और उस ने यह इच्छा व्यक्त की कि उन प्रतिवेदनों को, जो रुके हुए थे, शीघ्र प्रस्तुत किया जाये, क्योंकि उन पर समिति द्वारा विचार किये जाने में होने वाले असाधारण विलम्ब के परिणामस्वरूप समिति के समक्ष गंभीर अनियमितताओं, गबन और अपहरण इत्यादि के मामलों के सम्बन्ध में जो उद्देश्य था, उस के फलीभूत न होने की संभावना थी । इस प्रकार यह निश्चय किया गया कि ऐसे मामलों का विशिष्टीकरण करने वाले प्रारम्भिक प्रतिवेदन अन्तिम प्रतिवेदनों से पूर्व प्रस्तुत किये जाने चाहियें, ताकि समिति उनका परीक्षण प्रारम्भ कर सके । यह प्रणाली रुके हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किये जाने तक अपनाई जाने वाली थी ।

१९५३-५४

वर्ष १९५३-५४ में समिति की चालीस बैठकें हुई और उसने निम्न लेखाओं और लेखा-परीक्षा प्रतिवेदनों का परीक्षण किया :—

(१) १९४९-५० और १९५०-५१ के लिये प्रतिरक्षा सेवायें, १९५०-५१ के लिये रेलवे और १९५०-५१ के लिये डाक तथा तार के विनियोग लेखे और तत्सम्वन्धी लेखा-परीक्षा प्रतिवेदन ।

(२) महानदी पर पुल (हीराकुड वांव परियोजना) के वारे में चांफेकर समिति का प्रतिवेदन ।

उस ने भी विस्तृत अध्ययन के लिये निम्न पांच उप-समितियां नियुक्त कीं :—

(१) प्रतिरक्षा सेवायें—१९५२ के लेखा परीक्षा प्रतिवेदन में उल्लिखित मामला —न्यायालय के मामलों को तय करने के वारे में भुगतान ।

(२) उर्वरक का सौदा ;

(३) पाशा भाई पटेल इम्पलीमेन्ट्स (औज़ार) ;

(४) १९४९-५० और १९५०-५१ के प्रतिरक्षा लेखे के वारे में टिप्पणों/ज्ञापनों पर विचार ; और

(५) रेलवे और डाक तथा तार लेखे, १९५०-५१ के वारे में टिप्पणों/ज्ञापनों पर विचार ।

पाशा भाई पटेल औजार सम्वन्धी समिति द्वारा नियुक्त की गई उप-समिति, इन औजारों के कार्यकरण को स्वयं जा कर देखने और उन के वड़े पैमाने पर पुनः ठीक किये जाने के वारे में अन्य सम्वन्वित प्रश्नों के अध्ययन के लिये, दिल्ली और वैरागढ़ (भोपाल) स्थित केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन कारखानों को देखने गई । समिति के कुछ सदस्य (१) इंडियन टेलीफोन इन्डस्ट्रीज़ लिमिटेड, बंगलौर ; (२) हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट फैक्टरी लिमिटेड, वंगलौर ; (३) हिन्दुस्तान मशीन टूल्ज़ फैक्टरी लिमिटेड, वंगलौर ; (४) रेलवे इन्टीग्रल कोच फैक्टरी, पेराम्वूर (मद्रास) ; (५) कलकत्ता टेलीफोन ओटोमेटाइज़ेशन प्रोजेक्ट ; (६) चित्तरंजन लोकोमोटिव वर्क्स ; और (७) दामोदर घाटी निगम देखने गये ।

समिति ने वम्बई, दिल्ली और किर्की में स्थित प्रतिरक्षा संस्थापन और डिपो इत्यादि देखने के लिये कुछ सदस्यों को प्रतिनियुक्त भी किया ।

इस वर्ष में समिति ने केवल एक प्रतिवेदन, अर्थात् टायर और ट्यूवों के निपटान के वारे में आठवां प्रतिवेदन प्रस्तुत किया । किन्तु, उसने अन्य चार प्रतिवेदनों को *अन्तिम रूप दिया ।*

केन्द्रीय सरकार के वित्तीय लेखे का परीक्षण

समिति की व्याप्ति और उस के कृत्यों के सरकार के लेखों के राजस्व की, विशेष रूप से उधार ग्रहण और सार्वजनिक ऋण आदि की, जांच तक विस्तार करने का प्रश्न, जिसने हाल के वर्षो में वाद की लोक लेखा समितियों का ध्यान आर्कापित कर रखा था, हल नहीं किया जा सका क्योंकि विभाजन की तिथि को लेखे के विभिन्न शीर्पों के अधीन वकाया राशि के तय न किये जाने के कारण वित्त लेखे के संकलन में विलम्व हो गया था जिस के परिणामस्वरूप वाद के काल के लेखों में भी देर हो गई थी । इस कठिनाई को दूर करने के लिये समिति ने, वित्त मंत्रालय और नियंत्रक महालेखापरीक्षक के परामर्श से, यह निश्चय किया कि वर्ष १९५१-५२ से प्रारम्भ कर वित्त मंत्रालय को आय और ऋण वताने वाले लेखे, जैसेकि उस ने अनुमोदित किये हों, ढांचे के रूप में प्रस्तुत करने चाहियें ।

१९५४-५५

वर्ष १९५४-५५ में समिति ने विनियोग लेखे (असैनिक) १९५०-५१ और लेखा-परीक्षा (असैनिक) प्रतिवेदन १९५२, भाग १ और २, १९५१-५२ और १९५२-५३ के लिये डाक तथा तार, प्रतिरक्षा सेवायें और रेलवे के विनियोग लेखे तथा तत्सम्वन्वी लेखा-परीक्षा प्रतिवेदन, दामोदर घाटी निगम के १९४९-५०, १९५०-५१ और १९५१-५२ के लिये लेखे के

समवाय या गैर-सरकारी निकाय के बीच हुए करार या समझौते की जांच कर रही हो तब यदि यह उचित समझे तो निजी समवाय या निकाय के प्रतिनिधियों को साक्ष्य के लिये बुला सकती है और ऐसी बातों पर जांच पड़ताल कर सकती है जो उस से सम्बन्धित हों या वे लोग कोई जानकारी देना चाहें तो दे सकते हैं । यह निर्देश उस समय जारी किया गया जब लोक-लेखा समिति ने १९५५-५६ में रेलवे मंत्रालय तथा टेल्को के बीच इंजनों तथा इंजनों के बॉयलरों के निर्माण तथा विक्रय सम्बन्धी करार पर विचार किया था ।

प्राक्कलन समिति

प्रथम संसद् के पहले वर्ष १९५२-५३ मे समिति ने खाद्य तथा कृषि मंत्रालय के प्राक्कलनों की जांच की । परीक्षण के कार्य के लिये उन्होंने खाद्य तथा कृषि मंत्रालय के अधीन गवेषणा संस्थाओं तथा बाहर के अन्य स्थानों के दौरे शुरू किये जिस से कि ठीक मौके पर जांच की जा सके । समिति के सदस्यों ने केन्द्रीय ट्रेक्टर संगठन, भारतीय कृषि गवेषणा संस्था तथा कृषि गवेषणा की भारतीय परिषद् को भी जा कर देखा ।

१९५३-५४

१९५३-५४ की समिति ने खाद्य तथा कृषि मंत्रालय सम्बन्धी अपने प्रतिवेदन (छठा तथा सातवां), जिन्हें पहली समिति ने असमाप्त छोड़ दिया था, पूरे किये तथा उन्हें लोक-सभा में उपस्थापित किया और समिति ने दो और प्रतिवेदन अर्थात् दामोदर घाटी निगम सम्बन्धी आठवां प्रतिवेदन तथा प्रशासनीय और वित्तीय सुधारों सम्बन्धी नवां प्रतिवेदन—भी उपस्थापित किये : आठवां प्रतिवेदन प्राक्कलन समिति के पांचवें प्रतिवेदन की सिफारिश के अनुसरण में नियुक्त की गई राव समिति के प्रतिवेदन के बारे में था । अपनी अवधि समाप्त होने से पहले समिति ने सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय तथा खाद्य तथा कृषि मंत्रालय के कुछ प्राक्कलनों का जो करनाल डेरी फ़ार्म तथा भारतीय डेरी गवेषणा संस्था, बंगलौर के बारे में थे, परीक्षण भी किया ।

१९५४-५५

१९५४-५५ में समिति ने अपने दसवें तथा ग्यारहवें प्रतिवेदन उपस्थापित किये जिन्हें पहली समिति ने अनुमोदित किया था । सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय के बारे में आकाशवाणी सम्बन्धी बारहवां प्रतिवेदन भी समिति ने उपस्थापित किया । उत्पादन मंत्रालय के अधीनस्थ उपक्रमों के प्राक्कलनों की भी जांच की गई । इस के लिये विभिन्न उप-समितियां बनाई गई और प्रत्येक उपसमिति को एक उपक्रम दे दिया गया । राष्ट्रीय उपक्रमों के प्रशासनीय तथा संगठन संबंधी मामलों पर भी उन्होंने विचार प्रकट किये ।

१९५५ तक प्राक्कलन समिति पूरे ज़ोर से काम करने लगी थी । मंत्रालयों के अधीन कार्यालयों तथा परियोजनाओं की ब्यौरेवार जांच के लिये विभिन्न संगठनों उपक्रमों में समिति को जाना पड़ता था और विभिन्न दस्तावेजों को देखना पड़ता था । उन्हें बहुत से सरकारी तथा गैर-सरकारी साक्षियों से साक्ष्य भी लेना पड़ता था और इसी के साथ विभिन्न सरकारी कामों के विकास से अवगत रहना पड़ता था । इस का अनुमान इस बात से लग सकता है कि जून, १९५५ तक ४३ बैठकें हुईं, २७३० पृष्ठों का अध्ययन किया गया और १०९ सरकारी तथा गैर-सरकारी साक्षियों से साक्ष्य लिया गया ।

१९५५-५६

१९५५-५६ में समिति ने पहली समिति के काम को बहुत जोरों से आगे बढ़ाया । पहली समितियों की तुलना में इस समिति ने बहुत काम किया । आरम्भ में ही इस समिति ने चार प्रतिवेदन पेश किये जो उत्पादन मंत्रालय के बारे में थे जिस की जांच १९५४-५५ की प्राक्कलन समिति ने की थी । प्रतिवेदन ये थे : तेरहवां प्रतिवेदन—जो सिन्दरी उर्वरक तथा रासायनिक लिमिटेड, हिन्दुस्तान केबल्स लिमिटेड, हिन्दुस्तान हाउसिंग फैक्टरी लिमिटेड, नाहन फाउंडरी लिमिटेड, के बारे में था ; चौदहवां प्रतिवेदन, जो हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लिमिटेड, हिन्दुस्तान शिपयार्ड लिमिटेड के बारे में था; पन्द्रहवां प्रतिवेदन जोकि कोयला आयुक्त के संगठन एवं राज्य कोयला खदानों तथा नमक संगठन के बारे में था और सोलहवां प्रतिवेदन जो राष्ट्रीकृत और औद्योगिक उपक्रमों के प्रशासन के बारे में था । समिति ने उत्पादन मंत्रालय के अधीन तीन और उपक्रमों की जांच शुरू की और उन पर प्रतिवेदन पेश किये । ये प्रतिवेदन बाइसवां तथा सत्ताइसवां प्रतिवेदन जो क्रमशः राष्ट्रीय उपकरण कारखाना

कलकत्ता तथा हिन्दुस्तान एन्टीबायोटिक्स लिमिटेड तथा हिन्दुस्तान इन्सेक्टीसाइड्स लिमिटेड के बारे में थे। इसी के साथ साथ समिति ने रेलवे मंत्रालय के प्राक्कलनों की जांच भी शुरू की। यह काम सब से बड़ा था जैसाकि निम्नलिखित आंकड़ों से सिद्ध होता है :—

(१) बैठकों की संख्या—२३

(२) साक्ष्य लिये गये व्यक्तियों की संख्या —३०८

(३) पठित सामग्री—८००० पृष्ठ।

समिति ने कार्य संचालनार्थ बहुत सी उप-समितियां बनाई जिन्हों ने बहुत से रेलवे उपक्रमों का दौरा किया और मौके पर जा कर स्थिति देखी। समिति ने रेलवे के बारे में विभिन्न व्यापार मंडलों तथा अन्य गैर-सरकारी संस्थाओं से आये हुए अभ्यावेदनों की जांच करने के लिये एक विशेष उपसमिति नियुक्त की। समिति ने रेलवे के बारे में १५ प्रतिवेदन उपस्थापित किये।

नवीन प्रक्रिया :

इस वर्ष समिति ने रेलवे के १९५६-५७ के आय-व्ययक के पेश किये जाने के तुरन्त बाद, उस का परीक्षण कर के एक नवीन प्रणाली चालू की तथा १६ मार्च, १९५७ को सभा में अपना प्रतिवेदन (तेईसवां प्रतिवेदन) प्रस्तुत किया। इस वर्ष प्राक्कलन समिति की एक उप-समिति ने, पहले प्रतिवेदनों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही की क्रमवार जांच की तथा इस प्रकार पहले वर्ष में प्रारम्भ किये गये कार्य में पर्याप्त प्रगति की।

१९५६–५७

१९५६-५७ की प्राक्कलन समिति ने परिवहन, सामुदायिक विकास, संचार (विमान निगम) तथा प्रतिरक्षा मंत्रालयों से सम्बन्धित प्राक्कलनों पर विचार किया। चूंकि प्रतिरक्षा मंत्रालय की जांच में कुछ गुप्त कागज़ात का देखना ज़रूरी था, इसलिये इस सम्बन्ध में एक विशेष प्रक्रिया निकाली गई। और इसके लिये अध्यक्ष महोदय ने एक निदेश भी जारी किया।

समिति की सिफारिशों पर कार्यवाही :

पहले वर्षों की तरह इस वर्ष भी कई उप-समितियों ने काम किया। विचाराधीन विषय इन उप-समितियों में बांट दिये गये थे और फिर उन की जांच की गई। इस वर्ष अध्यक्ष महोदय ने एक निदेश दिया कि प्राक्कलन समिति के पहले प्रतिवेदनों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही का विवरण तथा उस पर समिति की टिप्पणी सभा पटल पर रखी जाये। तदनुसार, समिति ने, प्राक्कलन समिति के प्रथम, द्वितीय, तथा तृतीय प्रतिवेदनों में की गई सिफारिशों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही के सम्बन्ध में क्रमशः ३५वां, ३६वां तथा ३७वां प्रतिवेदन सभा में प्रस्तुत किया। जैसा कि पहले होता था उसी प्रकार एक उप-समिति को, पहले प्रतिवेदनों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाहियों की पर्याप्तता अथवा अपर्याप्तता की जांच करने का काम सौंपा गया।

१९५६-५७ की समिति ने निम्न प्रतिवेदन प्रस्तुत किये :

चौंतीसवां प्रतिवेदन	परिवहन मंत्रालय, पर्यटन।
पैंतीसवां प्रतिवेदन	पहले प्रतिवेदन की सिफारिशों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही।
छत्तीसवां प्रतिवेदन	दूसरे प्रतिवेदन की सिफारिशों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही।
सैंतीसवां प्रतिवेदन	तीसरे प्रतिवेदन की सिफारिशों पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही।
अड़तीसवां प्रतिवेदन	सामुदायिक विकास मंत्रालय
उन्तालीसवां प्रतिवेदन	प्रतिरक्षा मंत्रालय—भारत इलैक्ट्रोनिक्स
चालीसवां प्रतिवेदन	सामुदायिक विकास मंत्रालय
इकतालीसवां प्रतिवेदन	संचार मंत्रालय—एयर इंडिया इंटरनेशनल
बयालीसवां प्रतिवेदन	सामुदायिक विकास मंत्रालय
तितालीसवां प्रतिवेदन	संचार मंत्रालय—भारतीय एयर, लाइन्स निगम।

विशेषाधिकार भंग के उदाहरणों को मोटे तौर से निम्नलिखित रूप से संक्षिप्त किया जा सकता है :

(१) सभा के किसी सदस्य का किसी गैर सदस्य द्वारा अपमान : इस में सदस्यों को सभा में उन के कार्य के कारण उन्हें छेड़ने, डराने और धमकाने के प्रयत्न, तथा संसद् संबंधी कार्यो के कारण सदस्यों को असम्मानित करने अथवा सदस्यों को रिश्वत देने के प्रयत्न शामिल हैं। सदस्य द्वारा रिश्वत लिये जाने पर उसे संसद् से हटा दिये जाने का दंड दिया गया है।

(२) सामूहिक रूप से सभा का अपमान चाहे वह सदस्य द्वारा हो अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा : इस में सभा, अध्यक्ष और प्रवर समितियों को असम्मानित करना शामिल है।

(३) सभा के आदेशों की अवज्ञा करने अथवा उस की प्रक्रिया, उस के पदाधिकारियों के कर्त्तव्य-पालन अथवा सभा या उसकी समितियों के समक्ष साक्ष्य देने के सम्बन्ध में उस के साक्षियों से हस्तक्षेप करना : इस श्रेणी के अन्तर्गत प्रमुख विशेपाधिकार भंग, समाचारपत्रों में सभा में सदस्य के भापण को गलत ढंग से पेश करना, सभा में उपस्थापित करने से पूर्व समिति की कार्यवाही का अथवा साक्ष्य का प्रकाशन, गुप्त सत्र की कार्यवाही को प्रगट करना, सभा अथवा समिति के समक्ष साक्षियों का दुर्व्यवहार आदि आते हैं।

विशेषाधिकार समिति : लोक सभा प्रक्रिया नियमों में, सभा के कार्यक्रम में विशेपाधिकार भंग के मामले पर विचार करने को बहुत अधिक प्राथमिकता दी गई है। नियमों में यह भी उपबन्धित है कि विशेपाधिकार भंग की शिकायत हाल में हुए विशेष मामले से ही सम्बन्धित हो तथा उस में सभा के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। ऐसे मामलों पर प्रश्न काल के तत्काल पश्चात् ही विचार किया जाता है। विशेषाधिकार का प्रश्न सभा में केवल अध्यक्ष की अनुमति से ही उठाया जा सकता है। यह अनुमति तभी दी जाती है जब वह इस बात से संतुष्ट होता है कि यह प्रत्यक्षतः विशेषाधिकार भंग का मामला है। विशेषाधिकारों के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक विशेषाधिकार समिति बनाई जाती है। समिति को ये प्रश्न या तो अध्यक्ष स्वयं निर्देश करता है या किसी सदस्य के कहने पर भेजता है।

सरकारी पक्ष तथा विरोधी दलों, दोनों को ही समिति में उचित प्रतिनिधित्व मिलता है। समिति का यह कर्त्तव्य है कि वह विशेपाधिकार के प्रत्येक मामले की जांच करे तथा प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर यह निश्चय करे कि क्या उस में विशेपाधिकार भंग का मामला अन्तर्ग्रस्त है ? यदि हां, तो वह किस प्रकार का है, तथा किन परिस्थितियों में उत्पन्न हुआ है। उस के आधार पर वह उचित सिफारिश करती है किन्तु अन्तिम निश्चय सभा पर ही निर्भर रहता है। इस प्रक्रिया से मामलों पर अधिक न्यायिक और विस्तृत रूप से विचार किया जा सकता है।

विशेपाधिकार समिति को यह अधिकार है कि वह व्यक्तियों की उपस्थिति और समिति के प्रयोजन के लिये आवश्यक कागज पत्रों तथा अभिलेखों को देखने की मांग कर सकती है। साक्षी का समिति द्वारा पूछे गये किसी प्रश्न का उत्तर देने से इन्कार करना, समिति की मानहानि तथा इस कारण से सभा की मानहानि करना समझा जाता है और उसे तदनुरूप दंड दिया जा सकता है।

दंड : जब सभा किसी व्यक्ति को विशेपाधिकार भंग के लिये अपराधी ठहराती है तो उसे दंड दिया जा सकता है। हाउस आफ कामन्स में दंड के प्रकार यह हैं : प्रबोधन, ताड़न और कारावास। कारावास का दंड गंभीर अपराध के लिए ही दिया जाता है। सभा के आदेश पर कारावास के मामले में बन्दी प्रत्यक्षीकरण नहीं होता, तथापि कारावास की अवधि सत्रावसान अथवा सभा के विघटन से अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती है।

1057 LS.—16

सभा के आदेश पर अध्यक्ष गिरफ्तारी के वारण्ट जारी करता है। वारंटों को जारी करने में असैनिक अधिकारियों की सहायता ली जा सकती है।

इस सम्बन्ध में इंगलैंड के हाउस आफ कामन्स की विशेषाधिकार समिति के 'डेली मेल' (८ अप्रैल, १६४८) के मामले में दिये गये निर्णयों का निर्देश किया जा सकता है। समिति का यह मत था कि यह सभा की प्रतिष्ठा के अनुरूप नहीं है कि वह प्रत्येक मानहानि के वक्तव्य पर, जिस से किसी रूप में संसद् की मानहानि होती है, विशेषाधिकार भंग के लिये कानूनी कार्यवाही करें। यह स्वीकार करते हुए कि संसद् का यह कर्तव्य है कि वह जनता के संसद् में विश्वास पर आघात करने वाले मामलों में हस्तक्षेप करे, समिति इस वात को भी महत्वपूर्ण समझती थी, कि "एक ओर संसदीय विशेषाधिकार विधि का प्रयोग इस रूप में न किया जाय जिससे आलोचनाओं और मतों की, भले ही वह अतिशयोक्तिपूर्ण और पक्षपातपूर्ण हों—स्वतन्त्र अभिव्यक्ति पर प्रतिवन्ध लगे, दूसरी ओर संसदीय जांच की प्रक्रिया का प्रयोग इस प्रकार न किया जाय कि उनसे अनुत्तरदायी वक्तव्यों को महत्व मिले।

समाचार पत्र और संसदीय विशेषाधिकार :

२० अक्तूबर १९५३ को दक्षिण भारतीय पत्रकार संघ प्रेस क्लव, मद्रास में पत्रकारों को भाषण देते हुए लोक-सभा के सचिव श्री महेश्वर नाथ कौल ने संसद् के उचित रूप से कार्य करने के लिये समाचारपत्रों के महत्वपूर्ण भाग का उल्लेख किया था। समाचारपत्रों और संसदीय विशेषाधिकारों के प्रश्न के सम्वन्ध में उन्होंने कहा :—

"यह आवश्यक है कि संसद् की कार्यवाही को समाचारपत्रों के द्वारा जनता के समक्ष उपस्थित किया जाय, क्योंकि समाचारपत्रों के द्वारा ही जनता की प्रतिक्रिया संसद् तक पहुंच सकती है।

"हम इस वात पर निगाह रखते हैं कि प्रेस गैलरी में आने वाले संवाद दाता संसद् की कार्यवाही को किस प्रकार प्रकाशित करते हैं। अध्यक्ष की इच्छा भी यही है कि ये पत्रकार वहां की कार्यवाही को सच्चाई से प्रकाशित करें तथा साथ ही संसद् की प्रतिष्ठा भी वनाये रखें।

"सभा के विशेषाधिकारों के पीछे यह विचार निहित है कि संसद् के पास सदैव रक्षित शक्ति रहे जिससे उस की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता को उसी प्रकार वल प्राप्त हो जैसे कि न्यायालयों को मानहानि के अपराध में दंड देने का अधिकार होता है तथा विधान के क्षेत्र में देश के सर्वोच्च अधिकरण के रूप में उस के प्राधिकार का उपहास न किया जाय। किन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि इस से समाचारपत्रों की स्वतन्त्रता तथा नागरिकों की आलोचना करने की स्वतन्त्रता पर किसी प्रकार का प्रतिवन्ध लगता है।"

मूलभूत अधिकार और संसदीय विशेषाधिकार :

भारत के संविधान ने नागरिकों को कुछ मूलभूत अधिकार दिये हैं। इन अधिकारों को, राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, सुचारुता, तथा विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध इत्यादि के हितों के लिये आवश्यक कुछ सीमाओं को ध्यान में रखते हुए विधि न्यायालयों द्वारा लागू करवाया जा सकता है।

कभी-कभी यह कहा जाता है कि संसद् के विशेषाधिकारों को मूल भूत अधिकारों से प्रतिवन्धित माना जाय। कुछ भी हो इस समय संसद् के विशेषाधिकारों को संविधान के अधीन, स्पष्ट रूप से इंगलैंड के हाउस आफ कामन्स के समतुल्य कर दिया गया है; जिससे वे संविधान का एक अंग वन गये हैं। इसलिये यह कहना कठिन होगा कि संसद् के विशेषाधिकार के सम्वन्ध में संविधान के एक भाग में स्पष्टतः जो कुछ भी उपवन्ध किया गया है वह मूलभूत अधिकारों से प्रतिवन्धित है; क्योंकि संविधान के उपवन्धों को एक साथ ही पढ़ा जाना चाहिये।

विशेषाधिकारों को संहितावद्ध करना :

संविधान के अनुच्छेद १०५(३) के अधीन संसद् की शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों की विधि द्वारा व्याख्या की जा सकती है। इस विषय पर लिखते हुए भारतीय प्रेस आयोग (१९५४) ने निम्न मत प्रगट किया था :—

"यह वांछनीय होगा कि संसद् तथा राज्य विधान सभायें दोनों ही मानहानि तथा उसे लागू करने की प्रक्रिया के सम्वन्ध में अपनी यथार्थ शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों की विधान द्वारा व्याख्या करें। ऐसी विधि

को हमारे संविधान के अनुरूप होना चाहिये और यदि वह मूलभूत अधिकारों के विरुद्ध हो तो उसका विरोध किया जा सकता है। ऐसा होने पर देश के सर्वोच्च अधिकरण द्वारा इसका निर्णय किया जा सकता है। अनुच्छेद १०५ और १४६ में ऐसे विधान को अविनियमित करने का उपबन्ध है। केवल अन्तःकालीन अवधि के लिये ही संसद् और राज्य विधान सभाओं को हाउस आफ कामन्स की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां प्रदान की गई हैं।"

२३ जनवरी, १६५५ में राजकोट में हुए भारत के विधान मंडलों के पीठासीन पदाधिकारियों के सम्मेलन में भाषण देते हुए लोक सभा के अध्यक्ष, श्री जी० वी० मावलंकार ने कहा था कि :

"प्रेस आयोग ने इस मामले को केवल समाचार पत्रों की दृष्टि से ही देखा है। कदाचित् उन्हें समाचार पत्रों की कठिनाइयां वास्तविक प्रतीत हुई, किन्तु विधान सभा के दृष्टिकोण से इस प्रश्न को दूसरी दृष्टि से देखना होगा। इसे संहितावद्ध करने से समाचारपत्रों को कोई लाभ हुए विनाही विधान मंडल की प्रतिष्ठा और सर्व प्रभुत्व सम्पन्नता को आघात पहुंचेगा। यह तर्क किया जा सकता है कि समाचारपत्रों को विशेषाधिकारों के सम्बन्ध में अनजान रखा गया है। इसका सरल उत्तर यह है कि संविधान के द्वारा विधानमंडलों और सदस्यों इत्यादि को दिये गये विशेषाधिकारों को हाउस आफ कामन्स के विशेषाधिकारों के समकक्ष कर दिया गया है। यहां इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिये कि हाउस आफ कामन्स कोई नया विशेषाधिकार उत्पन्न नहीं होने देता है केवल उन्हीं विशेषाधिकारों को मान्यता दी जाती है जो परम्परागत चले आ रहे हैं। इसलिये उन्हें संहितावद्ध करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है।"

विधान-कार्य का सिंहावलोकन

भारतीय गणतन्त्र की प्रथम संसद् द्वारा किये गये विधान-कार्य का व्योरा बहुत ही महत्वपूर्ण है। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण सुधारों का प्रादुर्भाव करने वाले अनेक विधानों को इस संसद् के कार्यकाल में अधिनियमित किया गया। संसद् के सामने जो कार्य था वह बहुत ही विशाल था और जिस गति से उसने उसे पूरा किया, वह प्रशंसनीय है। इस अवधि में कुल ३२२ अधिनियम पारित किये गये जिनमें से ४२.५ प्रतिशत अधिनियम वित्तीय विषयों से सम्बन्धित थे। यद्यपि एक लेख में सभी पारित अधिनियमों का एक संक्षिप्त व्योरा भी देना कठिन है, फिर भी सामुदायिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रभाव डालने वाले कुछ महत्वपूर्ण विधानों का प्रत्यालोचन नीचे दिया जाता है।

सामाजिक-आर्थिक नीति

संविधान में उल्लिखित राज्य की नीति के निदेशक तत्वों के अनुसरण में संसद् ने देश के लिये समाज के समाजवादी ढांचे का उद्देश्य अपने सामने रखा। उस ने जनता के रहन सहन के स्तर को ऊंचा उठाने के लिये कदम उठाये और उत्पादक उपक्रमों में सरकार को अधिक भाग लेने का अधिकार दे कर तथा धीरे धीरे आर्थिक समानता लाने का प्रयत्न करने वाले वित्तीय विधानों को स्वीकार कर के आर्थिक असमानता को कम करने के कार्य को पूरा करने का प्रयत्न किया।

इस अवधि के वित्तीय विधानों में एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा विशेष विधान "सम्पदा शुल्क अधिनियम" था। यह अधिनियम केवल कुछ व्यक्तियों के हाथों में सम्पत्ति के केन्द्रीयकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न असमानता को, काफी हद तक, दूर करने के लिये है। इस अधिनियम के अधीन चल और अचल सभी सम्पत्तियों पर, केवल उस सम्पत्ति को छोड़ कर जिसे विशेष रूप से मुक्त कर दिया गया हो, शुल्क लगाया गया है। यह भी विचार था कि यह विधान राज्यों को उन की विकास योजनाओं के लिये वित्त की व्यवस्था करने में भी सहायक होगा।

आर्थिक विधान

देश के सामान्य आर्थिक विकास के प्रश्न की ओर संसद् का ध्यान सदैव रहा है। इस सम्बन्ध में अनेक विधान पारित किये गये। विधायकों का विचार था कि गांवों तथा छोटे छोटे उद्योगों का विकास करने से, अन्य परिणामों के साथ, हमारे देश की ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था अधिक संतुलित तथा गठित हो जायेगी। इस उद्देश्य के लिये संसद् ने "खादी तथा अन्य हथ करघा उद्योग विकास (वस्त्र पर अतिरिक्त उत्पादन शुल्क) विधेयक", "धोती (अतिरिक्त उत्पादन शुल्क) विधेयक", "खादी ग्रामोद्योग आयोग विधेयक", आदि विधेयकों को स्वीकार किया। इन विधेयकों ने सरकार को अधिकार दिया कि वे बड़े क्षेत्रों में उत्पादन की मात्रा पर रोक लगा कर और खादी तथा ग्रामोद्योग के उत्पादन पर कम कर लगाकर या सीधे सरकारी अनुदान दे कर इन उद्योगों को सहायता दें।

उद्योग (विकास तथा विनियमन) अधिनियम

उद्योगों के विकास को सुरक्षित रखने के लिये व्यवस्था मुख्य रूप से "उद्योग (विकास तथा विनियमन) अधिनियम" में की गयी थी। वाद में कुछ और उद्योगों को इस विधान की व्याप्ति में सम्मिलित करने के लिये संसद को इसका संशोधन करना पड़ा। यह महसूस कर के कि अभीष्ट क्षेत्रों में देश में विनियोजित करने के लिये उपलब्ध सीमित पूंजी संसाधनों को ठीक प्रकार से उपयोग में लाने के लिये पूंजी निर्गमों पर नियंत्रण जारी रखना आवश्यक है, संसद् ने एक विधान अधिनियमित किया जिस में मुख्य अधिनियम के समाप्त होने की तिथि को उसके उपबन्धों में से हटा कर उसे एक स्थायी अधिनियम बना दिया। इस सम्बन्ध में वायदा बाजार तथा सट्टे का विनियमन करने वाले महत्वपूर्ण विधान का भी उल्लेख किया जा सकता है।

दशमिक सिक्के तथा दशमिक प्रणाली

आर्थिक विधानों की लम्बी सूची में दशमिक सिक्कों तथा बाटों और मापों की दशमिक प्रणाली को प्रचलित करने के लिये संसद् द्वारा किया गया निर्णय भी काफी महत्वपूर्ण है ।

कृषि उत्पाद (विकास तथा भण्डार-व्यवस्था) निगम अधिनियम

कृषि उत्पाद के विकास तथा उस की भाण्डार-व्यवस्था के सम्बन्ध में संसद् ने एक अधिनियम पारित किया जिसके द्वारा एक "राष्ट्रीय विकास तथा भाण्डार व्यवस्था बोर्ड" स्थापित किया गया जो एक नीति निर्धारित करने वाली तथा वित्त की व्यवस्था करने वाली संस्था थी । अधिनियम में कृषि उत्पाद आदि के संग्रह की उचित व्यवस्था के लिये तथा उस के क्रय-विक्रय की देखभाल करने के लिये केन्द्रीय तथा राज्य-भाण्डार-व्यवस्था निगम स्थापित किये जाने का उपबन्ध किया गया है ।

एयरलाइन्स, इम्पीरियल बैंक तथा जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण

संसद् ने विमान निगम अधिनियम पारित कर के एयरलाइन्स के राष्ट्रीयकरण के लिये अपनी स्वीकृति दी ताकि देश के भीतर तथा बाहर सुरक्षित, कुशल, कम खर्चीली और सुसमन्वित विमान परिवहन सेवा की व्यवस्था की जा सके ।

इस के बाद देश की सब से बड़ी बैंकिंग संस्था का राष्ट्रीयकरण किया गया ।

संसद् ने जीवन बीमा निगम अधिनियम पारित कर के जीवन बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण भी किया ताकि जीवन बीमा संरक्षण के मामले में बीमा-धारियों को पूर्ण सुरक्षा प्राप्त हो और बीमा-कार्य का क्षेत्र, विशेषतया गांवों में, विस्तृत हो और प्रभावशाली ढंग से इस बात का प्रचार किया जाये कि जनता कुछ धन बचाये ।

बैंकिंग समवाय अधिनियम

प्रथम संसद् के अन्तिम महत्वपूर्ण अधिनियमों में, एक महत्वपूर्ण अधिनियम के रूप में, बैंकिंग समवाय अधि-नियम के संशोधन का भी उल्लेख किया जा सकता है । इस अधिनियम का यह महत्व है कि इसके द्वारा बैंकिंग समवायों को पूर्ण रूप से रिजर्व बैंक की देख रेख में कर दिया गया है क्योंकि राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लिये बैंकिंग प्रणाली का समुचित उपयोग करने के लिये संसद् ने इस कार्य को आवश्यक समझा था ।

श्रम संबंधी विधान

औद्योगिक श्रमिकों के कल्याण सम्बन्धी विधान पर संसद् का सदैव ध्यान रहा है । कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के एक संशोधन द्वारा उस ने सरकार को अधिकार प्रदान किया कि वह कर्मचारी भविष्य निधि योजना के उपबन्धों को किसी भी कारखाने पर लागू कर सकती है यदि सरकार ऐसा समझती है कि नियोजक और कर्मचारियों में से काफी लोग इस बात से सहमत हैं कि उन उपबन्धों को उन के कारखाने पर लागू किया जाना चाहिये । "विमुक्त कारखानों" के कर्मचारियों के सम्बन्ध में भी, किसी दिवालिये नियोजक की आस्तियों के दावों पर नामनिर्देशन तथा भविष्य निधि की राशियों को कुर्क करने के विरुद्ध संरक्षण का लाभ भी दिया गया ।

औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम नामक एक अन्य विधान द्वारा संसद् ने यह व्यवस्था की कि कुछ विशेष परिस्थितियों में कामबन्दी होने या छंटनी होने की अवस्था में कर्मचारियों का प्रतिकर या भुगतान किया जायेगा । उस के बाद, एक और विधान के द्वारा इसी प्रकार के उपबन्धों को बागानों के कर्मचारियों पर भी लागू कर दिया गया । उस के पश्चात् कारखाना अधिनियम को संशोधित कर के संसद् ने इस बात की व्यवस्था की कि कारखानों में रात के समय काम करने के लिये स्त्रियों तथा बच्चों को न रखा जाये और कर्मचारियों को वेतन सहित छुट्टी लेने के हक़दार बनाने के लिये एक वर्ष में कम से कम २४० दिनों की उपस्थिति की व्यवस्था की । इसमें कारखानों के कर्मचारियों के लिये कुछ मूलभूत संरक्षणों तथा सुविधाओं का भी उपबन्ध किया गया है ।

राज्य पुनर्गठन अधिनियम

इस संसद् द्वारा पारित सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण विधान राज्य पुनर्गठन अधिनियम है। इस बात का श्रेय इस संसद् को प्राप्त है कि उसने संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम के साथ इस विधान को पारित करके भारत के राजनैतिक चित्र का स्वरूप बदल दिया।

बहुत समय से भारत की प्रशासकीय सीमाओं के पुनर्गठन की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। १९१८ में ही, भारतीय संवैधानिक सुधारों का प्रतिवेदन तैयार करने वालों ने भी यही मांग उठाई थी। इस विधान पर काफी चर्चा चली थी और संसद् में काफी समय तक वाद-विवाद हो चुकने के बाद ही इसको स्वीकार किया गया था।

इस विधान का महत्व इस बात में है कि इसने प्रशासकीय इकाइयों की संख्या घटाकर २० कर दी है—१४ राज्य और केन्द्र द्वारा शासित ६ प्रदेश। अब इन पुनर्गठित राज्यों में भाषा और संस्कृति के मामले में कहीं अधिक समानता है। अब केवल दो ही राज्य—बम्बई और पंजाब— द्विभाषी राज्य हैं। सभी राज्यों को समान प्रतिष्ठा प्रदान की गई है, और लोगों पर शासन करने के वंशानुगत अधिकारों के सभी अवशेषों का पूरी तौर पर अन्त कर दिया गया है।

सामाजिक विधान

संसद् ने लिंग के आधार पर स्त्रियों के विरुद्ध किये जाने वाले विभेद को हटाने के लिये उपयुक्त विधान अधिनियमित किया है। हिन्दू विवाह अधिनियम और हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम इसी प्रयोजन के लिये बनाये गये हैं। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम में लिंग के आधार पर कोई विभेद किये बिना ही सगोत्रता और आत्मीयता की लौकिक कसौटी के आधार पर ही उत्तराधिकार निर्धारित किया गया है। यह एक ऐसा विभेद है जो आधुनिक सामाजिक प्रवृत्तियों से मेल न खाने पर भी और संविधान द्वारा स्वीकृत सिद्धांतों के विरुद्ध होते हुये भी, नये विधान के प्रवृत्त होने तक हमारे समाज में जारी रहा है।

इस प्रकार, सामाजिक क्षेत्र में इस संसद् द्वारा प्राप्त की गई सफलताओं में सबसे अधिक महत्वपूर्ण सफलता हिन्दू विधि का सुधार ही है। इसके अनुसार, अब स्त्रियों को वे अधिकार दे दिये गये हैं, जिनसे उन्हें युगों से वंचित रखा गया था। इसके द्वारा पहली बार स्त्रियों और पुरुषों दोनों को समान प्रतिष्ठा दी गई है। संसद् अपने कुछ इन महत्वपूर्ण सुधारों पर उचित ही गर्व कर सकती है जैसे हिन्दुओं में एक-विवाह प्रथा लागू करना, तलाक का अधिकार देना, पुत्रियों को भी पिता की सम्पत्ति में हिस्से का अधिकार देना और दत्तक ग्रहण के मामले में समानता का अधिकार प्रदान करना।

सामाजिक विधान के क्षेत्र में दूसरा महत्वपूर्ण विधान विशेष विवाह अधिनियम है। इसमें एक विशेष प्रकार के विवाह की व्यवस्था की गई है, जिसका लाभ भारत में रहने वाले सभी व्यक्ति और विदेशों में रहने वाले सभी भारतीय राष्ट्रजन उठा सकते हैं। इस विवाह के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वर और वधू दोनों एक ही धर्म के अनुयायी हों। विवाह की विधि को किस प्रकार सम्पन्न किया जाये, यह भी उन दोनों की इच्छा पर ही छोड़ दिया गया है। उसमें यह भी व्यवस्था की गई है कि अन्य प्रकार से विवाहित दम्पति भी उस अधिनियम के अधीन अपने विवाह पंजीयित करा, अधिनियम द्वारा प्रदान की गई सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं।

सामाजिक क्षेत्र में, तरुण व्यक्ति (हानिकर प्रकाशन) अधिनियम भी उल्लेखनीय है। इस अधिनियम द्वारा तरुण व्यक्तियों को भयोत्पादक साहित्य आदि के प्रभाव से बचाने का प्रयास किया गया है। इसीलिये, इस अधिनियम द्वारा भारत में ऐसे साहित्य आदि की रचना और उसके प्रचार पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

सामाजिक विधान के क्षेत्र में, दो और भी अन्य महत्वपूर्ण विधान हैं—स्त्रियों तथा लड़कियों का अनैतिक पण्य अधिनियम और स्त्री तथा बाल-संस्था (अनुज्ञापन) अधिनियम। इससे पहले कुछ राज्यों में अनैतिक पण्य के दमन के लिये कुछ विधान अवश्य थे, लेकिन उन विधियों में न तो एकरूपता थी और न वे अधिक व्यापक ही थीं। तदनुसार, इस अधिनियम को केवल एकरूपता स्थापित करने के लिये ही नहीं बल्कि अनैतिक पण्य करने वालों पर यथेष्ट रूप से रोकथाम लगाने, के लिये भी पारित किया गया था। यह अधिनियम समस्त भारत पर लागू होता है और उसके अधीन सभी अपराध हस्तक्षेप्य हैं।

मित किया। इस बात को ध्यान में रखते हुये ही कि चूंकि संसद् की कार्यवाहियों की रिपोर्टों के प्रकाशन से किसी को निजी तौर पर हो सकने वाली हानि की अपेक्षा उन रिपोर्टों के लोगों में प्रचार से होने वाला लाभ कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। यह विधेयक पुरःस्थापित किया गया था, ताकि नेकनीयती से किये जाने वाले ऐसे प्रकाशनों को जो विशेषाधिकार प्राप्त हों उन्हें विधि द्वारा पारिभाषित कर दिया जाये। इस अधिनियम में इसीलिये यह व्यवस्था की गई है कि संसद् के किसी सदन की किसी कार्यवाही की काफी हद तक सच्ची रिपोर्ट के ऐसे प्रकाशन के लिये जो किसी स्पष्ट दुर्भाव या दुराशय से नहीं किया गया हो, किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध व्यवहार या आपराधिक न्यायालय में मुकदमा दायर नहीं किया जा सकेगा।

संक्षेप में, संसद् ने लोकतंत्र के आधुनिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये कल्याणकारी राज्य के आदर्श की दिशा में पर्याप्त रूप से प्रगति की है, और इसी आदर्श की पूर्ति के लिये नागरिकों को क्रमशः अधिकाधिक सामाजिक अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया है।
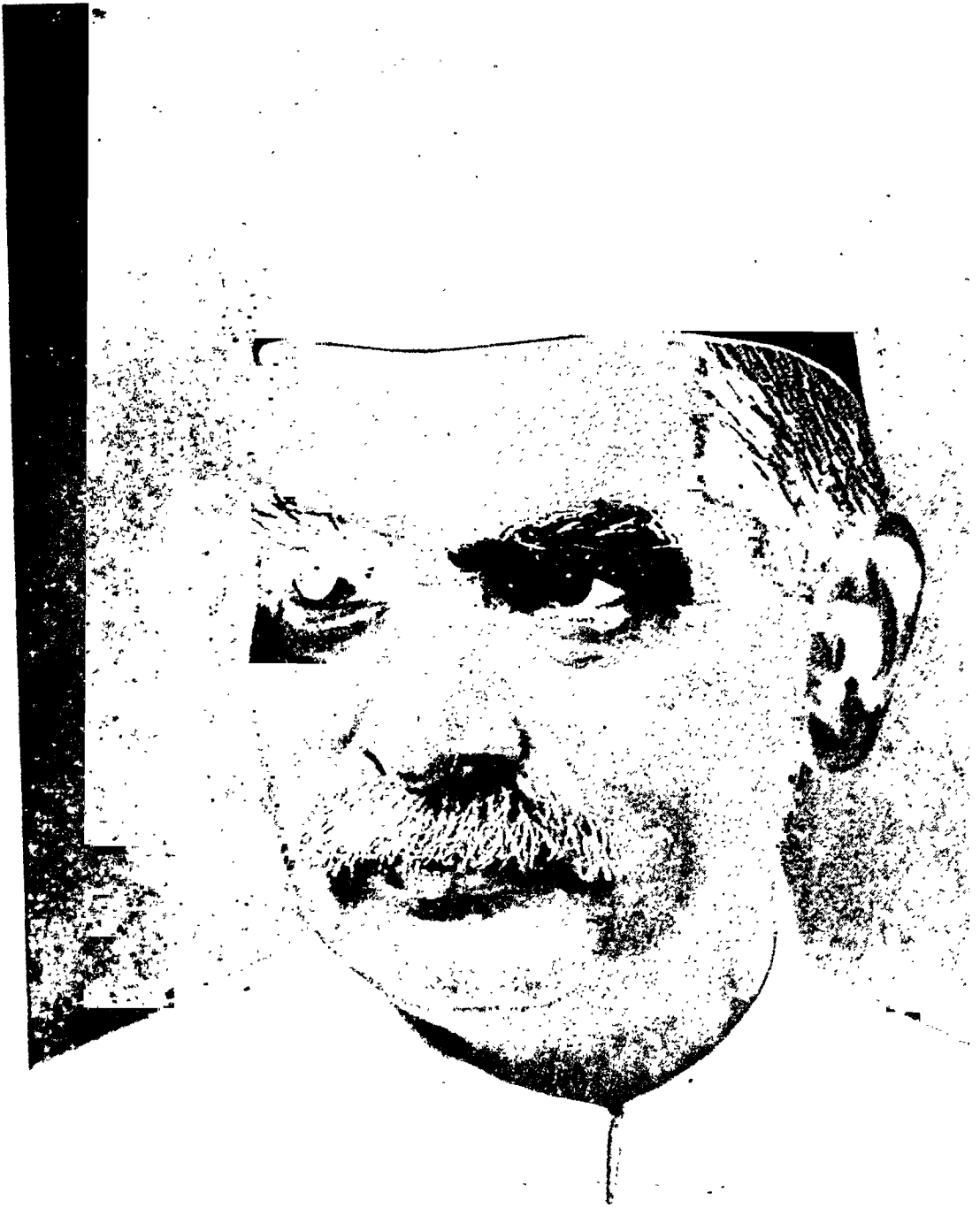
राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद

प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू

फलक . ३

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्
उपराष्ट्रपति तथा राज्य सभा के सभापति

फलक : ८

स्वर्गीय अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलंकर
[१३ मई, १९५२ से २७ फरवरी, १९५६]

फलक : ६

फलक : ६
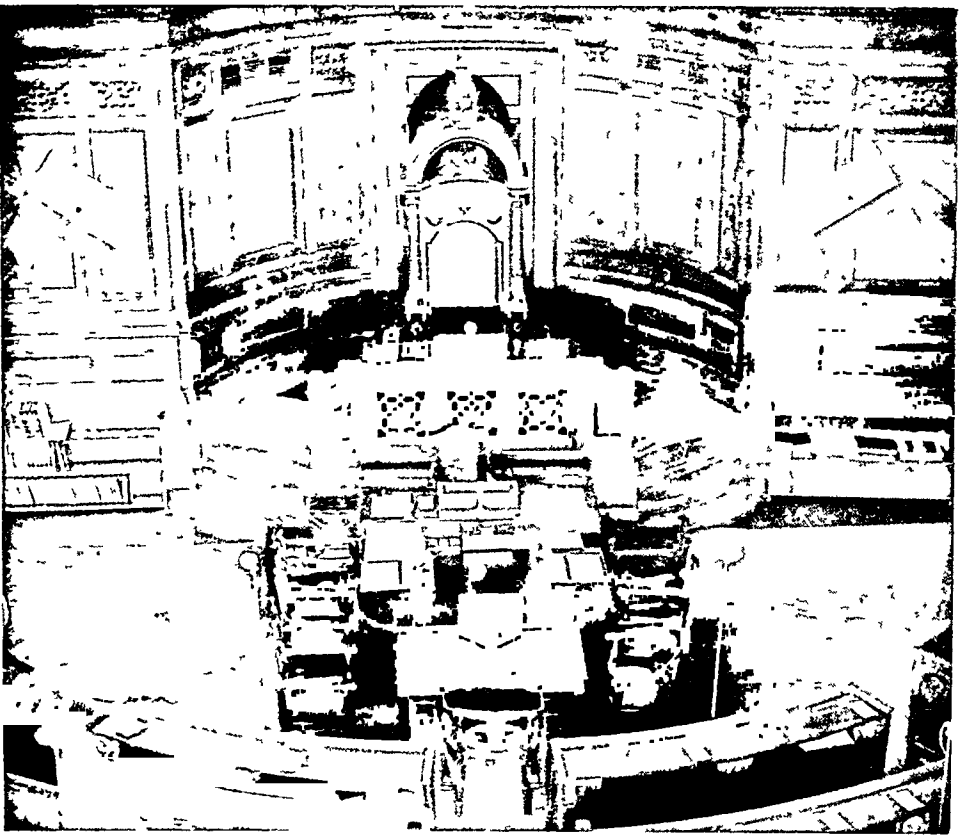
फलक : १३

राज्य सभा कक्ष में सभापति का पीठ

राज्य सभा कक्ष में बैठने की व्यवस्था

प

पुस्तका

ना० प० गा

सभापति, प्राक
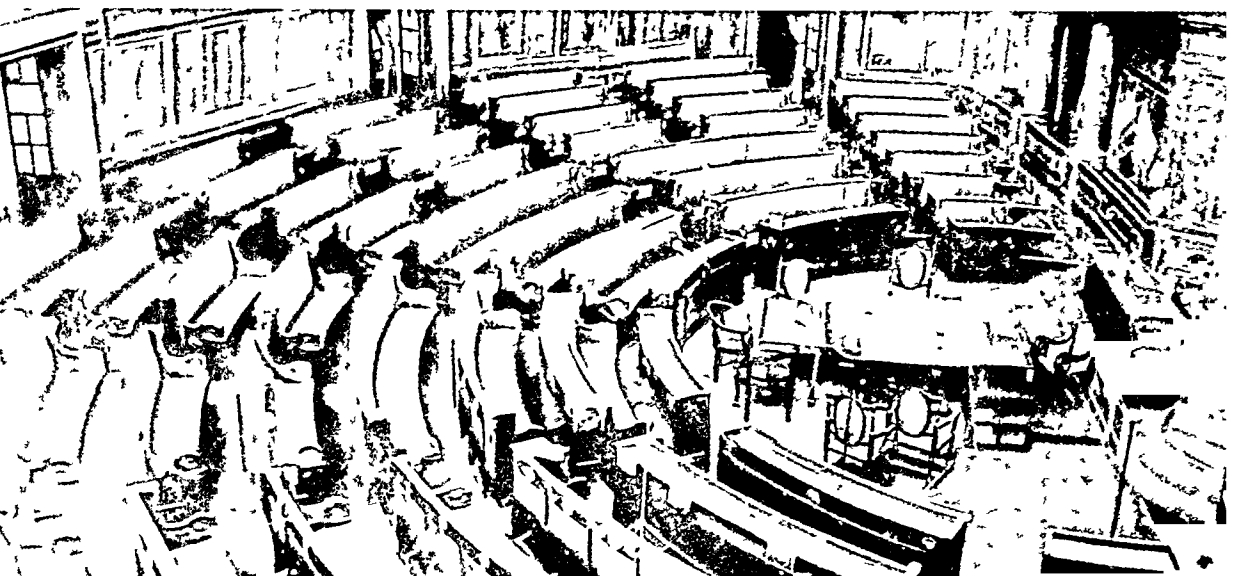
श्री गणेश
मावलंकर
महान् राष्ट्
सभा के
कसीदा कढ़े
का उपहार
हुए

(

फलक

प्रधान मंत्री लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के चित्र का अनावरण करते हुए
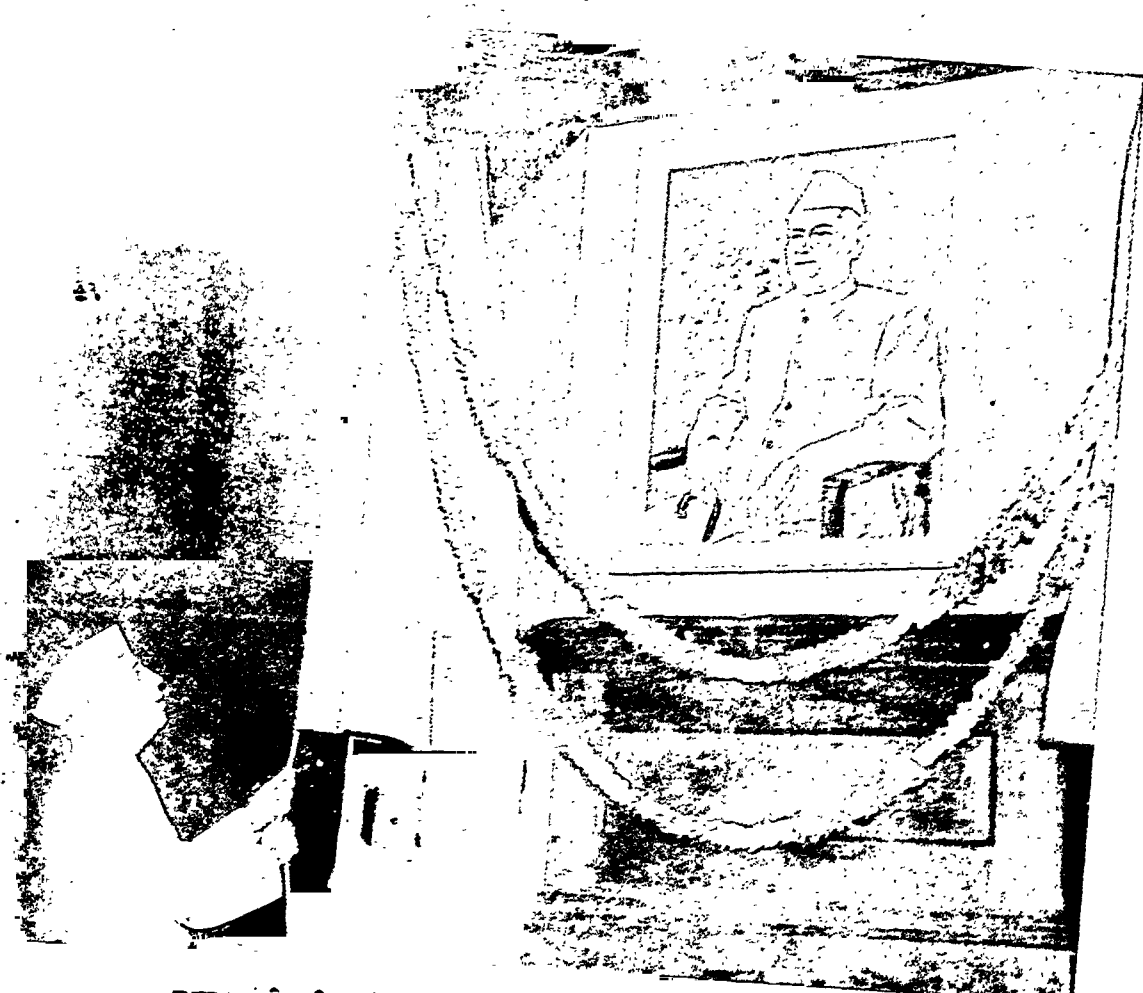
प्रधान मंत्री श्री गणेश वासुदेव मावलंकर के चित्र
का अनावरण करते हुए

परिशिष्ट-भाग १
लोक सभा

एक

लोक-सभा के सत्रों के आरम्भ तथा समाप्ति की तिथियों को दिखाने वाल

[चौदहवें सत्र तक]

सत्र	आरंभ की तिथि	समाप्ति की तिथि	सत्र की अवधि (दिनों में)	कार्य दिनों कुल
पहला सत्र . . .	१३–५–१९५२	१२–८–१९५२	९२	६[illegible]
दूसरा सत्र . . .	५–११–१९५२	२०–१२–१९५२	४६	३[illegible]
तीसरा सत्र . . .	११–२–१९५३	१५–५–१९५३	९४	७[illegible]
चौथा सत्र . . .	३–८–१९५३	१८–९–१९५३	४७	३५
पांचवा सत्र . . .	१६–११–१९५३	२४–१२–१९५३	३९	३०
छठा सत्र . . .	१५–२–१९५४	२१–५–१९५४	९६	७४
सातवां सत्र . . .	२३–८–१९५४	३०–९–१९५४	३९	३१
आठवां सत्र . . .	१५–११–१९५४	२४–१२–१९५४	४०	३२
नवां सत्र . . .	२१-२–१९५५	७–५–१९५५	७६	५८
दसवां सत्र . . .	२५–७–१९५५	१–१०–१९५५	६९	५४
ग्याहरवां सत्र . . .	२१–११–१९५५	२३–१२–१९५५	३३	२७
बारहवां सत्र . . .	१५–२–१९५६	३०–५–१९५६	१०६	७६
तेरहवां सत्र . . .	१६–७–१९५६	१३–९–१९५६	६०	४५
चौदहवां सत्र . . .	१४–११–१९५६	२२–१२–१९५६	३९	३०

*मई १९५२ से ।

1057 LS—17

प्रथम संसद को महत्वपूर्ण घटनाओं का तिथिक्रम

१३–५–१९५२	सामान्य निर्वाचनों के पश्चात् प्रथम संसद् की प्रथम बैठक ।
१५–५–१९५२	श्री ग० वा० मावलंकर लोक सभा के अध्यक्ष चुने गये ।
३०–५–१९५२	श्री म० अनन्तशयनम् आय्यंगार लोक सभा के उपाध्यक्ष चुने गये ।
३१–५–१९५२	श्री एस० वी० कृष्णमूर्ति राव राज्य सभा के उपसभापति चुने गये ।
२४–७–१९५२	प्रधान मंत्री का काश्मीर के सम्बन्ध में वक्तव्य ।
८–८–१९५२ —————— १४–८–१९५२	रक्षित तथा सहायक वायु सेना विधेयक पारित किया गया ।
२४–११–१९५२ —————— ३–१२–१९५२	वायदे के सौदे (विनियमन) विधेयक पारित किया गया ।
९–१२–१९५२ —————— १९–१२–१९५२	लोहा तथा इस्पात समवाय एकीकरण विधेयक पारित किया गया ।
१५–१२–१९५२ —————— १९–१२–१९५२	संविधान (द्वितीय संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
१९–१२–१९५२ —————— २२–१२–१९५२	परिसीमन आयोग विधेयक पारित किया गया ।
१९–१२–१९५२	प्रथम पंचवर्षीय योजना का प्रारूप स्वीकृत हुआ ।
२४–४–१९५३ —————— १–५–१९५३	भारतीय आय कर (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
५–५–१९५३ —————— १२–५–१९५३	उद्योग (विकास तथा विनियमन) संशोधन विधेयक पारित किया गया ।
८–५–१९५३ —————— १४–५–१९५३	विमान निगम विधेयक पारित किया गया ।

*संसद में पारित विधेयकों के सामने जहां दो तिथियां दिखाई गई हैं उनमें से एक तिथि वह है जिसको विधेयक लोक-सभा में पारित किया गया था तथा दूसरी वह है जिसको राज्य-सभा में पारित किया गया था ।

२३–४–१९५४

——— स्वेच्छापूर्वक वेतन परित्याग (करारोपण से विमुक्ति) संशोधन विधेयक पारित किया गया।

२९–५–१९५४

२४–४–१९५४ हिन्द चीन के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री का वक्तव्य।

२४–४–१९५४

——— उच्च न्यायालय के न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) विधेयक पारित किया गया।

१२–५–१९५४

२६–४–१९५४

——— औषधि तथा जादुई चिकित्सा (आपत्तिजनक विज्ञापन) विधेयक पारित किया गया।

१६–२–१९५४

२८–४–१९५४

——— कारखाना (संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

९–३–१९५४

८–५–१९५६

——— हिमाचल प्रदेश तथा विलासपुर (नया राज्य) विधेयक पारित किया गया।

१९–४–१९५४

१०–५–१९५४ अणु शक्ति के शान्ति पूर्ण उपयोगों के सम्बन्ध में चर्चा।

२५–८–१९५४ अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री का वक्तव्य।

२६–८–१९५४

——— खाद्य अपमिश्रण निवारण विधेयक पारित किया गया।

१४–९–१९५४

१३–९–१९५४ बाढ़ की स्थिति से सम्बन्ध रखने वाले प्रस्ताव पर चर्चा की गई।

१७–९–१९५४

——— विशेष विवाह विधेयक पारित किया गया।

८–५–१९५४

२०–९–१९५४

——— चन्द्रनगर (विलय) विधेयक पारित किया गया।

२३–९–१९५४

२२–९–१९५४

——— विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर और पुनर्वास) विधेयक पारित किया गया।

२५–९–१९५४

२३–९–१९५४

——— संविधान (तृतीय संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

२८–९–१९५४

२३–११–१९५४

——— काफी विक्रय विस्तार (संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

२–१२–१९५४

२४–११–१९५४

——— रबड़ (उत्पादन तथा विक्रय) संशोधन विधेयक पारित किया गया।

३–१२–१९५४

१४–१२–१९५४

——— औद्योगिक विवाद (संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

१५–५–१९५४

तिथि	विषय
२०–१२–१९५४	भारत की आर्थिक स्थिति पर चर्चा ।
१०–३–१९५५ —————— २–३–१९५५	श्रमजीवी पत्रकार (औद्योगिक विवाद) विधेयक पारित किया गया ।
१२–३–१९५५ —————— २९–३–१९५५	औषधीय तथा प्रसाधन सामग्री (उत्पादन शुल्क) विधेयक पारित किया गया ।
१६–३–१९५५	गेहूं पर से प्रादेशिक प्रतिवन्धों को हटा लेने के सम्बन्ध में खाद्य मंत्री द्वारा दिया गया वक्तव्य ।
२२–३–१९५५ —————— २९–३–१९५५	अत्यावश्यक वस्तु विधेयक पारित किया गया ।
१२–४–१९५५ —————— २०–४–१९५५	संविधान (चतुर्थ संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
२२–४–१९५५	दशमिक प्रणाली के आधार पर समान वाट तथा माप अपनाने के सम्वन्ध में संकल्प ।
२६–४–१९५५ —————— २५–२–१९५५	बीमा (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
२८–४–१९५५ —————— २–५–१९५५	अस्पृश्यता (अपराध) विधेयक पारित किया गया ।
३०–४–१९५५	अफ्रीकी तथा एशियाई देशों के बांडुंग सम्मेलन के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री का वक्तव्य ।
३०–४–१९५५ —————— ४–५–१९५५	भारत का राज्य बैंक विधेयक ।
५–५–१९५५ —————— १५–१२–१९५५	हिन्दू विवाह विधेयक पारित किया गया ।
२५–७–१९५५	गोआ के सम्वन्ध में प्रधान मंत्री का वक्तव्य ।
२८–७–१९५५ —————— २४–८–१९५५	औद्योगिक तथा राज्य वित्तीय निगम (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
२९–७–१९५५ —————— २६–८–१९५५	भारतीय टंकण (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
१–८–१९५५ —————— २५–८–१९५५	बन्दी (न्यायालयों में उपस्थिति) विधेयक पारित किया गया ।
१–८–१९५५ —————— १–९–१९५५	मद्यसार उत्पाद (अन्तर्राज्यीय व्यापार तथा वाणिज्य) नियंत्रण विधेयक पारित किया गया ।
१७–८–१९५५	गोआ के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री का वक्तव्य ।

२३-८-१९५५

——— अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) जारी रखना विधेयक पारित किया गया ।

३१-८-१९५५

१२-९-१९५५

——— समवाय विधेयक पारित किया गया ।

२८-९-१९५५

२३-९-१९५५ भारतीय नौवहन के विकास के लिये एक आयोग की नियुक्ति के सम्बन्ध में संकल्प स्वीकार हुआ ।

२४-९-१९५५

——— औद्योगिक विवाद (बैंकिंग समवाय) विनिश्चय विधेयक पारित किया गया ।

२९-९-१९५५

२६-९-१९५५

——— पुरस्कार प्रतियोगिता विधेयक पारित किया गया ।

३०-९-१९५५

२८-११-१९५५

——— विश्वविद्यालय अनुदान आयोग विधेयक पारित किया गया ।

७-१२-१९५५

३०-११-१९५५

——— कशाघात उत्पादन विधेयक पारित किया गया ।

२५-८-१९५५

१३-१२-१९५५

——— श्रमजीवी पत्रकार (सेवा की शर्तें तथा विविध उपबन्ध) विधेयक पारित किया गया ।

१-१२-१९५५

१४-१२-१९५५ राज्य पुनर्गठन आयोग प्रतिवेदन पर विचार करने सम्बन्धी प्रस्ताव को प्रस्तुत किया गया ।

१८-२-१९५६

——— लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।

२८-२-१९५६

२१-२-१९५६

——— अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्था विधेयक पारित किया गया ।

९-५-१९५६

२४-२-१९५६

——— नौवहन दर नियंत्रण (जारी रखना) विधेयक पारित किया गया ।

१३-३-१९५६

२८-२-१९५६

——— पूंजी निर्गम (नियंत्रण का जारी रखना) संशोधन विधेयक पारित किया गया ।

९-३-१९५६

२९-२-१९५६

——— बिक्री कर विधि मान्यीकरण विधेयक पारित किया गया ।

१२-३-१९५६

३-३-१९५६

——— जीवन बीमा (आयात उपबन्ध) विधेयक पारित किया गया ।

१५-३-१९५६

८-३-१९५६ श्री ग० व० मावलंकर के निधन के परिणामस्वरूप श्री म० अनन्तशयनम् आय्यंगार का लोक सभा के अध्यक्ष के रूप में चुना जाना ।

२०–३–१९५६ सरदार हुकम सिंह का लोक सभा के उपाध्यक्ष के रूप में चुना जाना।

२०–३–१९५६ वैदेशिक मामलों पर प्रधान मंत्री का वक्तव्य।

३१–३–१९५६ मद्य निषेध के लिये एक अन्तिम तिथि निश्चित करने वाले संकल्प को स्वीकार किया गया।

३०–४–१९५६ प्रधान मंत्री का सरकार की औद्योगिक नीति के सम्बन्ध में वक्तव्य।

४–५–१९५६
———
११–५–१९५६ संसदीय कार्यवाहियां (प्रकाशन का संरक्षण) विधेयक पारित किया गया।

८–५–१९५६
———
३०–११–१९५५ हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक पारित किया गया।

११–५–१९५६
———
२१–५–१९५६ कृषि उपज (विकास तथा भण्डार व्यवस्था) निगम विधेयक पारित किया गया।

१५–५–१९५६ प्रधान मंत्री ने द्वितीय पंच वर्षीय योजना का प्रारूप सभा-पटल पर रखा।

१८–५–१९५६
———
२५–५–१९५६ लोक प्रतिनिधित्व (द्वितीय संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

२३–५–१९५६
———
३०–५–१९५६ जीवन बीमा निगम विधेयक पारित किया गया।

२५–५–१९५६ आय सम्बन्धी असमानता को कम करने के लिये उचित उपाय करने सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

२८–५–१९५६ प्रधान मंत्री ने भारत स्थित फ्रांसीसी बस्तियों के अर्पण के करार की एक प्रति सभा पटल पर रखी।

२९–५–१९५६
———
३–५–१९५६ संविधान (छटा संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

१६–७–१९५६
———
६–८–१९५६ सुरक्षा संविदा (विनियमन) विधेयक पारित किया गया।

१७–७–१९५६
———
७–४–१९५५ हिन्दू अवयस्कता और संरक्षकता विधेयक पारित किया गया।

२४–७–१९५६
———
१४–८–१९५६ औद्योगिक विवाद (संशोधन तथा विविध उपबन्ध) विधेयक पारित किया गया।

८–८–१९५६ प्रधान मंत्री का स्वेज नहर समस्या पर वक्तव्य।

१०–८–१९५६
———
२५–८–१९५६ राज्य पुनर्गठन विधेयक पारित किया गया।

११–८–१९५६
———
९–१२–१९५५ नदी बोर्ड विधेयक पारित किया गया।

११-८-१९५६ — १२-१२-१९५६	अन्तर्राज्यीय जल विवाद विधेयक पारित किया गया।
१३-८-१९५६ — ३०-८-१९५६	राष्ट्रीय राजपथ विधेयक पारित किया गया।
१७-८-१९५६ — २८-८-१९५६	बिहार तथा पश्चिमी बंगाल (क्षेत्रों का स्थानान्तरण) विधेयक पारित किया गया।
१७-८-१९५६	चलचित्रों के निर्माण और प्रदर्शन का नियंत्रण तथा विनियमन सम्बन्धी संकल्प स्वीकृत हुआ।
२०-८-१९५६ — ४-९-१९५६	उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) विधेयक पारित किया गया।
२०-८-१९५६ — ४-९-१९५६	जम्मू और कश्मीर (विधियों का विस्तार) विधेयक पारित किया गया।
२५-८-१९५६ — ३-९-१९५६	भारतीय औद्योगिक संस्था (खड़गपुर) विधेयक पारित किया गया।
२८-८-१९५६ — ४-९-१९५६	राष्ट्रीय स्वयंसेवक सेना (लोक सहायक सेना) विधेयक पारित किया गया।
३०-८-१९५६ — १४-८-१९४६	समाचारपत्र (मूल्य तथा पृष्ठ) विधेयक पारित किया।
३०-८-१९५६ — ४-९-१९५६	राज्य वित्त निगम (संशोधन) विधेयक पारित किया गया।
१-९-१९५६ — १३-९-१९५६	खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग विधेयक पारित किया गया।
६-९-१९५६ — ११-९-१९५६	संविधान (सातवां संशोधन) विधेयक पारित किया गया।
७-९-१९५६ — १३-९-१९५६	लोक प्रतिनिधित्व (तीसरा संशोधन) विधेयक पारित किया गया।
१३-९-१९५६	द्वितीय पंचवर्षीय योजना का प्रारूप स्वीकृत हुआ।
१५-११-१९५६ — २२-११-१९५६	संघ क्षेत्र (विधियां) संशोधन विधेयक पारित किया गया।

तिथि	
१६-११-१९५६ / २७-११-१९५६	उद्योग (विकास तथा विनियमन) संशोधन विधेयक पारित किया गया ।
२१-११-१९५६ / २७-११-१९५६	राज्य पुनर्गठन (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
२२-११-१९५६ / २९-११-१९५६	अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) जारी रखना विधेयक पारित किया गया ।
२७-११-१९५६ / १३-१२-१९५६	विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर तथा पुनर्वास) संशोधन विधेयक पारित किया गया ।
३०-११-१९५६ / १८-१२-१९५६	स्त्रियों तथा लड़कियों का अनैतिक पण्य दमन विधेयक पारित किया गया ।
५-१२-१९५६ / १२-१२-१९५६	केन्द्रीय बिक्री कर विधेयक पारित किया गया ।
५-१२-१९५६ / १३-१२-१९५६	लोक प्रतिनिधित्व (चतुर्थ संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
७-१२-१९५६ / ३०-११-१९५६	हिन्दू विवाह (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
७-१२-१९५६ / १४-१२-१९५६	स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक पारित किया गया ।
८-१२-१९५६ / १४-१२-१९५६	सड़क परिवहन निगम (संशोधम) विधेयक पारित किया गया ।
८-१२-१९५६ / १४-१२-१९५६	बाटों तथा मापों के स्तर सम्बन्धी विधेयक पारित किया गया ।
८-१२-१९५६ / १९-१२-१९५६	कर्मचारी भविष्य निधि (संशोधन) विधेयक पारित किया गया ।
१०-१२-१९५६ / २-८-१९५६	भारतीय चिकित्सा परिषद विधेयक पारित किया गया ।
१४-१२-१९५६ / २९-१२-१९५६	हिन्दू दत्तक ग्रहण तथा संधारण विधेयक पारित किया गया ।

1057 LS—18.

१८–१२–१९५६

—————— लोक प्रतिनिधित्व (विविध उपबन्ध) विधेयक पारित किया गया।

२०–१२–१९५६

२०–१२–१९५६

—————— संघ उत्पादन शुल्क (वितरण) संशोधन विधेयक पारित किया गया।

२१–१२–१९५६

२०–१२–१९५६

—————— प्रादेशिक परिषद् विधेयक पारित किया गया।

२२–१२–१९५६

२१–१२–१९५६

—————— बैंकिंग समवाय (संशोधन) विधेयक पारित किया गया।

२२–१२–१९५६

२२–१२–१९५६

—————— गन्दी बस्तियां (सुधार तथा सफाई) विधेयक पारित किया गया।

१८–१२–१९५६

२२–१२–१९५६

—————— दिल्ली किरायेदार (अस्थाई संरक्षण) विधेयक पारित किया गया।

१९–१२–१९५६

तीन

प्रथम संसद् द्वारा पारित अधिनियम

(विषयानुसार दिये गये हैं)

(तारांकित अधिनियम धन अथवा वित्तीय विधेयक माने गये थे)

प्रशासन

१. निर्वाह-व्यय आदेश प्रवर्त्तन (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४७)
२. मंत्रियों के वेतन तथा भत्ते अधिनियम (१९५२ का संख्या ५८)
३. भ्रष्टाचार निवारण (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५९)
४. जांच आयोग अधिनियम (१९५२ का संख्या ६०)
५. निवारक निरोध (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६१)
६. राज्य सशस्त्र पुलिस बल (विधियों का विस्तार) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६३)
७. अनुसूचित क्षेत्र (विधियों का एकीकरण) अधिनियम (१९५३ का संख्या १६)
८. *नियंत्रक महालेखापरीक्षक (सेवा की शर्तें) अधिनियम (१९५३ का संख्या २१)
९. पेप्सू विधान मंडल (शक्तियों का प्रत्यायोजन) अधिनियम (१९५३ का संख्या २२)
१०. आन्ध्र राज्य अधिनियम (१९५३ का संख्या ३०)
११. भाग 'ग' राज्य शासन (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७)
१२. जिला लुशाई की पहाड़ियां (नाम परिवर्तन) अधिनियम (१९५४ का संख्या १८)
१३. विलीन क्षेत्र (विधियां) अधिनियम (१९५४ का संख्या २०)
१४. संघीय प्रयोजनों के लिए भूमि का राज्य द्वारा अर्जन (मान्यीकरण) अधिनियम (१९५४ का संख्या २२)
१५. हिमाचल प्रदेश तथा बिलासपुर (नवीन राज्य) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३२)
१६. चन्द्रनगर (एकीकरण) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३६)
१७. आन्ध्र राज्य विधान मंडल (शक्तियों का प्रत्यायोजन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४५)
१८. निवारण (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ५१)
१९. भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५०)
२०. दिल्ली भवन निर्माण नियंत्रण अधिनियम (१९५५ का संख्या ५३)
२१. नागरिकता अधिनियम (१९५५ का संख्या ३७)
२२. त्रावणकोर-कोचीन राज्य विधान मंडल (शक्तियों का प्रत्यायोजन) अधिनियम (१९५६ का संख्या २९)
२३. *राज्य पुनर्गठन अधिनियम (१९५६ का संख्या ३७)
२४. बिहार तथा पश्चिमी बंगाल (क्षेत्रों का स्थानान्तरण) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४०)
२५. सरकारी भूगृहादि (निष्कासन) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ५२)
२६. *जम्मू तथा काश्मीर (विधियों का विस्तार) अधिनियम (१९५३ का संख्या ६७)
२७. अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिमजातियों आदेश (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ६३)
२८. राज्य पुनर्गठन (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ६७)
२९. संघ क्षेत्र (विधियां) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ६८)

३०. केरल राज्य विधान मंडल (शक्तियों का प्रत्यायोजन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७५)
३१. मनीपुर (पर्वतीय क्षेत्रों में ग्राम्य प्राधिकारी) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७९)
३२. दिल्ली (निर्माण कार्यों का नियंत्रण) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९८)
३३. *क्षेत्रीय परिषद् अधिनियम (१९५६ का संख्या १०३)

कृषि

१. पशु आयात (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४०)
२. *अन्तर्राज्यीय जल विवाद अधिनियम (१९५६ का संख्या ३३)
३. *कृषि उत्पाद (विकास तथा गोदाम) निगम अधिनियम (१९५६ का संख्या २८)
४. बहु-एकक सहकारी समितियां (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ३४)
५. *नदी बोर्ड अधिनियम (१९५६ का संख्या ४९)
६. दिल्ली किरायेदार (अस्थायी संरक्षण) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९७)

बैंकिंग मुद्रा तथा बीमा

१. हैदराबाद टंक तथा पत्र मुद्रा (विविध उपबन्ध) अधिनियम (१९५३ का संख्या १०)
२. बैंकिंग समवाय (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या १५)
३. भारत का रक्षित बैंक (संशोधन तथा विविध उपबन्ध) अधिनियम (१९५३ का संख्या ५४)
४. बीमा (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या १८)
५. भारत का राज्य बैंक अधिनियम (१९५५ का संख्या २३)
६. भारत का रक्षित बैंक (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या २४)
७. भारतीय मुद्रा (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३१)
८. भारत का राज्य बैंक (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३३)
९. बीमा (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५४)
१०. जीवन बीमा (आपातकालीन उपबन्ध) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९)
११. जीवन बीमा निगम अधिनियम (१९५६ का संख्या ३१)
१२. *भारत का रक्षित बैंक (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ३८)
१३. *हैदराबाद का राज्य बैंक अधिनियम (१९५६ का संख्या ८०)
१४. बैंकिंग समवाय (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९५)

वाणिज्य तथा उद्योग

१. *भारतीय चाय नियंत्रण (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४९)
२. रबड़ (संरक्षण तथा विक्रय) संशोधन अधिनियम (१९५२ का संख्या ५२)
३. भारतीय समवाय (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५१)
४. केन्द्रीय चाय बोर्ड (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५४)
५. *केन्द्रीय रेशम बोर्ड (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५६)
६. अत्यावश्यक संभरण (अस्थाई शक्तियां) संशोधन अधिनियम (१९५२ का संख्या ६५)
७. *भारतीय तिलहन समिति (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६८)
८. *भारतीय नारियल समिति (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६९)
९. भारतीय एकस्व तथा रूपांकन (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७०)
१०. भारतीय शक्तिजनक मद्यसार (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७३)

११. *वायदे के सौदे (विनियमन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७४)
१२. औद्योगिक वित्त निगम (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७८)
१३. लोहा तथा इस्पात समवाय विलनीयकरण अधिनियम (१९५२ का संख्या ७९)
१४. औद्योगिक (विकास तथा विनियमन) संशोधन अधिनियम (१९५३ का संख्या २६)
१५. केन्द्रीय रेशम बोर्ड (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३१)
१६. आंकड़ा संग्रह अधिनियम (१९५३ का संख्या ३२)
१७. *नारियल जटा उद्योग अधिनियम (१९५३ का संख्या ४५)
१८. वायदे के सौदे (विनियमन) (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४६)
१९. भारतीय एकस्व तथा रूपांकन (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५५)
२०. *काफी विक्रय विस्तार (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ५०)
२१. *रबड़ (उत्पादन तथा विक्रय) संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या ५०)
२२. अत्यावश्यक सामग्री अधिनियम (१९५५ का संख्या १०)
२३. समुद्र सीमा शुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या २१)
२४. औद्योगिक तथा राज्य वित्तीय निगम अधिनियम (१९५५ का संख्या २८)
२५. अधिकृत लेखापाल (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४०)
२६. भारतीय समवाय अधिनियम (१९५६ का संख्या १)
२७. पूंजी निर्गम (नियंत्रण का जारी रखना) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ९)
२८. भारतीय पंजीयन (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या १७)
२९. प्रतिभूति ठेके (विनियमन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४२)
३०. भारतीय नारियल समिति (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४७)
३१. *राज्य वित्तीय निगम (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५६)
३२. *खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग अधिनियम (१९५५ का संख्या ६१)
३३. *उद्योग (विकास तथा विनियमन) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ७१)
३४. *बाट तथा माप मान अधिनियम (१९५६ का संख्या ८९)
३५. फरीदाबाद विकास निगम अधिनियम (१९५६ का संख्या ९०)
३६. विद्युत (संभरण संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या १०१)

सांविधानिक संशोधन

१. संविधान (द्वितीय संशोधन) अधिनियम १९५२
२. संविधान (तृतीय संशोधन) अधिनियम १९५४
३. संविधान (चतुर्थ संशोधन) अधिनियम १९५५
४. संविधान (पंचम संशोधन) अधिनियम १९५५
५. संविधान (पष्ठ संशोधन) अधिनियम १९५६
६. संविधान (सप्तम संशोधन) अधिनियम १९५६

प्रतिरक्षा

१. राष्ट्रीय छात्र दल (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५७)
२. रक्षित तथा सहायक वायु सेना अधिनियम (१९५२ का संख्या ६२)
३. छावनी (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २)
४. शिलांग (राइफल रेंज तथा उमलांग) छावनी विधियों का एकीकरण अधिनियम (१९५४ का सं

५. सेनापति (पद परिवर्तन) अधिनियम (१९५५ का संख्या १९)
६. *लोक सहायक सेना अधिनियम (१९५६ का संख्या ५३)
७. प्रादेशिक सेना (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९२)

शिक्षा

१. चलचित्र (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या १९)
२. प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान व अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या ३)
३. प्रेस (आपत्तिजनक विषय) संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या १३)
४. पुस्तक प्रदान (सार्वजनिक पुस्तकालय) अधिनियम (१९५४ का संख्या २७)
५. मुद्रणालय तथा पुस्तक पंजीयन (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५५)
६. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम (१९५६ का संख्या ३)
७. अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्था अधिनियम (१९५६ का संख्या २५)
८. समाचारपत्र (मूल्य तथा पृष्ठ) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४५)
९. *भारतीय प्रौद्योगिकी संस्था (खड़गपूर) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५१)
१०. प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान व अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ७०)
११. पुस्तक प्रदान (सार्वजनिक पुस्तकालय) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९९)

राजकोषीय तथा वित्तीय

[**टिप्पण**—जिन अधिनियमों पर† चिन्ह लगा है उन सभी को धन तथा वित्तीय विधेयकों से अलग समझा गया था]

१. भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४२)
२. विनियोग (रेलवे) संख्या २ अधिनियम (१९५२ का संख्या ४३)
३. विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४४)
४. भारतीय प्रशुल्क (तृतीय संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४४)
५. †अत्यावश्यक वस्तुएं (क्रय अथवा विक्रय पर कर की घोषणा तथा विनियमन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५२)
६. भारतीय प्रशुल्क (चतुर्थ संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६६)
७. चीनी (अस्थाई अतिरिक्त उत्पादन शुल्क) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६७)
८. विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५२ का संख्या ८०)
९. विनियोग (संख्या १) अधिनियम (१९५३ का संख्या १)
१०. भारतीय प्रशुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या २)
११. संघ उत्पादन शुल्क (वितरण) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३)
१२. विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४)
१३. विनियोग (रेलवे) अधिनियम (१९५३ का संख्या ५)
१४. विनियोग (रेलवे) संख्या २ अधिनियम (१९५३ का संख्या ६)
१५. पेप्सू विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५३ का संख्या ७)
१६. पेप्सू विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५३ का संख्या ८)
१७. विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५३ का संख्या ९)

१८. खादी तथा अन्य हथकरघा उद्योग विकास (कपड़े पर अतिरिक्त उत्पादन शुल्क) अधिनियम (१९५३ का संख्या १२)
१९. विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५३ का संख्या १३)
२०. वित्त अधिनियम (१९५३ का संख्या १४)
२१. केन्द्रीय उत्पादन तथा नमक (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या १५)
२२. पेप्सू विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५३ का संख्या १७)
२३. भारतीय आयकर (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या २५)
२४. चाय अधिनियम (१९५३ का संख्या २९)
२५. विनियोग (संख्या ४) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३३)
२६. सम्पदा शुल्क अधिनियम (१९५३ का संख्या ३४)
२७. समुद्र सीमा शुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३५)
२८. धोती (अतिरिक्त उत्पादन शुल्क) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३९)
२९. भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४७)
३०. भारतीय प्रशुल्क (तृतीय संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४८)
३१. नमक उपकर अधिनियम (१९५३ का संख्या ४९)
३२. विनियोग (संख्या ५) अधिनियम (१९५३ का संख्या ५०)
३३. पेप्सू विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५३ का संख्या ५१)
३४. विनियोग अधिनियम (१९५४ का संख्या ५)
३५. विनियोग रेलवे अधिनियम (१९५४ का संख्या ६)
३६. विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५४ का संख्या ८)
३७. विनियोग (रेलवे) संख्या २ अधिनियम (१९५४ का संख्या ११)
३८. विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५४ का संख्या १६)
३९. वित्त अधिनियम (१९५४ का संख्या १७)
४०. स्वेच्छापूर्वक वेतन परित्याग करारोपण से विमुक्ति (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २४)
४१. भारतीय आय कर (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३३)
४२. केन्द्रीय उत्पादन तथा नमक (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३४)
४३. भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३५)
४४. मध्य भारत आय कर (मान्यीकरण) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३८)
४५. भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ३९)
४६. विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४०)
४७. करारोपण विधियां (जम्मू तथा काश्मीर तक विस्तार) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४१)
४८. भारतीय प्रशुल्क (तृतीय संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४६)
४९. विनियोग (संख्या ४) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४७)
५०. चाय (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४९)
५१. चाय (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ५०)
५२. आन्ध्र विनियोग अधिनियम (१९५४ का संख्या ५६)
५३. आयात तथा निर्यात (नियंत्रण) संशोधन अधिनियम (१९५५ का संख्या ०)
५४. आन्ध्र विनियोग अधिनियम (१९५५ का संख्या ३)
५५. आन्ध्र विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४)
५६. विनियोग (रेलवे) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५)
५७. विनियोग (रेलवे) संख्या २ अधिनियम (१९५५ का संख्या ६)
५८. विनियोग अधिनियम (१९५५ का संख्या ७)
५९. विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५५ का संख्या ८)

६०. †वित्त आयोग (विविध उपबन्ध) (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या १३)
६१. विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५५ का संख्या १४)
६२. वित्त अधिनियम (१९५५ का संख्या १५)
६३. औषधीय तथा प्रसाधन सामग्री (उत्पादन शुल्क) अधिनियम (१९५५ का संख्या १६)
६४. हैदराबाद निर्यात शुल्क (मान्यीकरण) अधिनियम (१९५५ का संख्या २०)
६५. भारतीय प्रशुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या २७)
६६. †भूमि सीमा शुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३६५)
६७. विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३८)
६८. भारतीय स्टाम्प (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४३)
६९. विनियोग (संख्या ४) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४६)
७०. विनियोग (संख्या ५) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४७)
७१. भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४८)
७२. भारतीय प्रशुल्क (तृतीय संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४९)
७३. विनियोग अधिनियम (१९५६ का संख्या ५)
७४. स्वेच्छापूर्वक वेतन परित्याग (करारोपण से विमुक्ति) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ६)
७५. बिक्री कर विधियां (मान्यीकरण) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७)
७६. विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५६ का संख्या ११)
७७. विनियोग (रेलवे) अधिनियम (१९५६ का संख्या १२)
७८. विनियोग (रेलवे) संख्या २ अधिनियम (१९५६ का संख्या १३)
७९. विनियोग (रेलवे) संख्या ३ अधिनियम (१९५६ का संख्या १४)
८०. विनियोग (रेलवे) संख्या ४ अधिनियम (१९५६ का संख्या १५)
८१. विनियोग (रेलवे) संख्या ५ अधिनियम (१९५६ का संख्या १६)
८२. वित्त अधिनियम (१९५६ का संख्या १८)
८३. विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५६ का संख्या १९)
८४. त्रावणकोर-कोचीन विनियोग (लेखानुदान) अधिनियम (१९५६ का संख्या २०)
८५. त्रावणकोर-कोचीन विनियोग अधिनियम (१९५६ का संख्या २३)
८६. भारतीय आयकर (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या २६)
८७. †भारतीय लाख उपकर (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ३५)
८८. विनियोग (संख्या ३) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४३)
८९. विनियोग (संख्या ४) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४४)
९०. त्रावणकोर-कोचीन विनियोग (संख्या २) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४६)
९१. †भारतीय कपास उपकर (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५०)
९२. †लोक ऋण (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५७)
९३. केन्द्रीय उत्पादन शुल्क तथा नमक (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५८)
९४. भारतीय प्रशुल्क (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ६४)
९५. रेलवे यात्रियों पर सीमा-शुल्क (१९५६ का संख्या ६९)
९६. केन्द्रीय नमक कर अधिनियम (१९५६ का संख्या ७४)
९७. वित्त (संख्या २) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७६)
९८. वित्त (संख्या ३) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७७)
९९. केन्द्रीय उत्पादन शुल्क तथा नमक (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ८१)
१००. संघ उत्पादन शुल्क (वितरण) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ८२)
१०१. विनियोग (रेलवे) संख्या ६ अधिनियम (१९५६ का संख्या ८३)
१०२. विनियोग (रेलवे) संख्या ७ अधिनियम (१९५६ का संख्या ८४)
१०३. विनियोग (संख्या ५) अधिनियम (१९५६ का संख्या ८५)

स्वास्थ्य

१. औषधि तथा जादुई चिकित्सा (आपत्तिजनक विज्ञापन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २१)
२. खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम (१९५४ का संख्या ३७)
३. औषधि (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ११)
४. दन्त चिकित्सक (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या १२)
५. *दिल्ली जल तथा नाली व्यवस्था संयुक्त बोर्ड (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३४)
६. मद्यसारिक उत्पाद (अन्तर्राज्यिक व्यापार तथा वाणिज्य) नियंत्रण अधिनियम (१९५५ का संख्या ३९)
७. सेंट जान एम्बुलेंस संस्था (भारत) निधि हस्तांतरण अधिनियम (१९५६ का संख्या २१)
८. ारतीय रेड क्रास सोसायटी (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या २२)
९. भारतीय चिकित्सा परिषद् अधिनियम (१९५६ का संख्या १०२)

न्यायपालिका

१. मैसूर उच्च न्यायालय (क्षेत्राधिकार का कुर्ग तक विस्तार) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७२)
२. त्रावणकोर-कोचीन उच्च न्यायालय (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३८)
३. कलकत्ता उच्च न्यायालय (क्षेत्राधिकार का विस्तार) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४१)
४. *मनीपुर न्यायालय शुल्क (संशोधन) तथा (मान्यीकरण) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४४)
५. *उच्च न्यायालय न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम (१९५४ का संख्या २९)
६. *मनीपुर (न्यायालय) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५६)
७. *उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५५)

श्रम

१. कर्मचारी भविष्य निधि (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३७)
२. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ४३)
३. कारखाना (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २५)
४. न्यूनतम मजूरी (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २६)
५. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४८)
६. श्रमजीवी पत्रकार (औद्योगिक विवाद) अधिनियम (१९५५ का संख्या १)
७. औद्योगिक विवाद (अपीलीय न्यायाधिकरण) संशोधन अधिनियम (१९५५ का संख्या २९)
८. औद्योगिक विवाद (बैंकिंग समवाय) निर्णय अधिनियम (१९५५ का संख्या ४१)
९. श्रमजीवी पत्रकार (सेवा की शर्तें तथा विविध उपबन्ध) अधिनियम (१९५५ का संख्या ४५)
१०. औद्योगिक विवाद (संशोधन तथा विविध उपबन्ध) अधिनियम (१९५६ का संख्या ३६)
११. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४१)
१२. कर्मचारी भविष्य निधि (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९४)

विधि सम्बन्धी

१. सौराष्ट्र (स्थानीय समुद्र-सीमा शुल्क समापन तथा पत्तन विकास करारोपण) निरसन अधिनियम (१९५२ का संख्या ३९)
२. दण्ड विधि संशोधन अधिनियम (१९५२ का संख्या ४६)
३. निरसन तथा संशोधन अधिनियम (१९५२ का संख्या ४८)

1057 LS—19.

४. लक्ष्य प्रमाणक अधिनियम (१९५३ का संख्या ५३)
५. दण्ड प्रक्रिया संहिता (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ६४)
६. व्यवहार प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७१)
७. निरसन तथा संशोधन अधिनियम (१९५३ का संख्या ४२)
८. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या २६)
९. बन्दी (न्यायालयों में उपस्थिति) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३२)
१०. परक्राम्य संलेख (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ३७)
११. कशाघात उत्सादन अधिनियम (१९५५ का संख्या ४४)
१२. रेलवे भाण्डार (अवैध कब्जा) अधिनियम (१९५५ का संख्या ५१)
१३. विधि जीवी परिषद् (राज्य विधियों का मान्यीकरण) अधिनियम (१९५६ का संख्या ४)
१४. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ३९)
१५. व्यवहार प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ६६)

संसदीय

१. परिसीमन आयोग अधिनियम (१९५२ का संख्या ८१)
२. *संसद् पदाधिकारियों के वेतन तथा भत्ते अधिनियम (१९५३ का संख्या २०)
३. विन्ध्य प्रदेश विधान सभा (अनर्हता निवारण) अधिनियम (१९५३ का संख्या २८)
४. अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग 'ग' राज्य विधानमण्डल) अधिनियम (१९५४ का संख्या १)
५. अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग 'ग' राज्य विधानमण्डल) संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या १९)
६. *संसद् के सदस्यों का वेतन तथा भत्ते अधिनियम (१९५४ का संख्या ३०)
७. अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग 'ग' राज्य विधान मण्डल) द्वितीय संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या ५३)
८. परिसीमन आयोग (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ९)
९. संसद् के सदस्यों के वेतन तथा भत्ते (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या ९)
१०. अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग 'ग' राज्य) संशोधन अधिनियम (१९५५ का संख्या ५२)
११. लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या २)
१२. संसदीय कार्यवाही (प्रकाशन का संरक्षण) अधिनियम (१९५६ का संख्या २४)
१३. लोक प्रतिनिधित्व (द्वितीय संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या २७)
१४. लोक प्रतिनिधित्व (तृतीय संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ६०)
१५. लोक प्रतिनिधित्व (चौथा संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७२)
१६. लोक प्रतिनिधित्व (विविध उपबन्ध) अधिनियम (१९५६ का संख्या ८८)

विस्थापित व्यक्ति तथा पुनर्वास

१. विस्थापित व्यक्ति (दावे) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४०)
२. पश्चिमी बंगाल (निष्क्रान्त सम्पत्ति त्रिपुरा संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ७५)
३. पाकिस्तान से सामूहिक आगमन (नियंत्रण) निरसन अधिनियम (१९५२ का संख्या ७६)
४. निष्क्रान्त सम्पत्ति का प्रशासन (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ११)
५. *वित्त प्रशासन पुनर्वास (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ३६)
६. *विस्थापित व्यक्ति (दावे) अनुपूरक अधिनियम (१९५४ का संख्या १२)
७. *निष्क्रान्त निक्षेपों का हस्तान्तरण अधिनियम (१९५० का संख्या ५०)
८. निष्क्रान्त सम्पत्ति का प्रशासन (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४२)
९. *विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर तथा पुनर्वास) अधिनियम (१९५४ का संख्या ४४)

१०. विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर तथा पुनर्वास) संशोधन अधिनियम (१९५६ का संख्या ८६)
११. निष्क्रान्त सम्पत्ति का प्रशासन (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९१)

सामाजिक

१. अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) संशोधन अधिनियम (१९५२ का संख्या ७७)
२. अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) संशोधन अधिनियम (१९५४ का संख्या ४)
३. मुस्लिम वक्फ अधिनियम (१९५४ का संख्या २९)
४. विशेष विवाह अधिनियम (१९५४ का संख्या ४३)
५. अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम (१९५५ का संख्या २२)
६. हिन्दू विवाह अधिनियम (१९५५ का संख्या २५)
७. अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) जारी अधिनियम (१९५५ का संख्या ३०)
८. दरगाह ख्वाजा साहिब अधिनियम (१९५५ का संख्या ३६)
९. पुरस्कार प्रतिद्वन्द्विता अधिनियम (१९५५ का संख्या ४२)
१०. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम (१९५६ का संख्या ३०)
११. हिन्दू अवयस्कता तथा संरक्षकता अधिनियम (१९५६ का संख्या ३२)
१२. अपहृत व्यक्ति (पुनः प्राप्ति तथा प्रत्यर्पण) जारी अधिनियम (१९५६ का संख्या ६५)
१३. हिन्दू विवाह (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ७३)
१४. हिन्दू दत्तक-ग्रहण तथा पालन अधिनियम (१९५६ का संख्या ७८)
१५. तरुण व्यक्ति (हानिकर प्रकाशन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९३)
१६. गन्दी बस्तियों (सुधार तथा सफाई) अधिनियम (१९५६ का संख्या ९६)
१७. स्त्रियों तथा लड़कियों का अनैतिक पण्य दमन अधिनियम (१९५६ का संख्या १०४)
१८. महिला तथा बाल संस्था (अनुज्ञप्ति) अधिनियम (१९५६ का संख्या १०५)

परिवहन तथा संचार

१. कलकत्ता पत्तन (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ४१)
२. भारतीय पत्तन (संशोधन) अधिनियम (१९५२ का संख्या ५५)
३. भारतीय प्रकाश स्तम्भ (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या १०)
४. भारतीय व्यापार नौवहन (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या २३)
५. दिल्ली सड़क परिवहन प्राधिकार (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या २४)
६. *विमान निगम अधिनियम (१९५३ का संख्या २७)
७. टेलीग्राफ तार (अवैधिक कब्जा) (संशोधन) अधिनियम (१९५३ का संख्या ५३)
८. नौवहन नियंत्रण (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या ९)
९. विमान निगम (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या १०)
१०. *बारसी लाइट रेलवे समवाय (हस्तान्तरित उत्तरदायित्व) अधिनियम (१९५४ का संख्या १४)
११. भारतीय रेलवे (संशोधन) अधिनियम (१९५४ का संख्या २२)
१२. भारतीय रेलवे (संशोधन) अधिनियम (१९५५ का संख्या १७)
१३. नौवहन नियंत्रण (जारी रखना) अधिनियम (१९५६ का संख्या १०)
१४. *राष्ट्रीय राज-पथ अधिनियम (१९५६ का संख्या ४८)
१५. *भारतीय डाकघर (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५४)
१६. भारतीय रेलवे (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ५९)
१७. सड़क परिवहन निगम (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या ८७)
१८. मोटरगाड़ी (संशोधन) अधिनियम (१९५६ का संख्या १००)

विधेयकों के सम्बन्ध में

(क) सरकारी

	पहला सत्र	दूसरा सत्र	तीसरा सत्र
बैठकों की संख्या जिन में विधेयकों पर चर्चा हुई	२६	२७	३५
प्रस्थापित विधेयकों की संख्या . .	३२(१)	३२	२७(१)
राय जानने के लिये परिचालित विधेयकों की संख्या . . .	२	कोई नहीं	कोई नहीं
संयुक्त समिति को सौंपे गये विधेयकों की संख्या . . .	८	५	२
विधेयकों की संख्या जिन पर विचार किया गया . . .	३३	२१	३०
वापिस लिये गये विधेयकों की संख्या .	कोई नहीं	१	३
पारित विधेयकों की संख्या . .	२७	१७*	२६
सत्र के अन्त में लम्बित विधेयकों की संख्या	७	२२	२६
सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या	३६३	२३२	६६५
स्तावित संशोधनों की संख्या . .	१५४	८७ (१६ मतदान के लिये नहीं रखे गये)	१७७ (५ मतदान के लिये नहीं रखे गये)
वापिस लिये गये संशोधनों की संख्या .	१२	६	२८
स्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	१५	२२	४४
अस्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	१२०	४२	१००
किसी एक सदस्य द्वारा अधिकतम सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या	६४	३६	५८
सदस्य का नाम . . .	श्री के० के० वसु	श्री ए० सी० गुह	श्री जयपाल सिंह

टिप्पण :—कोष्ठकों में दिखाये गये आंकड़े राज्य-सभा द्वारा पारित तथा लोक सभा पटल पर रखे गये विधेयकों की संख्या

*इस में एक विधेयक शामिल है जो राज्य-सभा में पुरः स्थापित हुआ था ।

†इस में सात संशोधन शामिल हैं जिन पर बल नहीं दिया गया ।

विश्लेषणात्मक चार्ट

विधेयक

चौथा सत्र	पांचवा सत्र	छठा सत्र	सातवां सत्र
३१	२७	३९	२९
७(१)	१३(३)	१८(१५)	१८(४)
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
१	कोई नहीं	२	३
६	२६	३६	३५
१	कोई नहीं	१	१
५	२४	२९	३३
२७	१९	२२	२४
१,२६२	५३२	३८९	३९३
५१५	२४८	१३४ (६ मतदान के लिये रखे गये)	३२७
३८	२४	१५	१०७
८५	८९	४६	३६
२३५	११७	५८ (इसके साथ-साथ ८ नियम विरुद्ध कर दिये गये)	१५२
३९	३०	२७	५५
श्री तुलसीदास किलाचन्द	श्री टी० वी० विठ्ठल राव	श्री के० के० बसु	पं० ठाकुर दास भार्गव

[illegible]

(क) सरकारी

	आठवां सत्र	नवां सत्र	दसवां सत्र
बैठकों की संख्या जिन में विधेयकों पर चर्चा हुई	२४	३१	४७
प्रस्थापित विधेयकों की संख्या . .	२२(२)	२२(६)	२१(२)
राय जानने के लिये परिचालित विधेयकों की संख्या . . .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
संयुक्त समिति को सौंपे गये विधेयकों की संख्या . . .	२	४	६
विधेयकों की संख्या जिन पर विचार किया गया . . .	१५	२६	२५
वापिस लिये गये विधेयकों की संख्या .	१	१	१
पारित विधेयकों की संख्या . .	१३	२६	१८
सत्र के अन्त में लम्बित विधेयकों की संख्या	२४	२६	३१
सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या	८०२	१,२४७	१,४३७
प्रस्तावित संशोधनों की संख्या . .	४०५ (६८ मतदान के लिये नही रखे गये)	७२२	८२३
वापिस लिये गये संशोधनों की संख्या .	३	३४	१०
स्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	६०	१०७	३११
अस्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	२३७ (१५ नियम विरुद्ध कर दिये गये)	५८० (१ नियम विरुद्ध कर दिया गया)	३२३
किसी एक सदस्य द्वारा अधिकतम सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या.	१८६	१५४	२४१
सदस्य का नाम . . .	श्री आर० डी० मिश्र	पं० ठाकुर दास भार्गव	श्री सी० डी० देशमुख

ग्यारहवां सत्र	बारहवां सत्र	तेरहवां सत्र	चौदहवां सत्र
१८	४६	४४	२५
१५(२)	२४(४)	१६(२)	२३
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
कोई नहीं	४	६	—
२४	३४	३८	४६
कोई नहीं	२	कोई नहीं	कोई नहीं
१८	२६	३२	३६
३३	३३	१६	६
३६५	१,१११	१,४४६	५०५
२५३ (१ मतदान के लिये नहीं रखा गया)	६६८	६४६	२३१ (२७ पर बल नहीं दिया गया)
१२	१२६	२६	१८
२३	६८	२३६	११६
२१५ (२ नियम विरुद्ध कर दिये गये)	४७६ (१४ नियम विरुद्ध कर दिये गये)	२०१ (६ नियम विरुद्ध कर दिये गये)	१२४ (५ नियम विरुद्ध कर दिये गये)
६३	१२५	७१	४५
पंडित ठाकुर दास भार्गव	श्री साधन चन्द्र गुप्त	श्री गो० व० पन्त	पंडित ठाकुर दास भार्गव

टिप्पण—कोष्ठकों में दिखाये गये आंकड़े राज्य सभा द्वारा पारित तथा लोक सभा पटल पर रखे गये विधेयकों की संख्या के हैं।

	पहला सत्र	दूसरा सत्र	तीसरा सत्र
बैठकों की संख्या जिन में गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों पर चर्चा हुई .	१	१	२
पुरःस्थापित विधेयकों की संख्या .	२२	कोई नहीं	कोई नहीं
विधेयकों की संख्या जिन पर विचार किया गया	५	१	३
वापिस लिये गये विधेयकों की संख्या .	१	कोई नहीं	२
अस्वीकृत विधेयकों की संख्या . .	कोई नहीं	कोई नहीं	१
संयुक्त समिति को सौंपे गये विधेयकों की संख्या . . .	कोई नहीं	कोई नहीं	१
राय जानने के लिये परिचालित विधेयकों की संख्या . . .	१	कोई नहीं	कोई नहीं
पारित विधेयकों की संख्या . .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
सत्र के अन्त में लम्बित विधेयकों की संख्या	२०	२०	१७
सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या . . .	३८	१	२१
प्रस्तावित संशोधनों की संख्या . .	२	१	१
वापिस लिये गये संशोधनों की संख्या .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
स्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
अस्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	१	कोई नहीं	१
एक सदस्य द्वारा सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की अधिकतम संख्या .	१४	कोई नहीं	६
सदस्य का नाम . . .	श्री शंकर राव तेलकीकर		श्री रघुनाथ सिंह

टिप्पण :—कोष्ठकों में दिये गये आंकड़े उन विधेयकों की संख्या है जो राज्य-सभा में पारित किये गये तथा लोक सभा-पटल

चौथा सत्र	पांचवां सत्र	छठा सत्र	सातवां सत्र
३	२	५	२
१४	२२	१६	१३
३	२	१०	३
१	कोई नहीं	१	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
१	कोई नहीं	१	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	१	कोई नहीं
३०	५१	६४	७७
४७	१६	३४	३
३	१	१	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
१	कोई नहीं	१	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	१	कोई नहीं
७	५	७	२
श्री एच० सी० हेडा	श्रीमती जयश्री रायजी	श्री डी० सी० शर्मा	पंडित ठाकुर दास भार्गव

पर रखे गये ।

	आठवां सत्र	नवां सत्र	दसवां सत्र
बैठकों की संख्या जिनमें गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों पर चर्चा हुई .	३	५	४
पुरःस्थापित विधेयकों की संख्या .	८	३	७
विधेयकों की संख्या जिन पर विचार किया गया	७	८	१०
वापिस लिये गये विधेयकों की संख्या .	कोई नहीं	२	५
अस्वीकृत विधेयकों की संख्या . .	१	३	२
संयुक्त समिति को सौंपे गये विधेयकों की संख्या . . .	कोई नहीं	कोई नहीं	१
राय जानने के लिये परिचालित विधेयकों की संख्या . . .	कोई नहीं	१	कोई नहीं
पारित विधेयकों की संख्या . .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
सत्र के अन्त में लम्बित विधेयकों की संख्या	८१*	७६	७८**
सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की संख्या	१	२४	२६
प्रस्तावित संशोधनों की संख्या . .	कोई नहीं	३	कोई नहीं
वापिस लिये गये संशोधनों की संख्या .	कोई नहीं	१	कोई नहीं
स्वीकृत संशोधनों की संख्या . .	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
अस्वीकृत संशोधनों की संख्या	कोई नही	१	कोई नहीं
एक सदस्य द्वारा सभा-पटल पर रखे गये संशोधनों की अधिकतम संख्या .	१	६	१६
सदस्य का नाम . . .	श्री नागेश्वर प्रसाद सिन्हा	श्री निकुंज बिहारी चौधरी	श्री बी० पोकर

टिप्पण:—कोष्ठकों में दिये गये आंकड़े उन विधेयकों की संख्या है जो राज्य-सभा में पारित किये गये तथा लोक सभा-पटल पर रखे गये ।

*तीन विधेयक नियम १५०(ख) के अधीन लम्बित विधेयकों के रजिस्टर से निकाले गये ।

**प्रभारी सदस्य के निधन के कारण एक विधेयक व्यपगत हुआ ।

***लम्बित विधेयकों के रजिस्टर से एक विधेयक हटा दिया गया ।

†दो विधेयकों में से, लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, एक विधेयक अर्थात् भारतीय पंजीयन (संशोधन) विधेयक पर राज्य सभा द्वारा किये गये संशोधनों पर लोक सभा सहमत हो गई ।

ग्यारहवां सत्र	वारहवां सत्र	तेरहवां सत्र	चौदहवां सत्र
२	७	३	३
४	११(१)	८(१)	७(१)
४	११	८	६
१	३	२	१
२	४	२	१
कोई नहीं	१	६	कोई नहीं
कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं	कोई नहीं
१	२†	१	३
७७	७६***	८३	७४****
१३	४१	१२	३
कोई नहीं	१३	५	१
कोई नहीं	३	२	कोई नहीं
कोई नहीं	२	४	कोई नहीं
कोई नहीं	८	१	१
१२	८	३	
श्री नन्द लाल शर्मा	श्री नन्द लाल शर्मा	श्री आर० डी० मिश्र	एक संशोधन से अधिक किसी भी सदस्य ने प्रस्तुत नहीं किया ।

****(एक) अध्यक्ष महोदय के आदेश से तीन विधेयक रजिस्टर से निकाल दिये गये क्योंकि उस से जिस अधिनियम में संशोधन होता था वह निरसित हो गया था ।

(दो) नौ विधेयक रजिस्टर में से निकाल दिये गये क्योंकि सभा ने उसी प्रकार के और अन्य विधेयक पारित कर दिये थे ।

प्रथम संसद में गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों के सम्बन्ध में विवरण
(१४वें सत्र के अन्त तक)

नाम	प्रभारी सदस्य का नाम	तिथि	टिप्पणी
१	२	३	४
पहला सत्र			
१. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ४९७ में संशोधन)	श्री फूलसिंहजी बी० डाभी	३०-७-५२	विधेयक ३०-७-५२ को वापिस ले लिया गया ।
२. अयोग्य व्यक्ति वन्ध्यीकरण विधेयक	श्री एस० वी० रामस्वामी	३०-७-५२	विचार करने का प्रस्ताव ३०-७-५२ को अस्वीकृत किया गया ।
३. मुस्लिम वक्फ विधेयक .	श्री मुहम्मद अहमद काजमी	३०-७-५२	परिचालन करने का प्रस्ताव ३०-७-५२ को स्वीकृत हुआ ।
४. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ३०२ में संशोधन)	श्री मुहम्मद अहमद काजमी	३०-७-५२	१६-७-५२ को पुरःस्थापित किया गया । विधेयक को एक प्रवर समिति को सौंपने का प्रस्ताव ३०-७-५२ को वापिस ले लिया गया ।
५. भारतीय दंड संहिता तथा दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक	पंडित ठाकुर दास भार्गव	३०-७-५२	३०-७-५२ को सामान्य चर्चा प्रारम्भ हुई ।

१	२	३	४
दूसरा सत्र			
१. भारतीय दंड संहिता तथा दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक	पंडित ठाकुर दास भार्गव	११-१२-५२	प्रथम सत्र से आगे चर्चा जारी रही।
तीसरा सत्र			
१. भारतीय दंड संहिता तथा दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक	पंडित ठाकुर दास भार्गव	१३-३-५३	द्वितीय सत्र से आगे चर्चा हुई।
२. मुस्लिम वक्फ विधेयक .	सैयद मुहम्मद अहमद काजमी	१३-३-५३	प्रवर समिति को सौंपने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया।
चौथा सत्र			
१. अनाथालय विधेयक .	श्री एम० एल० द्विवेदी	१४-८-५३	सामान्य चर्चा
२. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, १९५२	श्री एस० वी० रामस्वामी	२८-८-५३	परिचालन के लिये प्रस्ताव
३. दहेज रोक विधेयक, १९५२ .	श्रीमती उमा नेहरू	२८-८-५३ ११-९-५३	सामान्य चर्चा
पांचवां सत्र			
१. दहेज रोक विधेयक, १९५२ .	श्रीमती उमा नेहरू	२७-१२-५३	सामान्य चर्चा (जारी रही); विधेयक वापिस ले लिया गया।
२. भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक, १९५२	सेठ गोविन्द दास	२७-११-५३ ११-१२-५३	सामान्य चर्चा—असमाप्त
छठा सत्र			
१. भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक, १९५२	सेठ गोविन्द दास	२६-२-५४	सामान्य चर्चा। अगले सत्र तक के लिये वाद विवाद को स्थगित कर दिया गया।

१	२	३	४
२. मुस्लिम वक्फ विधेयक	सैयद मुहम्मद अहमद काजमी	१२-३-५४	सामान्य चर्चा ; खण्डशः विचार तृतीय पाठन हुआ। विधेयक पारित किया गया।
३. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ३०२ का संशोधन)	सैयद मुहम्मद अहमद काजमी	१२-३-५४ २६-३-५४	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया।
४. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा २६६ व २६७ आदि का निरसन और धारा २७२, ३७५ आदि का संशोधन)	श्री एस० वी० रामस्वामी	१२-३-५४	परिचालन का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।
५. भारतीय पंजीयन (संशोधन) विधेयक (धारा २१ का संशोधन)	श्री एस० वी० रामस्वामी	२६-३-५४	परिचालन का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।
६. भारतीय शस्त्रास्त्र (संशोधन) विधेयक (धारा १ और २६ का संशोधन तथा नई धाराओं १७-क और ३४ का सम्मिलित करना)	श्री उमा चरण पटनायक	२६-३-५४ ९-४-५४	परिचालन प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
७. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा २६८, २८४, और ३०९ का हटाया जाना तथा धारा २८६ आदि का संशोधन)	श्री खूबचन्द सोधिया	२६-३-५४	सामान्य चर्चा; विधेयक पर वाद विवाद स्थगित कर दिया गया।
८. अनैतिक पण्य तथा वेश्यागृह दमन विधेयक	श्रीमती मणिबेन पटेल	२३-४-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद को आगामी सत्र के किसी गैर-सरकारी दिन तक के लिये स्थगित कर दिया गया।
९. खाद्य पदार्थ अपमिश्रण दंड विधेयक	श्री बनारसी प्रसाद झुनझुनवाला	२३-४-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद आगामी सत्र के किसी गैर-सरकारी दिन तक के लिये स्थगित कर दिया गया।

१	२	३	४
१०. स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक	श्रीमती मणिबेन पटेल	२३-४-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद असमाप्त ।
सातवां सत्र			
१. स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक	श्रीमती मणि बेन पटेल	३-९-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।
२. अत्यावश्यक प्रदाय (अस्थायी शक्तियां) संशोधन विधेयक	पंडित ठाकुर दास भार्गव	३-९-५४ १७-९-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।
३. वनस्पति उत्पादन तथा विक्रय प्रतिषेध विधेयक	श्री झूलन सिंह	१७-९-५४	सामान्य चर्चा; असमाप्त ।
आठवां सत्र			
१. वनस्पति उत्पादन तथा विक्रय प्रतिषेध विधेयक	श्री झूलन सिंह	२६-११-५४	सामान्य चर्चा पुनः जारी हुई; विचार करने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
२. भारतीय शस्त्रास्त्र (संशोधन) विधेयक (धारा १ और २६ का संशोधन तथा नयी धारा १७-क और ३४ का समावेश)	श्री उमा चरण पटनायक	१०-१२-५४	सामान्य चर्चा पुनः जारी हुई; वाद विवाद स्थगित हुआ ।
३. स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक	श्रीमती उमा नेहरू	१०-१२-५४ २४-१२-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।
४. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (नई धारा २९४ख का समावेश)	श्री नागेश्वर प्रसाद सिन्हा	२४-१२-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।
५. मजूरी भुगतान विधेयक (धारा २ और १७ का संशोधन तथा नई धारा २७ का समावेश)	डा० एन० वी० खरे	२४-१२-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।

१	२	३	४
६. भारतीय चिकित्सा परिषद् (संशोधन) विधेयक (धारा ३, ५ और ८ आदि का संशोधन)	सरदार अमर सिंह सहगल	२४-१२-५४	सामान्य चर्चा; वाद विवाद स्थगित ।
७. मुफ्त, बलात् अथवा अनिवार्य श्रम निवारण विधेयक, १९५४	श्री दीवान चन्द शर्मा	२४-१२-५४	सामान्य चर्चा; असमाप्त ।
नौवां सत्र			
१. मुफ्त, बलात् अथवा अनिवार्य श्रम निवारण विधेयक, १९५४	श्री दीवान चन्द शर्मा	४-३-५५	सामान्य चर्चा पुनः जारी हुई; सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
२. स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक, १९५३	श्रीमती जयश्री रायजी	४-३-५५	सामान्य चर्चा पुनः जारी हुई; वाद विवाद स्थगित ।
३. भारतीय कार्मिक संघ (संशोधन) विधेयक, १९५३ (नयी धारा १५-क का समावेश)	श्री के० आनन्द नम्बियार	४-३-५५ १८-३-५५	सामान्य चर्चा; सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
४. भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) विधेयक, १९५४ (धारा ५ का संशोधन)	श्री उमा चरण पटनायक	१८-३-५५ २-४-५५	परिचालन प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
५. भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक, १९५२	सेठ गोविन्द दास	२-४-५५	विधेयक अस्वीकृत हुआ ।
६. जातिभेद उन्मूलन विधेयक, १९५४	श्री फूलसिंहजी बी० डाभी	१५-४-५५ २९-४-५५	सामान्य चर्चा; विधेयक २९-४-५५ को अस्वीकृत हुआ ।
७. अधिकृत लेखापाल (संशोधन) विधेयक, १९५३ (धारा २, ४ आदि का संशोधन)	श्री सी० आर० नरसिंहम्	२९-४-५५	सामान्य चर्चा; सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
८. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, १९५३ (धारा ४३५ का संशोधन)	श्री रघुनाथ सिंह	२९-४-५५	सामान्य चर्चा; असमाप्त ।
दसवां सत्र			
१. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, १९५३ (धारा ४३५ का संशोधन)	श्री रघुनाथ सिंह	५-८-५५	वाद विवाद स्थगित हो गया ।

१	२	३	४
२. भारतीय पंजीयन (संशोधन) विधेयक, १९५२ (नयी धारा २०-क का समावेश)	श्री एस० सी० सामन्त	५-८-५५	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
३. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (संशोधन) विधेयक, १९५४ (धारा १७ का संशोधन)	श्री रघुनाथ सिंह	५-८-५५	विचार करने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
४. भारतीय वयस्कता (संशोधन) विधेयक, १९५३ (धारा ३ का संशोधन)	श्री झूलन सिंह	५-८-५५	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
५. विदेशी राज्यों से उपाधि तथा उपहार (स्वीकृति पर दंड) विधेयक	श्री सी०आर० नरसिंहम्	५-८-५५ १९-८-५५	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
६. बालभिक्षा तथा अवारापन निवारण विधेयक, १९५२	श्री एम० एल० द्विवेदी	१९-८-५५ २-९-५५	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
७. अति आयु विवाह रोक विधेयक, १९५४	श्री दीवान चन्द शर्मा	२-९-५५	विचार करने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
८. अन्त्येष्टि क्रिया सुधार विधेयक, १९५४	श्री शंकर राव तेलकीकर	२-९-५५ ३०-९-५५	परिचालन प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
९. खाद्य पदार्थ अपमिश्रण दंड विधेयक	श्री वी० पी० झुनझुनवाला	२-९-५५	सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
१०. भारतीय अन्य धर्मग्राही (विनियमन तथा पंजीयन) विधेयक, १९५४	श्री जेठालाल हरिकृष्ण जोशी	२-१२-५५	चर्चा असमाप्त ।
ग्यारहवां सत्र			
१. भारतीय अन्य धर्मग्राही (विनियमन तथा पंजीयन) विधेयक, १९५४	श्री जेठा लाल हरिकृष्ण जोशी	२-१२-५५	चर्चा पुनः जारी हुई; विचार करने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।

१	२	३	४
२. कर्मगार प्रतिकर (संशोधन) विधेयक, १९५५ (नयी धारा ३क का समावेश)	श्रीमती रेणु चक्रवर्ती	२-१२-५५ १६-१२-५५	विचार करने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
भारतीय पंजीयन (संशोधन) विधेयक, १९५५ (धारा २ आदि का संशोधन)	श्री एस० सी० सामन्त	१६-१२-५५	सामान्य चर्चा, तत्पश्चात् विचार समाप्त हुआ, खंडशः पाठन हुआ और विधेयक पारित कर दिया गया ।
४. मोटर गाड़ी (संशोधन) विधेयक, १९५५ (धारा ६५ आदि के स्थान पर अन्य रखना)	श्री टी०वी० विट्ठल राव	१६-१२-५५	विचार करने का प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ परन्तु प्रस्ताव का भाषण असमाप्त ।
बारहवां सत्र			
१. मोटर गाड़ी (संशोधन) विधेयक, १९५५ (धारा ६५ आदि के स्थान पर अन्य रखना)	श्री टी०वी० विट्ठल राव	१६-१२-५५	चर्चा पुनः जारी हुई; विधेयक २४-२-५६ को अस्वीकृत हुआ ।
२. श्री काशी विश्वनाथ मंदिर विधेयक	श्री रघुनाथ सिंह	२४-२-५६ ९-३-५६	सामान्य चर्चा हुई; सभा की अनुमति से प्रस्ताव वापिस ले लिया गया ।
३. भारतीय रेलवे (संशोधन) विधेयक, १९५५ (धारा ७१क, ७१ख आदि का हटाना और धारा ७१ग और ७१घ आदि में संशोधन)	श्री के० आनन्द नम्बियार	९-३-५६	समान्य चर्चा के पश्चात् विधेयक अस्वीकृत हुआ ।
४. कारखाना (संशोधन) विधेयक (धारा ५९ को स्थानापन्न करना)	श्रीमती रेणु चक्रवर्ती	९-३-५६ २३-३-५६	सामान्य चर्चा के पश्चात्, विधेयक २३-३-५६ को अस्वीकृत हुआ ।
५. भारतीय पंजीयन (संशोधन) विधेयक (राज्य सभा द्वारा किये गए संशोधन पर विचार)	श्री एस० सी० सामन्त	२३-३-५६	राज्य सभा द्वारा विधेयक में किये गये संशोधन को लोक-सभा ने स्वीकार कर लिया ।
६. विधान मंडलों की कार्यवाहियां (प्रकाशन का सुरक्षण) विधेयक	श्री फीरोज गांधी	२३-३-५६ ६-४-५६	श्री एस० आर० राने द्वारा प्रस्तावित एक संशोधन के परिणामस्वरूप यह विधेयक, ६-४-५६ को प्रवर समिति को सौंप दिया गया ।

१	२	३	४
७. विधान मंडलों की कार्यवाहियां (प्रकाशन का सुरक्षण) विधेयक (जैसा कि प्रवर समिति में प्राप्त हुआ)	श्री फीरोज गांधी	४-५-५६	खण्डशः विचार तथा तृतीय वाचन के बाद विधेयक पर सामान्य चर्चा की गई। विधेयक के नाम को बदल कर "संसद् की कार्यवाही (प्रकाशन का सुरक्षण) विधेयक, १९५६" इस नाम से पारित किया गया।
८. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ४२९ में संशोधन)	पंडित ठाकुर दास भार्गव	६-४-५६ २०-४-५६	सभा की अनुमति से विधेयक २०-४-५६ को वापिस ले लिया गया।
९. विद्युत् (संभरण) संशोधन विधेयक	श्री साधन चन्द्र गुप्त	२०-४-५६ ४-५-५६	सभा की अनुमति से विधेयक ४-५-५६ को वापिस ले लिया गया।
१०. खान (संशोधन) विधेयक	श्री टी०वी० विट्ठल राव	४-५-५६ १८-५-५६	१८-५-५६ को अस्वीकृत हुआ।
११. भारतीय बाल दत्तक ग्रहण विधेयक	श्रीमती जयश्री रायजी	१८-५-५६	वाद विवाद असमाप्त।
तेरहवां सत्र			
१. भूतपूर्व सैनिक कर्मचारी मुकदमेबाजी विधेयक	डा० एन० बी० खरे	२७-७-५६	२७-७-५६ को अस्वीकृत हुआ।
२. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ४९७ का संशोधन)	श्री एफ० बी० डाभी	२७-७-५६ १०-८-५६	१०-८-५६ को अस्वीकृत हुआ।
३. भारतीय बाल दत्तक ग्रहण विधेयक	श्रीमती जयश्री रायजी	२७-७-५६	१८-५-५६ के बाद चर्चा पुनः जारी की गई, सभा की अनुमति से विधेयक २७-७-५६ को वापिस ले लिया गया।
४. बेकारी सहायता विधेयक	श्री वी० पी० नायर	१०-८-५६	परिचालन का प्रस्ताव १०-८-५६ को अस्वीकृत हुआ।

१	२	३	४
५. संविधान (छठी अनुसूची का संशोधन) विधेयक	श्रीमती बी० खोंगमेन	२४-८-५६	सभा की अनुमति से २४-८-५६ को वापिस ले लिया गया ।
६. दंडविधि (संशोधन) विधेयक	श्री मुकन्दलाल अग्रवाल	२४-८-५६	वाद विवाद असमाप्त ।
७. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ४३५ का संशोधन)	श्री रघुनाथ सिंह	२७-७-५६	चर्चा पुनः जारी हुई; खण्डशः विचार किया गया; तदुपरान्त तृतीय वाचन हुआ । विधेयक पारित किया गया ।
८. स्त्री तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक	श्रीमती कमलेन्दुमति शाह	२४-८-५६	पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा एक संशोधन प्रस्तुत करने पर विधेयक २४-८-५६ को प्रवर समिति को सौंप दिया गया ।
चौदहवां सत्र			
१. दंडविधि (संशोधन) विधेयक	श्री मुकन्दलाल अग्रवाल	२३-११-५६	विधेयक अस्वीकृत हुआ ।
२. प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान व अवशेष (संशोधन) विधेयक	श्री बलवन्त सिंह महता	७-१२-५६	सामान्य चर्चा; खण्डशः विचार, तृतीय वाचन हुआ और विधेयक पारित किया गया ।
३. हिन्दू विवाह (संशोधन) विधेयक (धारा १० का संशोधन)	श्रीमती उमा नेहरू	७-१२-५६	सामान्य चर्चा; खण्डशः विचार; तृतीय वाचन हुआ और विधेयक पारित किया गया ।
४. स्त्री तथा बाल संस्था (अनुज्ञापन) विधेयक	राजमाता कमलेन्दुमति शाह	७-१२-५६	सामान्य चर्चा; खण्डशः विचार; तृतीय वाचन हुआ और विधेयक पारित कर दिया गया।
५. मोटर परिवहन श्रमिक विधेयक	श्री ए० के० गोपालन	७-१२-५६ २१-१२-५६	सामान्य चर्चा; सभा की अनुमति से विधेयक वापिस ले लिया गया ।
६. व्यवहार प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक (धारा ८७-ख का हटाना)	श्री एम० एल० द्विवेदी	२१-१२-५६	सामान्य चर्चा; वाद विवाद असमाप्त ।

छः

चौदहवें सत्र के अन्त तक लोक-सभा में मंत्रियों द्वारा दिये गये महत्वपूर्न वक्तव्य

(मंत्रालयवार)

वक्तव्य देने वाले मंत्री का पद	सत्र का नाम	वक्तव्य देने की तिथि	वक्तव्य का विषय	लिया गया समय	
१	२	३	४	५	
				घन्टा	मिनट
प्रधान मंत्री	प्रथम सत्र	२४-७-५२	जम्मू तया काश्मीर	१	१५
		८-८-५२	ब्रिटिश सेना के गुरखा सैनिकों की भारत में भर्ती		८
	दूसरा सत्र .	१०-११-५२	सभा का कार्य		४
		१९-११-५२	राष्ट्र-मण्डल आर्थिक सम्मेलन		५
		२१-११-५२	संयुक्त राष्ट्र में कोरिया का मामला		५
		२७-११-५२	औद्योगिक वित्त निगम (संशोधन) विधेयक, १९५२		६
		१९-१२-५२	आन्ध्र राज्य का निर्माण		२
		२०-१२-५२	सरकारी कर्मचारियों में भ्रष्टाचार		२०
	तीसरा सत्र .	२५-३-५३	आन्ध्र राज्य का निर्माण		११
		२४-४-५३	हिन्दुस्तान शिपयार्ड विशाखापटनम में श्रम विवाद		३
		६-५-५३	[1]आयकर संशोधन विधेयक १९५२ के सम्बन्ध में अध्यक्ष महोदय के प्रमाण-पत्र के सम्बन्ध में विधि मंत्री के भाषण पर सभा में उठाये गये प्रश्न		१४
		१५-५-५३	वैदेशिक कार्य		१२
	चौथा सत्र .	१०-८-५३	काश्मीर में प्रगति		१५
		१७-८-५३	वैदेशिक कार्य		१५

[1]विधि तया अल्पसंख्यक-कार्य मंत्री की ओर से प्रधान मंत्री ने वक्तव्य दिया।

१	२	३	४	५
				घंटा मिनट
	पांचवां सत्र .	२२-१२-५३	भारतीय संघ के राज्यों के पुनर्गठन के लिये एक आयोग की नियुक्ति	५
	छठा सत्र .	१-३-५४	पाकिस्तान को अमरीका की सैनिक सहायता	२१
		१६-३-५४	कोरिया	५
		२४-४-५४	हिन्द चीन	१६
	सातवां सत्र .	२५-८-५४	अन्तर्राष्ट्रीय मामले	२५
	नवां सत्र .	३०-४-५५	बांडुंग में हुआ एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन	२६
		४-५-५५	गोआ सत्याग्रहियों का पुर्तगाली प्राधिकारियों द्वारा देश निकाला	९
	दसवां सत्र .	२५-७-५५	गोआ	१९
		२-८-५५	११ अप्रैल, १९५५ को चीन के दक्षिण समुद्र में एयर इंडिया इन्टरनेशनल के "काश्मीर प्रिंसेस" विमान को दुर्घटना	५
		३-८-५५	पुर्तगाली प्राधिकारियों द्वारा श्री एस० एम० नन्देदकर के साथ दुर्व्यवहार	१
		४-८-५५	३ अगस्त, १९५५ को गोआ सीमा की घटना (प्रधान मंत्री की ओर से श्री जी०बी० पन्त ने दिया)	३
		१६-८-५५	गोआ	१
		१७-८-५५	गोआ	९
		१८-८-५५	(एक) गोआ सत्याग्रही (दो) पूर्वोत्तर सीमान्त अभिकरण के तुएनसांग डिवीजन को स्थिति	७
		३०-९-५५	[1]पूर्वोत्तर सीमान्त अभिकरण	४
		१-१०-५५	पुर्तगाल मे भारतीयों के हितों की रक्षा के लिये प्रबन्ध	३
	ग्यारहवां सत्र .	५-१२-५५	सुदूर पूर्व में पुर्तगाली प्रान्तों के संबंध में पुर्तगाली विदेशी मंत्री तथा अमरीकी सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा दिया गया कथित संयुक्त वक्तव्य	—

[1]उत्तर देने की पूर्व सूचना के उत्तर में प्रधान मंत्री द्वारा दिया गया वक्तव्य। यद्यपि संबंधित सदस्य अनुपस्थित थे परन्तु फिर भी प्रधान मंत्री ने वक्तव्य दिया।

१	२	३	४	५
				घंटा मिनट
	बारहवां सत्र .	१६-३-५६	शान्ति-स्थापक प्रस्तावों का रहस्योद्घाटन	१६
		२०-३-५६	वैदेशिक कार्य	२९
		३०-४-५६	औद्योगिक नीति पर भारत सरकार का संकल्प	२२
	तेरहवां सत्र .	२१-७-५६	कुछ दिन पूर्व लन्दन में हुआ राष्ट्र मण्डल प्रधान मंत्रियों का सम्मेलन तथा प्रधान मंत्री का अन्य विदेशों में दौरा	१४
		८-८-५६	स्वेज नहर का मामला	२०
		११-९-५६	सेना जांच समिति का प्रतिवेदन	७
	चौदहवां सत्र .	१६-११-५६	अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति	१७
शिक्षा मंत्री .	चौदहवां सत्र .	२०-१२-५६	[1]बुद्ध जयन्ती समिति	३
गृह-कार्य मंत्री	प्रथम सत्र .	२६-७-५२	आसाम में बाढ़	९
	तीसरा सत्र .	१०-३-५३	८ मार्च, १९५३ को बारह टूटी दिल्ली में हुई घटना	८
		१६-३-५३	आन्ध्र राज्य का निर्माण	२
	पांचवां सत्र .	१५-१२-५३	त्रावनकोर-कोचीन तथा पैप्सू में चुनाव	३
		१८-१२-५३	प्रेस (आपत्तिजनक विषय) विधेयक १९५३	१०
	सातवां सत्र .	२४-८-५४	उत्तर बिहार, आसाम, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर प्रदेश में बाढ़	१४
	नवां सत्र .	१२-३-५५	नागपुर में प्रधान मंत्री के दौरे के समय दुर्घटना	४
	दसवां सत्र .	४-८-५५	३ अगस्त, १९५५ को गोआ सीमा पर घटना*	३
	तेरहवां सत्र .	३१-७-५६	नागा पहाड़ियों की स्थिति	१०
		१३-९-५६	१२ सितम्बर, १९५६ को श्री वी० जी० देशपांडे द्वारा उठाया गया विशेषाधिकार का प्रश्न	२२

[1]शिक्षा मंत्री से सम्बद्ध सभासचिव द्वारा वक्तव्य दिया गया ।

*प्रधान मंत्री की ओर से गृह मंत्री श्री जी० बी० पन्त ने वक्तव्य दिया ।

१	२	३	४	५
वित्त मंत्री .	दूसरा सत्र .	२१-११-५२	[1]सम्पदा शुल्क विधेयक के सम्बन्ध में १० नवम्बर, १९५२ को श्री सी० डी० देशमुख द्वारा दिये गये वक्तव्य में शुद्धि	घंटा मिनट २
		१०-१२-५२	[2]अनुदानों की अनुपूरक मांगें	६
		१७-१२-५२	(एक) राष्ट्र मंडल आर्थिक सम्मेलन (दो) औद्योगिक वित्त निगम (संशोधन) विधेयक १९५२	१२
	छठा सत्र .	१८-२-५४	सिडनी में हुआ राष्ट्र मण्डल वित्त मंत्रियों का सम्मेलन	११
		२४-२-५४	गैर-सरकारी उपक्रमों द्वारा संचालित उद्योगों के विकास में सहायता देने के लिये एक निगम की स्थापना	३
		१५-३-५४	[1]पुनर्वास वित्त प्रशासन द्वारा अग्रिम रूप से दिये गये ऋण पर लिये जाने वाली सूद की दर का पुनरीक्षण	१
	सातवां सत्र .	११-९-५४	भारतीय प्रशुल्क (द्वितीय संशोधन) विधेयक १९५४	६
	नवां सत्र .	१४-२-५५	भारत सरकार तथा औद्योगिक ऋण तथा विनियोजन निगम के बीच समझौता	३
		३-५-५५	सूती कपड़े पर आयात शुल्क में कमी	१
	बारहवां सत्र .	३-३-५६	वित्त विधेयक में मुद्रण त्रुटि	२
	तेरहवां सत्र .	३०-८-५६	[3]बीमे के राष्ट्रीयकरण में की गई और आगे प्रगति	१४
	चौदहवां सत्र .	३०-११-५६	देश की आर्थिक स्थिति तथा करारोपण के कुछ प्रस्ताव	२९
योजना तथा सिंचाई और विद्युत मंत्री .	सातवां सत्र .	३-९-५४	देश में बाढ़	१२

[1]वित्त उपमंत्री ने वक्तव्य दिया।

[2]और [1]वित्त उपमंत्री ने वक्तव्य दिया।

[3]राजस्व और असैनिक व्यय मंत्री ने वक्तव्य दिया।

१	२	३	४	५	
				घंटा	मिनट
	दसवां सत्र .	२-८-५५	उत्तर प्रदेश में बाढ़		७
		१८-८-५५	आसाम, बिहार, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर प्रदेश में बाढ़ की स्थिति		८
		१३-९-५५	१२ सितम्बर, १९५५ को हीराकुद बांध परियोजना में दुर्घटना		१
	तेरहवां सत्र .	२७-७-५६	देश में बाढ़ की स्थिति		४
	चौदहवां सत्र .	१२-१२-५६	देश में बाढ़ की स्थिति		६
प्रतिरक्षा मंत्री	दसवां सत्र .	२९-९-५५	लोक लेखा समिति के चौदहवें प्रतिवेदन में दिये गये सौदे		४
वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री	दूसरा सत्र .	२०-१२-५२	सोडा ऐश का मूल्य		६
	नवां सत्र .	७-५-५५	पांडीचेरी में कपड़ा उद्योग की स्थिति		४
विधि तथा अल्पसंख्यक कार्य मंत्री .	दसवां सत्र .	५-८-५५	विधि आयोग की नियुक्ति		५
	बारहवां सत्र .	२३-५-५६	पूर्वी पाकिस्तान से भारत में हिन्दुओं का अधिक संख्या में आगमन		४
रेलवे मंत्री .	तीसरा सत्र .	२-५-५३	नैनीताल एक्सप्रेस की दुर्घटना		३
	सातवां सत्र .	२४-९-५४	रेलवे बोर्ड का पुनर्निर्माण तथा पुनर्गठन		३
		२९-९-५४	हैदराबाद में रेलवे दुर्घटना		१०
	नवां सत्र .	२२-३-५५	‘फ्रंटियर मेल की दुर्घटना		३
	ग्यारहवां सत्र .	१०-१२-५५	‘मद्रास में तूफान के कारण रेलवे सम्पत्ति की हानि		—
	तेरहवां सत्र .	५-९-५६	१ सितम्बर, १९५६ की अर्ध रात्रि में सिकन्दराबाद-द्रोणाचलम् यात्री गाड़ी की दुर्घटना		२६
		१३-९-५६	१ सितम्बर, १९५६ को अर्द्ध रात्रि में सिकन्दराबाद द्रोणाचलम् यात्री गाड़ी की दुर्घटना के सम्बन्ध में और आगे वक्तव्य		११

‘रेलवे तथा परिवहन उपमंत्री द्वारा दिया गया वक्तव्य ।

‘यह वक्तव्य रेलवे तथा परिवहन उपमंत्री ने दिया ।

१	२	३	४	५
				घंटा मिनट
	चौदहवां सत्र .	२३-११-५६	२६-११-५६ की रात्रि में तूतीकोरिन एक्सप्रेस की दुर्घटना	५
		१६-१२-५६	[10]श्री एच० वी० कामत द्वारा १८-१२-५६ को अनुदानों (रेलवे) की अनुपूरक मांगों पर चर्चा के समय अरियालूर दुर्घटना के संबंध में पढ़े गये पत्र के सम्वन्ध में स्थिति	७
उत्पादन मंत्री	चौथा सत्र .	२४-८-५३	एक नई इस्पात परियोजना की स्थापना	५
	छठा सत्र .	१६-२-५४	नये इस्पात संयंत्र की स्थापना के लिये स्थान	२
खाद्य तथा कृषि मंत्री .	प्रथम सत्र .	२२-७-५२	पश्चिम बंगाल में बाढ़ की स्थिति	६
	दूसरा सत्र .	२४-११-५२	पश्चिम बंगाल तथा मैसूर में खाद्यान्नों की वसूली तथा वितरण पद्धति में परिवर्तन	४
	छठा सत्र .	८-३-५४	[11]भारत सरकार तथा बर्मा सरकार के बीच चावल का सौदा	२
	नवां सत्र .	१६-३-५५	गेहूं के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में ले जाने पर नियंत्रण का हटाना	३
श्रम मंत्री .	सातवां सत्र .	१७-६-५४	बैंक अपीलों पर श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण के निर्णय पर सरकार के संशोधन के संबंध में जांच करने का सरकार का निर्णय	१
	आठवां सत्र .	१३-१२-५४	न्यूटन चिकली कोयले की खान मध्य प्रदेश में दुर्घटना	४
	नवां सत्र .	४-५-५५	कानपुर में श्रम स्थिति	६
	दसवां सत्र .	२२-८-५५	बैंक पंचाट आयोग की सिफारिशों पर सरकार का निर्णय	६
		५-६-५५	सभा-पटल पर रखे जाने से पूर्व बैंक पंचाट आयोग के प्रतिवेदन से उद्धरणों का समाचार-पत्रों में प्रकाशन	५

[10]यह वक्तव्य रेलवे तथा परिवहन उपमंत्री ने दिया।

[11]यह वक्तव्य खाद्य तथा कृषि उपमंत्री द्वारा दिया गया।

१	२	३	४	५
				घंटा मिनट
	बारहवां सत्र .	२९-५-५६	केन्द्रीय आवनकोर में काजू कारखानों में कथित हड़ताल	१
संसद्-कार्य . मंत्री	आठवां सत्र .	२३-१२-५४	यूगोस्लाविया के फेडरल जनवादी गणराज्य के राष्ट्रपति तथा भारत के प्रधान मंत्री का संयुक्त वक्तव्य	६
	दसवां सत्र .	२३-९-५५	सदस्यों को उन के प्रश्नों के सम्बन्ध में आश्वासनों की पूर्ति की सूचना	३
सूचना तथा प्रसारण मंत्री	ग्यारहवां सत्र .	२४-११-५५	''आकाश वाणी के कर्मचारी—४ अप्रैल, १९५५ को सभा में दिये गये आश्वासन के अनुसार	—
	चौदहवां सत्र .	१९-१२-५६	भारत के राजनैतिक दलों के नेताओं द्वारा आकाश वाणी पर प्रसारण	९
प्राकृतिक सं-साधन मंत्री	चौदहवां सत्र .	१८-१२-५६	आसाम में तेल खोजने के बारे में आसाम तेल समवाय तथा सरकार के बीच हुआ समझौता	६
पुनर्वास मंत्री	छठा सत्र .	७-५-५४	निष्क्रान्त सम्पत्ति की समस्या के सम्बन्ध में पाकिस्तान के साथ हुई कुछ दिन पूर्व की बातचीत	१

''सम्बन्धित मंत्री की ओर से वाणिज्य मंत्री ने वक्तव्य दिया ।

सात

संकल्प (सरकारी तथा गैर-सरकारी) जिनकी चर्चा लोक-सभा में प्रथम संसद्-काल में हुई*

(क) सरकारी संकल्प

तिथि जिस दिन संकल्प पर चर्चा हुई	संकल्प का विषय	प्रभारी सदस्य का नाम	वाद-विवाद में समय लिया गया	सभा में स्वीकृत हुआ अथवा अस्वीकृत हुआ
१	२	३	४	५
	प्रथम सत्र		घंटा मिनट	
२६-७-५२	२६ जून, १६४८ को अन्तिम रूप से ब्रूसेल्स में पुनरीक्षित साहित्यिक तथा कलात्मक कार्यों का संरक्षण के बर्न कन्वेन्शन की स्वीकृति	श्री के० डी० मालवीय	६	स्वीकृत
	दूसरा सत्र			
१२-११-५२ तथा १३-११-५२	पारे पर निर्यात शुल्क लगाने के संबंध में भारत सरकार के वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय की ८ अक्तूबर, १६५२ की अधिसूचना की स्वीकृति	श्री डी० पी० करमरकर	५८	स्वीकृत
१५-१२-५२ से १६-१२-५२	प्रथम पंचवर्षीय योजना	श्री जवाहरलाल नेहरू	२१ १५	स्वीकृत
	तीसरा सत्र			
१२-३-५३	राष्ट्रपति द्वारा पैप्सू सरकार के सभी कार्यों को हस्तगत कर लेने के संबंध में घोषणा	डा० कैलाश नाथ काटजू	३ २१	स्वीकृत

*चौदहवें सत्र के अन्त तक।

१	२	३	४	५
	चौथा सत्र		घंटा मिनट	
१६-६-५३	राष्ट्रपति द्वारा पैप्सू सरकार के सभी कार्यो को हस्तगत कर लेने के संबंध में घोषणा को जारी रखने की संसद् की स्वीकृति लेने का संकल्प	डा० कैलाश नाथ काटजू	४ ४५	स्वीकृत
	पांचवां सत्र			
२१-११-५३ से २४-११-५३	काफी पर निर्यात शुल्क लगाना	श्री टी० टी० कृष्णमाचारी	१ ५२	स्वीकृत
	छठा सत्र			
२७-३-५४	संसद् सदस्यों का वेतन तथा भत्तों का भुगतान करने वाली संयुक्त समिति की सिफारिशें	श्री सत्य नारायण सिंह	१ ००	मूल संकल्प के स्थान पर एक दूसरा संकल्प स्वीकृत
१२-५-५४	रेलवे उपक्रम द्वारा सामान्य राजस्व में दिया जाने वाला लाभांश की दर का पुनरीक्षण करने वाली संसदीय समिति की नियुक्ति	श्री लाल बहादुर शास्त्री	२	स्वीकृत
	सातवां सत्र			
६-६-५४	भारत सरकार के वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय की २४ जुलाई, १६५४ की अधिसूचना की स्वीकृति के संबंध में	श्री टी० टी० कृष्णमाचारी	१ २३	स्वीकृत
६-६-५४	भारत सरकार के वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय की मूंगफली के तेल पर निर्यात शुल्क लगाने वाली २४ जुलाई, १६५६ की अधिसूचना की स्वीकृति के सम्बन्ध में	श्री टी० टी० कृष्णमाचारी	१ २७	स्वीकृत
	आठवां सत्र			
१६-११-५४	राष्ट्रपति द्वारा आन्ध्र सरकार के सब काम हस्तगत करने के संबंध में घोषणा	डा० कैलाश नाथ काटजू	३ २८	संशोधित रूप में स्वीकृत

१	२	३	४		५
			घंटा	मिनट	
२२-११-५४	चाय पर निर्यात शुल्क	श्री डी० पी० करमरकर	१	९	स्वीकृत
१५-१२-५४ तथा १६-१२-५४	रेलवे कन्वेन्शन कमेटी के प्रतिवेदन में की गई सिफारिशें	श्री लाल बहादुर शास्त्री	७	५	स्वीकृत
	नवां सत्र				
२८-२-५५	चाय पर निर्यात शुल्क लगाना	श्री डी० पी० करमरकर		६	स्वीकृत
२८-२-५५ तथा १-३-५५	(१) मूंगफली पर निर्यात शुल्क लगाना (२) मूंगफली की खली तथा मूंगफली के चूरे पर निर्यात शुल्क (३) डीकार्टीकेटेड विनौले की खली, कुछ अन्य खली तथा मूंगफली के चूरे पर निर्यात शुल्क लगाना	श्री डी० पी० करमरकर	१	३५	स्वीकृत
	दसवां सत्र				
	कोई नहीं				
	ग्यारहवां सत्र				
	कोई नहीं				
	बारहवां सत्र				
२९-३-५६	राष्ट्रपति द्वारा त्रावनकोर-कोचीन सरकार के सभी कार्यों को हस्तगत करने के लिये जारी की गई घोषणा की स्वीकृति	श्री गोविन्द वल्लभ पन्त	४	११	मूल संकल्प के स्थान पर एक दूसरा संकल्प स्वीकृत
२३-५-५६ २५-५-५६ २६-५-५६	द्वितीय पंचवर्षीय योजना में दिये गये सिद्धान्तों, उद्देश्यों और विकास के कार्यक्रमों की स्वीकृति	श्री जवाहरलाल नेहरू	१०	२७	चर्चा समाप्त नहीं हुई और आगे चर्चा अगले सत्र तक के लिये निलम्बित कर दी गई।

१	२	३	४	५
	तेरहवां सत्र		घंटा मिनट	
३०-८-५६ ३१-८-५६	खान और खनिज (विनियमन तथा विकास) अधिनियम १९४८ की धारा ७ की उप-धारा (१) के अधीन बनाये गये खान ठेके (निबन्धनों का रूपभेद) नियम, १९५६ का प्रारूप	श्री के० डी० मालवीय	१ ५३	संशोधित रूप में स्वीकृत
३१-८-५६ १-९-५६	त्रावनकोर-कोचीन राज्य के सम्बन्ध में जारी की गई घोषणा	श्री गोविन्द वल्लभ पन्त	३ ५५	स्वीकृत
८-९-५६ ११-९-५६ १२-९-५६ १३-९-५६	योजना आयोग द्वारा बनाई गई द्वितीय पंच-वर्षीय योजना में दिये गये सिद्धान्तों, उद्देश्यों तथा विकास कार्यक्रमों की सामान्य स्वीकृति	श्री जवाहरलाल नेहरू	२६ ४८	स्वीकृत
	चौदहवां सत्र			
३-१२-५६	केरल राज्य के सम्वन्ध में संविधान के अनु-च्छेद ३५६ के अधीन १ नवम्बर, १९५६ को राष्ट्रपति द्वारा जारी की गई घोषणा की स्वीकृति	श्री गोविन्द वल्लभ पन्त	५ ३७	स्वीकृत

(ख) गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्प

तिथि जिस दिन संकल्प पर चर्चा हुई	संकल्प का विषय	प्रभारी सदस्य का नाम	वाद-विवाद में समय लिया गया	सभा में स्वीकृत हुआ अथवा अ-स्वीकृत हुआ
१	२	३	४	५
			घंटा मिनट	
	प्रथम सत्र			
७-७-५२ १२-७-५२	१. भाषावार राज्यों का पुनर्वितरण	श्री तुषार चटर्जी	६ ५७	अस्वीकृत

१	२	३	४		५
			घंटा	मिनट	
	दूसरा सत्र				
२८-११-५२	२. सरकारी पदाधिकारियों की सम्पत्ति तथा धन की जांच	सरदार हुक्म सिंह	३	१७	वाद-विवाद समाप्त नहीं हुआ
	तीसरा सत्र				
१०-४-५३	" "	" "	२	००	चर्चा समाप्त हुई; सभा ने अस्वीकृत किया
१०-४-५३ } १७-४-५३ }	३. राष्ट्रीय सुरक्षा नियमों १९४९ की सुरक्षा को रद्द करना	श्री के० आनन्द नम्बियार	३	२६	अस्वीकृत
	४. अस्पृश्यता के लिये दण्ड देने के विधान को लागू करना	श्रीमती मिनीमाता	१	३९	संशोधित रूप में स्वीकृत
	चौथा सत्र				
७-८-५३ } २२-८-५३ }	५. हाईस्कूल तथा कालेज विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य सैनिक परीक्षण	डा० राम सुभाग सिंह		२५	वापिस लिया गया
२२-८-५३ } ४-९-५३ }	६. देश में बेकारी की वृद्धि	श्री ए० के० गोपालन	३	२	वाद-विवाद समाप्त नहीं हुआ
	पांचवां सत्र				
२१-११-५३ } ४-१२-५३ } १८-१२-५३ }	" "	" "	५	४२	संशोधित रूप में स्वीकृत
१८-१२-५३	७. पत्रकारों को औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधीन लाना	श्री दीवान चन्द शर्मा	१	३८	अस्वीकृत

१	२	३	४		५
			घंटे	मिनट	
१८-१२-५३	८. रायफल प्रशिक्षण की प्रगति के लिये सुविधायें।	श्री रामचन्द्र रेड्डी	०	०३	वाद-विवाद समाप्त नहीं हुआ ।
	छठा सत्र				
५-३-५४	तदेव	तदेव	१	२५	संशोधित रूप में स्वीकृत।
५-३-५४	९. राष्ट्रीय प्रतिरक्षा एकडेमी से केडीटों के वापिस निकलने की पद्धति की जांच के लिये एक आयोग की नियुक्ति।	सरदार हुकम सिंह	१	०६	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया।
१८-३-५४	१०. परिवार नियोजन का प्रोत्साहन	श्री सी० पी० गिडवानी	१	५६	"
१८-३-५४ २-४-५४	११. केन्द्र में दूसरी सभा को हटाना	श्री एम० एस० गुरुपादस्वामी।	२	२६	अस्वीकृत
२-४-५४ १७-४-५४ ३०-४-५४	१२. वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था तथा केन्द्र के तरीकों के कार्य संचालन की जांच के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	श्री श्रीनारायण दास	४	२६	अस्वीकृत
३०-४-५४	१३. हथ कर्घा उद्योग में साड़ी और धोतियों के उत्पादन का रक्षण।	श्री शिव मूर्ति स्वामी	०	२२	वाद-विवाद समाप्त नहीं हुआ।
	सातवां सत्र				
२७-८-५४	तदेव	तदेव	१	५०	चर्चा प्रारंभ हुई; अस्वीकृत।
२७-८-५४ १०-९-५४	१४. जूट तथा कपड़ा उद्योग के लिये नवीकरण योजनायें ।	श्री पी० टी० पुन्नूस	३	०३	संशोधित रूप में स्वीकृत।

1057 LS—23.

१	२	३	४		५
			घंटे	मिनट	
१०-६-५४ २४-६-५४	१५. बाढ़ द्वारा हुई हानियों को ठीक करने के लिये आसाम सरकार को वित्तीय सहायता।	श्री रोहिणी कुमार चौधरी।	०	३१	वापिस लिया गया।
२४-६-५४	१६. हिन्दी विधि आयोग की नियुक्ति .	श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा।	१	२०	अस्वीकृत
२४-६-५४	१७. सरकारी कर्मचारियों की कुछ श्रेणियों की सेवा की सुरक्षा।	श्री हीरेन्द्र नाथ मुकर्जी	०	४०	चर्चा समाप्त नहीं हुई।
	आठवां सत्र				
१९-११-५४	तदेव	तदेव	२	३५	चर्चा समाप्त हुई ; अस्वीकृत।
१९-११-५४ ३-१२-५४	१८. विधियों के पुनरीक्षण तथा आधुनिकीकरण के लिये विधि आयोग की नियुक्ति।	श्री दोदा तिमैया	२	२९	वापिस लिया गया।
३-१२-५४ १७-१२-५४	१९. औद्योगिक उपक्रमों के नियंत्रण के लिये संविहित संस्था।	श्री के० एस० राघवाचारी।	२	०३	अस्वीकृत
१७-१२-५४	२०. अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के कल्याण के लिये विभाग।	श्री सीता नाथ ब्रह्म-चौधरी।	०	२५	चर्चा समाप्त नहीं हुई।
	नवां सत्र				
२५-२-५५	तदेव	तदेव	१	८	अस्वीकृत
२५-२-५५ ११-३-५५	२१. प्रसारण निगम . . .	ठाकुर युगल किशोर सिंह।	१	३५	अस्वीकृत
११-३-५५	२२. डाक तथा तार वित्त . .	श्री सतीश चन्द्र सामंत	१	४०	वापिस लिया गया।
११-३-५५ २५-३-५५	श्रमिकों का सामूहिक संपणन . .	श्री के० के० बसु	०	३६	नियम विरुद्ध

१	२	३	४		५
			घंटे	मिनट	
२५-३-५५	२४. मूल्यों में असंतुलन	श्री अमजद अली	०	१८	नियम विरुद्ध
२५-३-५५	२५. नदी घाटी योजना	श्री झूलन सिंह	१	५५	वापिस लिया गया।
६-४-५५	२६. राजनैतिक निवृत्ति वेतन	डा० राम सुभग सिंह	२	७	अस्वीकृत
६-४-५५ २२-४-५५	२७. भार तथा माप .	श्री के० टी० अच्युतन	१	३	संशोधित रूप में स्वीकृत।
२२-४-५५	२८. केन्द्रीय कृषि वित्त निगम दसवां सत्र	श्री श्रीनारायण दास	१	३०	चर्चा समाप्त नहीं हुई।
२६-७-५५	तदेव	तदेव	१	३०	वापिस लिया गया।
२६-७-५५ १२-८-५५	२९. वेतन आयोग की नियुक्ति	श्री दीवान चन्द्र शर्मा	३	१	अस्वीकृत
१२-८-५५, २६-८-५५ ९-९-५५	३०. विदेशी व्यापार में राज्य का स्वामित्व	श्री ए० के० गोपालन	३	४	अस्वीकृत
९-९-५५ २३-९-५५	३१. भारतीय नौवहन के विकास के लिये सुझाव देने के लिये एक आयोग की नियुक्ति ।	श्री रघुनाथ सिंह	३	५०	संशोधित रूप में स्वीकृत।
२३-९-५५	३२. रेलों का पुनर्वर्गीकरण	श्री राजा राम शास्त्री	०	८	चर्चा समाप्त नहीं हुई।
	ग्यारहवां सत्र				
२५-११-५५	तदेव	तदेव	१	२६	अस्वीकृत
२५-११-५५ ९-१२-५५	३३. औद्योगिक सेवा आयोग	श्री एम० एल० द्विवेदी	०	५१	चर्चा निलम्बित।

१	२	३	४	५
			घंटे मिनट	
९-१२-५५	३४. सामुदायिक परियोजना तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजना की जांच के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	श्री रघुवीर सहाय	१ ३६	चर्चा समाप्त नहीं हुई ।
	बारहवां सत्र			
१७-२-५६	ऊपर का संख्या ३३			
२-३-५६	ऊपर का संख्या ३४	श्री एम० एल० द्विवेदी	२ ३३	अस्वीकृत
		श्री रघुवीर सहाय	२ २९	वापस लिया गया ।
२-३-५६ १६-३-५६ ३१-३-५६	३५. मद्य निषेध की अन्तिम तिथि निश्चित करना ।	श्री सी० आर० नरसिंहन ।	३ ५०	संशोधित रूप में स्वीकृत ।
३१-३-५६ १४-४-५६	३६. औद्योगिक तथा वाणिज्यिक राज्य उपक्रमों के सम्बन्ध में नियुक्ति ।	श्री जी० डी० सोमानी	२ ३१	अस्वीकृत
१४-४-५६ २७-४-५६	३७. बैंकों का राष्ट्रीयकरण	श्री एम० एस० गुरुपादस्वामी	२ २७	अस्वीकृत
२७-४-५६ ११-५-५६ २५-५-५६	३८. एक व्यक्ति की अधिकतम आय की सीमा ।	श्री विभूति मिश्र	४ ५	संशोधित रूप में स्वीकृत ।
२५-५-५६	३९. आयकर विभाग के कार्य संचालन की जांच ।	श्री एच० वी० कामत	० ५४	चर्चा समाप्त नहीं हुई ।
	तेरहवां सत्र			
२०-७-५६	ऊपर का संख्या ३९	तदेव	२ १२	अस्वीकृत
२०-७-५६ ३-८-५६	४०. संयुक्त राष्ट्र संघ में अफ्रीकी तथा एशियाई राष्ट्रों का प्रतिनिधित्व ।	श्री ब्रजेश्वर प्रसाद	२ २४	वापिस लिया गया ।
३-८-५६ १७-८-५६	४१. फिल्मों के उत्पादन तथा प्रदर्शन का नियंत्रण और विनियमन ।	श्री एन० एम० लिंगम्	२ ४०	संशोधित रूप में स्वीकृत ।

१	२	३	४		५
			घंटे	मिनट	
१७-८-५६ ३१-८-५६	४२. राज्य नीति के निदेश तत्व के संचालन की जांच के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	श्री तुषार चटर्जी	२	६	अस्वीकृत
३१-८-५६	४३. न्यू क्लीयर तथा थर्मो न्यू क्लीयर परीक्षण ।	श्री सी० पी० गिडवानी	०	६	चर्चा समाप्त नहीं हुई ।
	चौदहवां सत्र				
१६-११-५६	तदेव	तदेव	२	३४	वापिस लिया गया ।
३०-११-५६	४४. भारत की कोयले की खानों का राष्ट्रीयकरण ।	श्री के० आनन्द नंबियार	२	४	अस्वीकृत
१४-१२-५६	४५. राजनैतिक पीड़ितों के बच्चों के लिये छात्रवृत्तियां	डा० राम सुभग सिंह	२	५	अगले सत्र के लिये चर्चा स्थगित की गई ।
१४-१२-५६	४६. चाय उद्योग का राष्ट्रीयकरण	श्री ए० के० गोपालन	०	१४	चर्चा समाप्त नहीं हुई ।

१९५२–५७ वर्षों में लोक-सभा सदस्यों द्वारा विभिन्न

मंत्रालय का नाम	१९५२		१९५३	
	संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिशत
१	२	३	४	५
वाणिज्य तथा उद्योग*	८१८	१५.६	१,०५५	१३.१
संचार	२५२	५.०	४९२	६.१
प्रतिरक्षा	२३०	४.४	३९५	४.९
शिक्षा	२३६	४.५	४१९	५.२
वैदेशिक कार्य	३०९	५.९	४२३	५.३
वित्त	३०२	५.८	४७६	५.९
खाद्य तथा कृषि	६४२	१२.२	९१९	११.५
स्वास्थ्य	११६	२.२	२२७	२.८
गृह-कार्य**	३९०	६.५	५७२	७.१
सुचना और प्रसारण	९७	१.८	१३३	१.७
लोहा और इस्पात†	——	——	——	——
सिंचाई और विद्युत	१८२	३.५	१८२	२.३
श्रम	२०३	३.८	२९७	३.७
विधि	३७	.७	५६	.७

*दो मंत्रालयों में विभाजित हो गया जैसे वाणिज्य और उपभोग-वस्तु उद्योग मंत्रालय तथा भारी उद्योग मंत्रालय,

**१९५४ के आठवें सत्र के पश्चात् राज्य मंत्रालय के गृह-कार्य मंत्रालय में विलय के पश्चात् राज्य मंत्रालय के आंकड़े

†१९५५ के नवें सत्र के पश्चात् वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय से अलग मंत्रालय का निर्माण ।

मंत्रालय के अन्तर्गत पूछे गये प्रश्नों की संख्या दिखाने वाला विवरण

१९५४		१९५५		१९५६	
संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिशत
६	७	८	९	१०	११
९९८	१२.१	९४०	९.८	९८९	८.२
६१५	७.४	७३२	७.४	७०६	५.८
४४३	५.४	४७१	४.८	४०६	३.६
५७८	७.०	७४२	७.५	१,१०४	९.१
४३६	५.३	६१०	६.२	६३१	५.२
५५६	६.७	५१६	५.२	६४९	५.३
९१६	११.१	९१३	९.२	९८०	८.१
३०५	३.७	४४०	४.४	४७१	३.९
४३७	५.३	५३९	५.४	८७२	७.२
१७४	२.१	२४५	२.५	२१४	१.८
——	——	१२०	१.२	६१	.५
२३२	२.८	१६४	१.६	२६५	३.०
२६८	३.२	३३०	३.३	३७२	३.१
३०	.४	३७	.४	८५	.७

१९५६ में तेरहवें सत्र से।

भी इस में शामिल हैं।

मंत्रालय का नाम	१९५२		१९५३	
	संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिशत
१	२	३	४	५
प्राकृतिक संसाधन और वैज्ञानिक गवेषणा	११८	२.३	१८५	२.३
योजना आयोग	१३५	२.६	२३३	२.६
उत्पादन	१४०	३.१	२५२	३.१
रेलवे	५४७	१०.४	९६१	१२.०
पुनर्वास	२१०	४.०	२७३	३.४
परिवहन	१२६	२.४	२४७	३.१
निर्माण, आवास और संभरण	१५६	३.०	२२४	२.८
प्रधान मंत्री का सचिवालय	१४	.३	८	.१
जोड़	५,२९०	१००.०	८,०३३	१००.०

१९५४		१९५५		१९५६	
संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिशत	संख्या	कुल का प्रतिश
६	७	८	९	१०	११
२२०	२.७	२९१	२.९	४८५	४.०
२३८	२.९	२३१	२.३	३४५	२.९
२०४	२.४	३१०	३.१	४९३	४.१
९५०	११.५	१,४०२	१४.२	१,७५०	१४.४
१८७	२.३	२७६	२.८	३१९	२.६
२९१	३.५	३६८	३.७	४८१	४.०
१७२	२.१	२२३	२.३	२५९	२.१
७	.१	७	.१	१२	.१
८,२४७	१००.०	९,९०७	१००.१	११,८४९	१००.०

गो

विभिन्न सत्रों में प्राप्त तथा गृहीत प्रश्नों की संख्या दिखाने वाला विवरण

वर्ष	सत्र	प्राप्त प्रश्नों की संख्या (वापिस लिये गये तथा जिन की तिथि समाप्त हो गई ऐसे प्रश्नों के अतिरिक्त)	गृहीत प्रश्नों की संख्या	स्तम्भ (३) की तुलना में स्तम्भ (४) की प्रतिशतता
१९५२		१०८४५	५२१५	४८.१
	पहला*	६४६७	३०१०	४६.५
	दूसरा	४३७८	२२०५	५०.६
१९५३		१८५७०	७९४२	४२.७
	तीसरा	८१६५	३६६०	४५.२
	चौथा	४८०९	२१३५	४४.४
	पांचवां	५५९६	२११७	३७.८
१९५४		१९९९६	८१७७	४०.९
	छठा	९६५४	३०४१	३१.५
	सातवां	५५४७	२५११	४५.२
	आठवां	४७९५	२६२५	५४.७
१९५५		१८८९६	९९०७	५२.४
	नवां	६७१९	३८७५	५७.७
	दसवां	७८०१	३८१८	४८.९
	ग्यारहवां	४३७६	२२१४	५०.६
१९५६		२२४९६	१२१०९	५३.८
	बारहवां	१०१८३	५२८७	५१.९
	तेरहवां	६९४७	३९९१	५७.४
	चौदहवां	५३६६	२८३१	५२.८

*पहला सत्र १३ मई, १९५२ को प्रारम्भ हुआ था ।

दस

विभिन्न सत्रों में प्रश्न काल के लिये आवंटित बैठकों की संख्या तथा उत्तर दिये गये प्रश्नों और अनुपूरकों की संख्या दिखाने वाला विवरण

वर्ष	सत्र	प्रश्न काल के लिये आवंटित बैठकों की संख्या	ऐसे प्रश्नों की संख्या जिन के उत्तर मौखिक दिये गये	अनुपूरक प्रश्नों की संख्या जिन के उत्तर दिये गये	प्रति बैठक उत्तर दिये गये प्रश्नों की औसत संख्या
१९५२		८६	१६३३	८६२४	१९
	पहला	५४	९६२	४८७०	१८
	दूसरा	३२	६७१	३७५४	२१
१९५३		१३०	२९२७	१३६००	२३
	तीसरा	६६	१३९७	७०८४	२१
	चौथा	३५	६८१	३९१०	१९
	पांचवां	२९	८४९	२६०६	२९
१९५४		१२२	३६०५	१०९०५	२९
	छठा	६३	१८१८	५७९७	२७
	सातवां	२९	९५५	२६६७	३३
	आठवां	३०	८३२	२४४१	२८
१९५५		१२३	३५९५	१०९५५	२९
	नवां	४८	१५३८	४२४२	३२
	दसवां	५०	१५८९	४५५१	२९
	ग्यारवहां	२५	६७८	२१६२	२७
१९५६		१४५	३०८८	१२७९५	२१
	बारहवां	७३	१५५०	६२७९	२१
	तेरहवां	४४	९३५	३९३१	२१
	चौदहवां	२८	६०३	२५८५	२२

*पहला सत्र १३ मई, १९५२ को प्रारम्भ हुआ था ।

लोक सभा में हुई आधे घंटे की चर्चा का विवरण

क्रम संख्या	जिस के द्वारा प्रश्न रखा गया	विषय	जिस तिथि को प्रश्न उठाया गया
१	२	३	४
	पहला सत्र		
१	श्री अ० क० गोपालन	गोरखपुर में रेलवे कर्मचारियों पर गोली चलाने के बारे में तारांकित प्रश्न संख्या ५६ के उत्तर से उत्पन्न हुई बातें ।	२८-५-१९५२
२	श्री सिंहासन सिंह	मोटे और मध्यम श्रेणी के कपड़े की कीमतों सम्बन्धी अल्प सूचना प्रश्न संख्या ६४ के १७–६–५२ के उत्तरों से उत्पन्न हुई बातें ।	१६-७-१९५२
३	श्री त० व० विट्ठल राव	सिंग्रेनी कोयला खानों की दुर्घटना सम्बन्धी तारांकित प्रश्न संख्या १७८५ के १६–७–५२ के उत्तर से उत्पन्न हुई बातें ।	३०-७-१९५२
४	श्री देवेश्वर सर्मा	भारतीय चाय के बारे में तारांकित प्रश्न संख्या १८८६, १८८७, और १८८८ के २१-७-५२ को दिये गये उत्तरों से उत्पन्न हुई बातें ।	८-८-१९५२
	दूसरा सत्र		
५	श्री अ० चं० गुह	चाय उद्योग में संकट	१०-१२-१९५२
६	श्री कनावडे पाटिल	महाराष्ट्र में उन्नाभाव	९-१२-१९५२
	तीसरा सत्र		
७	श्री वें प० नायर	खोपरा और नारियल के तेल का आयात	२७-३-१९५३
८	श्री व० कु० दास	पटसन के मूल्य	१-४-१९५३
९	श्री वें० प० नायर	राष्ट्रीय अल्प बचत योजनायें	१५-४-१९५३

१	२	३	४
१०	श्री ग० व० सोमानी	राजस्थान में खाद्याभाव	२४-४-१९
११	श्री पुन्नूस	नारियल जटा उद्योग	६-५-१९
१२	श्री ही० ना० मुकर्जी	चीन के साथ व्यापार पर प्रतिबन्ध	७-५-१९
१३	श्रीमती रेणु चक्रवर्ती	कार्मिक संघों के कर्मचारी	१३-५-१९
१४	श्री वल्लाथरास	मद्रास में अनावृष्टि अकाल की स्थिति	१५-५-१९
	चौथा सत्र		
१५	श्री वें० प० नायर	पुनर्वास वित्त प्रशासन	२-९-१९
	पांचवां सत्र		
	कोई नहीं		
	छठा सत्र		
	कोई नहीं		
	सातवां सत्र		
१६	श्री वें० प० नायर	रेलवे प्लेटफार्मों पर सोवियत प्रकाशनों की बिक्री	१५-९-१९
१७	श्री ही० ना० मुकर्जी	डिप्टी शिपिंग मास्टर, कलकत्ता	२८-९-१९
	आठवां सत्र		
	कोई नहीं		
	नवां सत्र		
१८	श्री त० व० विट्ठल राव	कोयला खानों में दुर्घटनायें	२२-३-१९५
	दसवां सत्र		
१९	श्री ही० ना० मुकर्जी	रेलवे का पुनर्वर्गीकरण	३१-८-१९५
२०	श्री ही० ना० मुकर्जी	पांडिचेरी विधान सभा	१५-९-१९५
२१	श्री म० ला० द्विवेदी	मशीन टूल प्रोटोटाइप फैक्टरी, अमरावती	२१-९-१९५
२२	श्री वें० प० नायर	अखिल भारतीय क्रीड़ा परिषद्	२७-९-१९५
	ग्यारहवां सत्र		
	कोई नहीं		

१	२	३	४
	बारहवां सत्र		
२३	डा० लंका सुन्दरम्	श्रमजीवी पत्रकार	२७-४-१९५६
२४	श्री वें० प० नायर	सीमेन्ट	३०-४-१९५६
२५	डा० राम सुभग सिंह	गन्ना	२५-५-१९५६
२६	श्री स० चं० सामन्त	राष्ट्रीय अनुशासन योजना	२८-५-१९५६
२७	श्री भागवत झा आजाद	पोलियो व्याधि	२९-५-१९५६
२८	श्री त० ब० विट्ठल राव	कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम, १९५२	३०-५-१९५६
	तेरहवां सत्र		
२९	श्री सावन गुप्त	मोटर स्पिरिट का मूल्य	१०-८-१९५६
३०	श्री बीरेन दत्त	अगरतला में बाढ़ से घरों को क्षति	१४-८-१९५६
३१	श्री रिशांग किशिंग	मनीपुर के लिये आदिम जाति विकास अनुदान	२७-८-१९५६
३२	श्री च० र० नरसिंहम्	जिप्सम का आयात	२८-८-१९५६
३३	श्री त० ब० विट्ठल राव	कोयला खान भविष्य निधि योजना	३०-८-१९५६
	चौदहवां सत्र		
३४	श्री वें० प० नायर	केरल के खनिज संसाधन	४-१२-१९५६
३५	श्री सावन गुप्त	भारतीय कार्मिक संघ (संशोधन) अधिनियम, १९४७	१०-१२-१९५६
३६	श्री ति० सु० अ० चेट्टियार	कृषि का केन्द्रीय कालिज	११-१२-१९५६
३७	श्रीमती रेणु चक्रवर्ती	सोवियत रूस और पूर्वी यूरोप में भारतीय सांस्कृतिक शिष्ट मंडल	१२-१२-१९५६

वार और किस विषय पर लोक सभा में बोले और उन्होंने भाषणों में कितना-कितना समय लिया—यह दिखाने वाला विवरण
(१४वें सत्र के अन्त तक)

	विधान		प्रस्ताव		संकल्प		आयव्ययक		थोड़े समय के लिये अविलम्बनीय लोक महत्व के विषय पर चर्चा		योग	
	संख्या २	समय ३	संख्या ४	समय ५	संख्या ६	समय ७	संख्या ८	समय ९	संख्या १०	समय ११	संख्या १२	समय १३
ह	३	१—११	—	—	—	—	४	०—४७	—	—	७	१—५८
	८	१—३५	२	०—२०	४	०—५५	६	१—१९	—	—	२०	४—०९
	१	०—०७	—	—	—	—	३	०—४१	१	०—१३	५	१—०१
	१४	२—१३	१	०—२४	—	—	४	१—०७	—	—	१९	३—४४
	१३	१—४६	१	०—०२	३	०—२६	७	१—०३	—	—	२४	३—१७
	१	०—११	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०—११
	१८	३—३४	४	१—०५	३	०—१८	११	२—४१	१	०—१२	३७	७—५०
	४२	६—३३	—	—	४	०—४६	११	२—०६	३	०—१७	६०	९—५२

"आ"												
"आजाद", श्री भागवत झा	२६	४–०१	३	०–५७	६	२–०१	१७	४–१६	१	०–१०	५६	११–२८
आजाद, मौलाना अबुलकलाम	१	०–०४	–	—	–	–	५	३–१५	–	–	६	३–१६
आनन्द चन्द, श्री	१०	२–१२	१	०–३०	१	०–२३	४	१–०२	–	–	१६	४–०७
आल्तेकर, श्री	३६	६–२६	१	०–१७	२	०–२१	६	२–२४	१	०–१०	४६	१०–३८
आल्वा, श्री जोकीम	२३	४–५७	८	२–१०	४	०–४०	११	२–५७	४	०–२६	५०	११–१३
"इ"												
इकबाल सिंह, सरदार	१७	२–२१	२	०–४६	–	–	५	०–४८	१	०–०७	२५	४–०५
इब्राहीम, श्री	१	०–०७	–	–	१	०–०६	२	०–१६	–	–	४	०–३२
इलयापेरुमाल, श्री एल०	२	०–०१	–	–	–	–	१	०–१२	–	–	३	०–२१
इस्लामुद्दीन, श्री मुहम्मद	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
"ई"												
ईयाचरण, श्री आई०	३	०–४०	२	०–३५	–	–	४	०–५६	–	–	६	२–११
"उ"												
उइके, श्री एम० जी०	१	०–१३	३	०–५७	१	०–१२	३	०–३५	–	–	८	१–५७
उपाध्याय, पंडित मुनीश्वर दत्त	२३	५–०७	२	०–३८	३	०–४६	२	०–२०	२	०–३८	३२	७–३२

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
उपाध्याय, श्री शिव दत्त	३	०—४५	—	—	—	—	—	—	—	—	३	०—४५
उपाध्याय, श्री शिव दयाल	—	—	—	—	—	—	—	—	२	०—१८	२	०—१८
"ए"												
एंथनी, श्री फ्रैंक	३१	८—४७	९	३—१८	३	१—५	२१	५—५९	४	१—०३	६८	२०—१२
एवनजिर, डा० एस० ए०	—	—	१	—	१	०—३	१	०—२८	—	—	३	०—३१
"क"												
कंदस्वामी, श्री बेवी	—	—	—	—	—	—	१	०—०५	—	—	१	०—०५
कवकन, श्री	७	०—३८	—	—	—	—	६	०—४८	—	—	१३	१—२६
कथम, श्री वीरेन्द्र नाथ	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
कमल सिंह, श्री	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
करमरकर, श्री	५०	७—१६	—	—	९	१—३३	६	१—३४	—	—	६५	१०—२३
कर्णी सिंहजी बहादुर, हिज हाईनेस महाराजा बीकानेर	१	०—७	१	०—१३	१	०—१०	—	—	१	०—१०	४	०—४०
काचिरोयर, श्री गोविंद-स्वामी	१	०—१३	—	—	—	—	२	०—२४	—	—	३	०—३७
काजमी, श्री सैयदमुहम्मद अहमद	८	०—५५	—	—	—	—	—	—	—	—	८	०—५५

काजरोल्कर, श्री नारायण सदोबा	४	०—३४	४	०—५७	१	०—०५	६	०—५२	—	—	१५	२—२८
काटजू, डा० कैलाश नाथ	१३३	३४—३०	१०	४—०२	१३	४—३४	१६	५—०६	५	१—३६	१७७	४६—५६
कामत, श्री हरि विष्णु	५२	६—०८	६	१—५०	२	१—०७	२२	४—१०	६	१—१३	८८	१७—२८
कामले, डा० देवराव नामदेव राव पाथ्रीकर	१	०—०७	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०—०७
कानूनगो, श्री नित्यानन्द	१३	२—४०	—	—	—	—	६	२—१५	—	—	२२	४—५५
कयाल, श्री परेश नाथ	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
काले, श्रीमती अनुसूयाबाई	५	०—२६	—	—	१	०—०५	६	१—०२	१	०—०४	१३	१—३७
कासलीवाल, श्री नेमिचन्द्र	३५	३—५६	३	०—३२	१	०—१६	५	०—५५	—	—	४४	५—३९
किरोलिकर, श्री वासुदेव श्रीधर	२	०—०५	—	—	—	—	—	—	—	—	२	०—०५
कुरील, श्री प्यारे लाल 'तालिब'	—	—	२	०—३८	—	—	२	०—३०	—	—	४	१—०८
कुरील, श्री बैजनाथ	—	—	—	—	—	—	२	०—१६	—	—	२	०—१६
कृपालानी, आचार्य	१०	३—३३	१३	६—५६	४	२—०२	३	१—३४	—	—	३०	१४—०५
कृष्ण, श्री म० रं०	३	०—३६	१	०—१६	—	—	१	०—१३	—	—	५	१—०५
कृष्ण चन्द्र, श्री	१५	२—१६	—	—	१	०—१३	२	१—१२	—	—	१८	३—४१

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
कृष्णप्पा, श्री मो० वें०	५	०–३०	–	–	१	०–१६	२	०–०४	–	–	८	०–५०
कृष्णमाचारी, श्री	११०	२७–१९	३	२–३०	१०	३–२१	७	४–३३	६	२–०८	१३९	४०–५३
कृष्णस्वामी, डा०	४९	१३–०८	९	२–३६	६	१–५८	१६	५–०३	८	१–४०	८८	२४–२५
केलप्पन, श्री	१४	१–५५	३	०–४७	३	०–२२	९	१–४५	–	–	२९	४–४९
केशव अयंगार, श्री	१९	२–२३	–	–	४	०–२२	६	१–३१	–	–	२९	४–१६
केसकर, डा० बा० वि०	१६	३–२२	२	०–२४	४	०–३८	५	२–४८	१	०–२०	२८	७–३२
कोले, श्री जगन्नाथ	–	–	–	–	–	–	४	२–०७	३	१–११	१६	६–०१
कौट्टुकप्पल्ली, श्री जार्ज थॉमस	३	०–२८	१	०–१०	२	–	–	–	–	–	–	–
"ख"												
खन्ना, श्री मेहरचन्द	७	१–०४	२	१–३९	–	०–३२	१	०–१९	–	–	७	१–२९
खर्डेकर, श्री	१३	३–३२	१	०–१६	४	०–३८	७	१–५०	–	–	२५	६–१६
खरे, डा० ना० भा०	२८	३–१३	५	१–०१	३	०–३४	७	१–१९	१	०–१९	४४	६–२६
खां, श्री सादत अली	–	–	–	–	१	०–१४	३	०–१९	–	–	४	०–३३
खीमजी, श्री भवनजी	१	०–०७	१	०–१४	–	–	–	–	–	–	२	०–२१

खुदा वख्श, श्री मुहम्मद	३	०–४२	१	०–२२	–	–	३	०–४६	–	–	७	१–५३
खेडकर, श्री गोपालराव वाजी राव	–	–	१	०–१७	१	०–१७	–	–	–	–	२	०–३४
खोंगमेन, श्रीमती	५	०–३१	५	१–०६	–	–	४	१–०४	१	०–०४	१५	२–५८
"ग"												
गंगा देवी, श्रीमती	३	०–२४	२	०–१७	१	०–१२	४	१–००	–	–	१०	१–५३
गर्ग, श्री राम प्रताप	–	–	–	–	–	–	३	०–३७	–	–	३	०–३७
गणपति राम, श्री	२	०–०४	१	०–१४	–	–	५	१–०३	–	–	८	१–२१
गांधी, श्री माणिकलाल मगन लाल	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
गांधी, श्री फिरोज	६	३–४५	२	०–३४	२	१–२३	–	–	२	०–५५	१५	६–३७
गांधी, श्री वी० वी०	४१	६–३४	४	१–१३	५	१–१३	६	१–४६	६	०–५८	६५	१४–४[illegible]
गाडगील, श्री नरहरि विष्णु	६७	१६–१६	१४	४–४७	१२	३–०६	१३	४–३६	४	०–३५	११०	२८–१५
गिडवानी, श्री चोइथ राम प्रतावराय	२४	४–०५	४	१–३५	७	१–४७	१४	३–०१	४	०–४१	५३	११–०६
गिरधारी, भोइ श्री	–	–	१	०–०६	–	–	–	–	–	–	१	०–०६
गिरि, श्री वी० वी०	१८	३–११	२	०–४०	२	०–३३	८	३–१३	१	०–०७	३१	७–४४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
गुप्त, श्री बादशाह	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
गुप्त, श्रीसाधन चन्द्र	९१	२१–२७	६	१–४६	४	०–३५	११	२–४०	१	०–०८	११३	२६–३६
गुरुपादस्वामी, श्री एम० एस०	१०६	२३–५३	४	१–३८	१७	३–४६	३०	६–०३	८	१–५३	१६५	३७–१३
गुलाम कादिर, खान	—	—	—	—	—	—	१	०–१५	—	—	१	०–१५
गुह, श्री अरुण चन्द्र	८२	१७–३२	३	१–१६	६	१–४०	१४	२–०५	—	—	१०५	२२–३६
गोपालन, श्री ए० के०	२८	६–१६	७	२–४०	१२	५–१६	७	२–२४	६	१–३३	६०	२१–१५
गोपी राम, श्री	२	०–१०	१	०–२२	—	—	—	—	—	—	३	०–३२
गोविंद दास, सेठ	१६	५–१७	४	१–०१	३	१–०३	८	२–१४	१	०–१०	३२	९–४५
गोहेन, श्री चोखामून	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०–०९	१	०–०९
गौतम, श्री सी० डी०	१	०–०६	—	—	—	—	२	०–२१	—	—	३	०–२७
गौंडर, श्री के० शक्तिवाडिवेल	—	—	—	—	—	—	२	०–११	—	—	२	०–११
गौंडर, श्री के० पेरियास्वामी	८	१–०५	—	—	—	—	१	०–१०	—	—	९	१–१५
गौडा, श्री टी० मादिया	४	०–१९	—	—	—	—	१	०–११	—	—	५	०–३०
गाडिलिंगन गौड़, श्री वाई०	७	०–३९	—	—	२	०–२४	८	१–२४	—	—	१७	२–२७

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
चालिहा, श्री विमला प्रसाद	६	१–०२	१	०–११	–	–	–	–	–	–	७	१–१३
चावदा, श्री अकबर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
चेट्टियार, श्री टी० एस० अविनाशिलिंगम्	५८	९–२३	२	०–३३	२	०–२२	१०	२–०६	–	–	७२	१२–३४
चेट्टियार, श्री वी० वीआर० एन० एआर० नागप्पा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
चौधरी, श्री रोहिणी कुमार	४०	७–०६	१	०–०४	५	०–४५	९	१–५२	१	०–०९	५६	९–५६
चौधरी, मुहम्मद शफी	–	–	–	–	–	–	१	०–१०	–	–	१	०–१०
चौधरी, श्री गनेशी लाल	२	०–११	–	–	–	–	१	०–२२	–	–	३	०–३३
चौधरी, श्री त्रिदिव कुमार	१३	४–११	–	–	–	–	१३	२–५७	–	–	२६	७–०८
चौधरी, श्री सी० आर०	८	१–२४	१	०–०७	–	–	२	०–२६	–	–	११	१–५७
चौधरी, श्री निकुंज विहारी	४४	६–१८	३	१–०३	४	०–५१	२३	३–२५	–	–	७४	११–४७
"ज"												
गजीवन राम, श्री	१०	२–२५	–	–	१	०–०३	६	३–१९	१	०–२०	१८	४–०७
धरामन, श्री	–	–	–	–	–	-	१	०–१०	–	–	१	०–१०
सूर्य, डा०	३१	६–५२	३	१–०१	५	०–३९	८	१–३७	२	०–१६	४९	१०–२५

जांगड़े, श्री रेशम लाल	११	१—२१	३	०—३६	२	०—१८	९	१—४८	१	०—०४	२६	४—०७
जाजवाड़े, श्री रामराज	४	०—४८	—	—	—	—	१	०—०७	—	—	५	०—५६
जाटव वीर, श्री मानिक चन्द	४	०—३८	२	०—२०	—	—	२	०—३१	१	०—१५	९	१—४४
जेठन, श्री खरवर	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
जेना, श्री कान्हू चरण	१	०—०६	—	—	—	—	१	०—०७	—	—	२	०—१३
जेना, श्री निरंजन	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	
जेना, श्री लक्ष्मीधर	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
जैदी, कर्नल	५	०—५०	१	०—११	—	—	३	०—५९	—	—	९	२—००
जैन, श्री अजित प्रसाद	३०	७—२५	२	१—५१	—	—	७	४—५०	३	१—२०	४२	१५—२६
जैन, श्री नेमी शरण	५	१—२२	—	—	—	—	—	—	—	—	५	१—२२
जोगेन्द्र सिंह, सरदार	३	०—३६	—	—	—	—	१	०—१६	—	—	४	०—५२
जोशी, श्री आनन्द चन्द्र	१०	२—१२	१	०—३०	१	०—२३	४	१—०२	—	—	१६	४—०७
जोशी, श्री नन्दलाल												
जोशी, श्री मोरेश्वर दिनकर	१६	३—४९	१	०—१७	—	—	९	१—४९	१	०—१७	२७	५—१२
जोशी, श्री कृष्णाचार्य	२	०—२०	—	—	—	—	३	०—३४	—	—	५	०—५४
जोशी, श्री जेठालाल हरिकृष्ण	४	०—४७	—	—	—	—	२	०—१९	—	—	६	१—०६

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
जोशी, श्री लीलाधर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
जोशी, श्रीमती सुभद्रा	१८	५–३४	१	०–१०	–	–	३	०–४१	–	–	२२	६–२५
ज्वाला प्रसाद, श्री	१	०–०९	–	–	–	–	–	–	–	–	१	०–०९
"झ"												
झुनझुनवाला, श्री	४८	९–१८	१	०–१२	१	०–११	१२	२–३५	१	०–१०	६३	१२–२६
"ट"												
टंडन, श्री पुरुषोत्तम दास	१७	४–४१	८	२–५८	३	१–१२	११	४–५६	–	–	३९	१३–५७
टेकचन्द, श्री	८५	१६–०८	४	१–२८	५	०–५२	८	१–५५	–	–	१०२	२०–२३
"ड"												
डाभी, श्री फूलसिंहजी भ०	४०	८–०७	२	०–२८	२	०–१५	७	१–५१	१	०–०९	५२	१०–५०
डामर, श्री अमर सिंह सावजी	–	–	१	०–१०	–	–	–	–	–	–	१	०–१०
"त"												
तिम्मय्या, श्री डोडा	३	०–१५	४	०–४४	६	१–०९	८	१–३३	–	–	२१	३–४१
तिवारी, श्री राम सहाय	२	०–१०	–	–	–	–	४	०–४०	–	–	६	०–५०
तिवारी, सरदार राज भानू सिंह	१	०–०८	१	०–११	–	–	–	–	–	–	२	०–१९

तिवारी, पंडित द्वारका नाथ	१८	३–२३	१	०–१३	६	१–०१	५	१–१८	१	०–०७	३१	६–०२
तिवारी, पंडित व० ला०	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
तिवारी, श्री वेंकटेश नारायण	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
तीर्थ, स्वामी रामानन्द	५	१–१४	३	१–०२	१	०–१३	३	०–२४	–	–	१२	३–०३
तुलसीदास किलाचन्द, श्री	९३	१९–०३	३	०–५३	४	१–१३	२५	६–१४	६	१–२१	१३१	२८–४४
तेलकीकर, श्री शंकर राव	८	१–२५	–	–	१	०–१३	३	०–१९	–	–	१२	१–५७
त्यागी, श्री महावीर	७	१–३१	–	–	२	०–१८	३	१–२९	१	०–०७	१३	३–२५
त्रिपाठी, श्री कांमाख्या प्रसाद	२४	६–०९	३	०–४७	४	११–३३	१३	३–२१	१	०–०७	४५	११–५७
त्रिपाठी, श्री विश्वम्भर दयाल	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
त्रिपाठी, श्री हीरा वल्लभ	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
त्रिवेदी, श्री उ० मू०	१०९	२०–३१	७	१–५५	३	०–५८	२१	५–४१	४	०–४६	१४४	२९–५१
थ												
थामस, श्री अ० म०	५५	१०–०७	२	०–५१	७	२–३१	१९	५–०२	४	०–२६	८७	१८–५७
थामस, श्री अ० व०	१३	१–५९	–	–	४	०–४२	१	०–०९	–	–	१८	२–५०
थिरानी, श्री	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
थिरुकुरलार, श्री, मुनिस्वामी अवर्गल	४	०–३९	–	–	–	–	६	१–२५	–	–	१०	२–०४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
"द"												
दत्त, श्री असीम कृष्ण	३	०–१३	–	–	–	–	–	–	१–०	०–०८	४	०–२१
दत्त, श्री सन्तोष कुमार	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
दत्त, श्री वीरेन	९	१–१५	–	–	–	–	६	१–१४	–	–	१५	२–२९
दामोदरन, श्री नेत्तूर प०	१	०–०५	–	–	१	०–१७	६	१–१८	–	–	८	१–४०
दामोदरन, श्री गो० रं०	१	०–०६	–	–	–	–	२	०–२५	–	–	३	०–३१
दातार, श्री बलवन्त नागेश	४९	१४–०२	५	२–२४	७	२–५१	१०	३–४१	–	–	७१	२२–५८
दास, श्री नयन तारा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
दास, डा० मनमोहन	३४	५–३२	–	–	–	०–१७	४	०–५०	–	–	३४	६–३९
दास, श्री श्रीनारायण	३१	६–४०	७	१–२७	१२	२–५९	११	२–२७	१	०–१०	६२	१३–४३
दास, श्री कमल कृष्ण	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
दास, श्री ब०	११	२–५३	२	०–२१	४	१–०३	२	०–३०	१	०–०३	२०	४–५०
दास, श्री वसन्त कुमार	१२	१–४५	१	०–०५	५	१–०१	१४	१–५९	२	०–१८	३४	५–०८
दास, श्री विजय चन्द्र	८	२–०५	–	–	१	०–०७	४	१–०५	–	–	१३	३–१७

दास, श्री वेली राम	२	०–२४	–	–	–	–	२	०–१६	–	–	४	०–४०
दास, श्री राम धनी	–	–	१	०–०७	–	–	–	–	–	–	१	०–७०
दास, श्री रामानन्द	–	–	१	०–१२	–	–	५	१–००	–	–	६	१–१२
दास, श्री सारंगधर	२८	६–४३	८	१–४४	९	२–१६	१५	४–३०	१	०–०८	६१	१६–२१
दिगम्बर सिंह, श्री	१	०–१०	–	–	२	०–२४	६	१–०९	–	–	९	१–४३
दुबे, श्री राजाराम गिरधर लाल	३	०–३०	–	–	–	–	२	०–२५	–	–	५	०–५५
दुबे, श्री मूलचन्द	४६	६–२९	–	–	–	–	७	१–२२	–	–	५३	६–५१
दुबे, श्री उदय शंकर	४	०–३९	–	–	–	–	१	०–१३	–	–	५	०–५२
देव, हिज हाईनेस महाराजा राजेन्द्र नारायण सिंह	१३	४–०७	३	०–५०	१	०–२२	५	१–१२	–	–	२२	६–३१
देव, श्री चंडिकेश्वर शरण सिंह जू	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
देव, श्री सु० चं०	८	१–१४	–	–	–	–	६	१–०८	१	०–१४	१५	२–३६
देव, श्री दशरथ	३	०–१७	२	०–३८	१	०–१०	४	१–०३	१	०–१४	११	२–२२
देवगम, श्री कान्हू राम	३	०–२७	२	०–२९	२	०–२१	५	१–१३	–	–	१२	२–३०
देशपांडे, श्री गोविंद हरि	२२	३–२०	८	१–२६	२	०–१९	१०	१–५५	–	–	४२	७–०

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
देशपांडे, श्री विष्णु घनश्याम	७३	१३–३५	१०	२–४३	२	०–१४	०–१४	२–४४	२	०–१५	१०४	१६–३१
देशमुख श्री कृ० गु०	१	०–२०	–	–	–	–	१	०–१४	–	–	२	०–३४
देशमुख, श्री चि० द्व०	१४५	४४–१०	२	१–२७	१२	७–३७	१६	१२–३४	८	६–१७	१८७	७२–०५
देशमुख, डा० पंजाबराव शा०	१६	३–२६	१	०–३७	२	०–१६	६	२–०६	३	०–४६	२८	७–१७
देसाई, श्री कन्हैयालाल नाना भाई	–	–	–	–	१	०–०७	–	–	–	–	१	०–०७
देसाई, श्री खंडू 'भाई कासन' जी	२५	४–२१	२	०–२६	१	०–११	७	२–४६	–	–	३५	७–५०
द्विवेदी, श्री मन्नूलाल	४	१–०५	१	०–१०	६	०–५३	५	१–१५	१	०–०६	१७	३–३२
द्विवेदी, श्री दशरथ प्रसाद	–	–	–	–	–	–	२	०–२५	–	–	२	०–२५
घ												
धुलेकर, श्री	२६	३–५३	२	०–१७	२	०–२४	३	१–०६	–	–	३३	५–४०
धुसिया, श्री सोहन लाल	१	०–०७	१	०–११	–	–	–	–	–	–	२	०–१८
धोलकिया, श्री गुलाबशंकर अमृतलाल	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–

न												
नन्दा, श्री गुलजारी लाल	१४	२—४१	६	३—४२	६	१—३०	१३	६—५८	—	—	३९	१६—५१
नटराजन, श्री एस० एस०	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
नटवाडकर, श्री जयंत राव गणपत	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
नटेशन, श्री पी०	४	०—४०	१	०—२९	१	०—१२	५	१—११	—	—	११	२—२२
नथवानी, श्री नरेन्द्र पी०	१८	३—५१	१	०—१७	—	—	—	—	—	—	१९	४—०८
नथवानी, श्री हरि राम	१	०—११	—	—	—	—	१	०—१०	—	—	२	०—२१
नम्बियार, श्री के० आनन्द	५६	७—४१	२	०—२६	६	१—२७	३२	७—३४	—	—	९६	१७—०८
नरसिंहन्, श्री सी० आर०	१९	२—२३	—	—	७	१—२३	८	१—०८	१	०—०४	३५	४—५८
नरसिंहम्, श्री एस० वी० एल०	१२	२—१०	—	—	—	—	—	—	—	—	१२	२—१०
नानादास, श्री मंगलगिरि	१२	२—३८	२	०—२९	१	०—०४	३	०—४३	—	—	१८	३—५४
नामधारी, आत्मा सिंह	६	०—४०	—	—	३	०—३१	२	०—१८	—	—	११	१—२९
नायडू, श्री नाला रेड्डी	२	०—२०	—	—	—	—	२	०—२५	—	—	४	०—४५
नायर, श्री एन० श्रीकान्तन	१९	३—२१	१	०—०५	३	०—४९	१३	२—५५	२	०—२५	३८	७—३५
नायर, श्री वी० पी०	५७	१४—५३	५	०—४४	५	१—२१	१७	३—५२	३	०—३६	८७	२१—२६

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
नायर, श्री सी० कृष्णन	९	१–२१	२	०–२४	–	–	४	१–०१	२	०–२०	१७	३–०६
नायर, श्रीमती शकुंतला	—	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
नास्कर, श्री पूर्णेन्दुशेखर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
निजलिंगप्पा, श्री एस०	१	०–२०	१	०–५२	२	०–३१	१	०–१३	–	–	५	१–५६
नेवटिया, श्री आर० पी०	५	०–४३	–	–	१	०–१९	६	१–०१	१	०–०७	१३	२–१०
नेसवी, श्री टी० आर०	१	०–०५	–	–	–	–	२	०–४२	–	–	३	०–४७
नेसामनी, श्री ए०	१	०–०६	१	०–३५	–	–	१	०–१४	–	–	३	१–४५
नेहरू, श्रीमती उमा	१६	२–२१	१	०–०६	४	०–२९	१०	१–५७	–	–	३१	४–५३
नेहरू, श्री जवाहरलाल	२७	८–२८	२८	१९–२१	१०	६–५९	१७	९–३८	३	१–०३	८५	४५–२९
नेहरू, श्रीमती शिवराजवती	१८	२–१६	२	०–२५	४	०–४७	३	०–३६	–	–	२७	४–०४
प												
पंडित, श्रीमती विजय लक्ष्मी	१	०–१५	२	०–३८	–	–	१	०–२३	–	–	४	१–१६
पन्त, पंडित गो० व०	४८	१३–४०	६	२–१५	४	१–३०	४	२–५६	२	०–१९	६४	२०–४०
पंत, श्री देवी दत्त	३	०–३१	–	–	–	–	१	०–१७	–	–	४	०–४८
पटनायक, श्री उमा चरण	१४	३–१८	–	–	५	१–२७	८	२–२९	१	०–०४	२८	७–१८

पटेरिया, श्री सुशील कुमार	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	
पटेल, श्री वहादुर भाई कुंटाभाई	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पटेल, श्रीमती मणिबेन बल्लभभाई	९	१—१४	२	०—२९	१	०—०८	१०	२—२७	—	—	२२	४—२८
पटेल, श्री राजेश्वर	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पन्नालाल, श्री	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
परमार, श्री रुपाजी भावजी	१	०—१३	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०—१३
परांजपे, श्री आर० जी०	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
परागीलाल, चौधरी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पावर, श्री वैंकटराव पिराजीराव	१	०—०९	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०—०९
पांडे, डा० नटवर	—	—	—	—	—	—	३	०—३२	—	—	३	०—३२
पांडे, श्री बद्रीदत्त	७	०—५५	—	—	१	०—१६	३	०—३४	—	—	२१	१—४५
पांडे, श्री सी० डी०	१८	३—३१	१	०—१८	—	—	२	०—३३	—	—	२१	४—३२
पाटस्कर, श्री हरि विनायक	१२१	२५—०१	—	—	२	०—२६	४	०—५९	१	०—१८	१२८	२६—४४
पाटिल, श्री एस० के०	४	१—०८	१	१—०३	१	०—१४	२	०—४७	—	—	८	३—१२

1057 LS—27.

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
पाटल, श्री पी० आर० कानावड़े	६	१-१०	२	०-२२	१	०-०७	२	०-२५	१	०-०७	१२	२-११
पाटिल, श्री शंकरगौडा वीरंगौड़	—	—	—	—	—	—	३	०-३०	—	—	३	०-३०
पारिख, श्री शान्तिलाल गिरधारी लाल	४	०-३५	—	—	—	—	३	०-२६	—	—	७	१-०४
पारिख, डा० जयन्ती लाल नरभेराम	१	०-२१	—	—	—	—	१	०-१६	—	—	२	०-३७
पालचौधरी, श्रीमती इला	१३	१-२८	५	०-४३	४	०-१८	६	१-१२	—	—	३१	३-४१
पिल्ले, श्री पी० टी० थानू	१०	१-४८	४	०-४६	१	०-०८	४	०-४७	२	०-५५	२१	४-२४
पुन्नूस, श्री	३६	५-४४	१	०-२२	७	२-३१	१७	३-५१	२	०-१६	६३	१२-४४
पोकर साहेब, श्री	९	१-०	—	—	—	—	५	१-५६	—	—	१४	२-५६
प्रभाकर, श्री नवल	६	०-५६	२	०-३०	—	—	४	०-४५	—	—	१२	२-११
फ												
फोतेदार, पंडित शिव नारायण	३	०-४०	२	०-३५	—	—	४	०-५६	—	—	६	२-११
ब												
बंसल, श्री घमंडी लाल	६६	१४-२७	८	२-२७	५	१-१५	१७	३-५७	३	०-२७	६६	२२-३३

बंसी लाल, श्री	६	१–०१	—	—	—	—	—	—	—	—	६	१–०१
बदन सिंह, चौधरी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
वर्मन, श्री उपेन्द्र नाथ	४७	६–०६	८	२–२४	१	०–०७	१०	१–३६	२	०–१६	६८	११–३५
वरुआ, श्री देव कान्त	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
बलदेव सिंह, सरदार	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
बसु, श्री अ० क०	१	०–२०	—	—	—	—	१	०–१६	—	—	२	०–३६
बसु, श्री कमल कुमार	११६	१६–४२	३	०–३६	४	०–५८	२६	४–३६	५	०–५०	१५७	२६–४८
बहादुर सिंह, श्री	३	०–११	१	०–३१	१	०–५	६	०–५	—	—	११	१–३७
बागड़ी, श्री मगन लाल	—	—	—	—	—	—	१	०–११	—	—	१	०–११
बारूपाल, श्री पन्ना लाल	५	०–२७	१	०–१६	२	०–११	५	०–३१	—	—	१३	१–२८
बालकृष्णन, श्री	—	—	—	—	—	—	५	०–३१	—	—	५	०–३१
बालसुब्रह्मण्यम, श्री	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
बाल्मीकी, श्री कन्हैया लाल	७	०–५१	१	०–१३	—	—	२	०–४८	—	—	१०	१–५२
बासप्पा, श्री	११	१–५६	—	—	—	—	३	०–३४	—	—	१४	२–३३
बिदारी, श्री रामप्पा बालप्पा	—	—	१	०–१६	—	—	४	०–५२	—	—	५	१–८
बीरबल सिंह, श्री	—	—	—	—	—	—	२	०–२२	—	—	२	०–२२

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
बुनिकोटय्या, श्री सनक	—	—	—	—	—	—	२	०—२२	—	—	२	०—२२
बुरागोहेन, श्री स० न०	—	—	—	—	—	—	१	०—१३	—	—	१	०—२२
बूनरागस्वामी, श्री	१	०—१६	१	०—११	—	—	५	०—५	—	—	७	१—१७
बैरो, श्री	३	०—२६	—	—	—	—	४	०—४२	—	—	७	१—०८
बैनर्जी, श्री दुर्गा चरण	३	०—२१	—	—	—	—	३	०—२०	०—२८	—	६	१—०१
बोगावत, श्री	२०	३—५५	१	०—०८	७	०—४६	६	१—१८	—	—	३४	६—०७
बोरकर, श्रीमती अनुसूयाबाई भावराव	१	०—०७	—	—	—	—	१	०—०६	—	—	२	०—१३
बोस, श्री	५	०—२२	२	०—२९	—	—	७	१—०६	१	०—१५	१५	२—११
ब्रजेश्वर प्रसाद, श्री	३	०—४८	२	०—२७	—	—	२	०—१८	—	—	७	१—३३
ब्रह्मचौधरी, श्री सीतानाथ	—	—	—	—	१	०—१८	—	—	—	—	१	०—१८
भ												
भंडारी, श्री दौलत मल	१	०—११	—	—	—	—	१	०—१७	—	—	२	०—२८
भक्त दर्शन, श्री	१४	१—५३	—	—	३	०—२४	१०	१—२९	—	—	२७	३—४६
भक्त, श्री व० रा०	५	०—३०	—	—	१	०—१८	४	१—४८	—	—	१०	२—३६
भटकर, श्री लक्ष्मण श्रावण	१	०—१०	१	०—१४	—	—	—	—	—	—	२	०—२४

भट्ट, श्री चन्द्र शंकर	१	०—१०	—	—	—	—	२	०—२२	—	—	३	०—३२
भवानी सिंह, श्री	१	०—१२	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०—१२
भागवत झा आजाद, श्री	२०	३—५५	१	०—०८	७	०—४६	६	१—१८	—	—	३४	६—०७
भार्गव, पंडित मुकुट बिहारी लाल	३	०—४४	१	०—२७	—	—	३	०—४४	—	—	७	१—५५
भार्गव, पंडित ठाकुर दास	२५२	९८—१४	५	१—५५	२	०—४२	२४	६—३८	६	२—३२	२८८	८०—०१
भारती, श्री गोसे गिरि राजा साहेब	—	..	१	०—११	—	—	—	—	—	—	१	०—११
भारतीय, श्री शालिग्राम रामचन्द्र	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
भीमाचार्य, श्री	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
भोंसले, श्री जगन्नाथराव कृष्णराव	१२	२—०८	१	०—१४	—	—	४	०—५४	—	—	१८	३—३६
म												
मंडल, डा० पशुपति	४	०—३५	—	—	१	०—११	—	—	—	—	५	०—४६
मजीठिया, सरदार सुरजीत सिंह	२	०—४१	—	—	१	०—२१	२	१—०१	—	—	७	२—०३
मथुरम, डा० एडवर्ड पाल	—	—	—	—	—	—	२	०—२४	—	—	२	०—२४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मल्लय्या, श्री यू० श्रीनिवास	–	–	–	–	–	–	१	०–१८	–	–	१	०–१८
मल्लदोरा, श्री गाम	–	–	१	०–१०	–	–	–	–	–	–	१	०–१०
मसुरिया दीन, श्री	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मसूदी, मौलाना मुहम्मद सईद	२	०–१०	२	०–४५	१	०–१२	–	–	–	–	५	१–०७
महता, वलवन्त सिंह, श्री	२	०–४४	१	०–१७	१	०–०६	४	१–१२	–	–	८	२–१९
महताव, श्री हरिकृष्ण	–	–	–	–	–	–	१	०–०६	–	–	१	०–०६
महाता, श्री भजहरि	१	०–१६	१	०–१३	१	०–११	–	–	–	–	३	०–४०
महादेव, श्रीमती इंद्रा ए	९.	२–१५	१	०–११	१	०–०९	५	०–५४	–	–	१६	३–२९
महापात्र, श्री शिवनारायण सिंह	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
महोदय, श्री बैजनाथ	–	–	–	–	–	–	१	०–२५	–	–	१	०–२५
माझी, श्री रामचन्द्र	–	–	१	०–०७	–	–	–	–	–	–	१	०–०७
माझी, श्री चेतन	–	–	–	–	–	–	१	०–०६	–	–	१	०–०६
माचन, श्री सी० पी०	१७	३–४७	१	०–२१	४	१–१२	८	२–०९	१	०–०६	३१	७–३५
मायदेव, श्रीमती इन्दिरा ए०	९	२–१५	१	०–११	१	०–०९	५	०–५४	–	–	१६	३–२९

मालवीय, श्री केशव देव	३	०–१६	–	–	४	०–५८	५	२–२७	१	०–१४	१३	३–५८
मालवीय, श्री मोती लाल	–	–	१	०–१४	–	–	१	०–१२	–	–	२	०–२६
मालवीय, श्री भगु नन्दु	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मालवीय, पंडित चतुर नारायण	२८	४–२५	२	०–३१	१	०–०६	७	१–१६	–	–	३८	६–२१
मिनीमाता, श्रीमती	३	०–२५	–	–	१	०–०६	२	०–१४	–	–	६	०–४८
मिश्र, रघुवर दयाल	२५	६–४७	–	–	२	०–३२	२	०–३६	–	–	२६	७–५५
मिश्र, श्री मथुरा प्रसाद	६	१–५६	३	०–५२	१	०–१३	३	०–४७	–	–	१३	३–४५
मिश्र, श्री ललित नारायण	६	१–३८	४	०–५८	५	०–५३	८	१–५४	–	–	२६	५–२३
मिश्र, श्री श्याम नन्दन	४	१–०६	१	०–१६	३	१–१५	१	०–२२	–	–	६	३–०६
मिश्र, श्री सरजू प्रसाद	–	–	–	–	–	–	१	०–११	–	–	१	०–११
मिश्र, पंडित सुरेश चन्द्र	१५	३–२४	२	०–२३	४	०–३१	४	१–०५	–	–	२५	५–२३
मिश्र, श्री भूपेन्द्र नाथ	१	०–०३	–	–	–	–	३	०–३८	–	–	२	०–२३
मिश्र, पंडित लिंगराज	१	०–१३	–	–	–	–	३	०–३४	१	०–०२	५	०–४६
मिश्र, श्री लोकनाथ	६	०–५१	१	०–३७	–	–	४	०–५८	१	०–०४	१२	२–१३
मिश्र, श्री विभूति	६	१–१५	१	०–२१	४	१–१५	५	०–५७	–	–	१६	३–४८

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मिश्र, श्री गिरिधर	१	०–१२	–	–	–	–	१	०–११	–	–	२	०–२३
मुकर्जी, श्री श्याम प्रसाद	८	०–३९	३	२–०२	४	१–३९	१५	४–२४	–	–	४६	१५–४४
मुकर्जी, श्री हीरेन्द्र नाथ	७२	२१–०९	१८	७–४६	१४	४–१७	२१	७–१५	९	१–५१	१३४	४१–१५
मराठे, श्री यशवन्तराव मार्तंडराव	१	०–१२	–	–	–	–	१	०–१०	–	–	२	०–२२
मुचाकी कोसा, श्री	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मुत्तुकृष्णन, श्री एम०	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मुदलियार, श्री सी० रामस्वामी	–	–	–	–	–	–	२	०–१४	–	–	२	०–१४
मुनिस्वामी, श्री एन० आर०	५	१–०३	–	–	२	०–११	२	०–०४	२	०–१५	११	१–३३
मुरली मनोहर, श्री	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मुरारका, श्री राधेश्याम रामकुमार	१९	५–३५	१	०–११	–	–	६	१–१२	–	–	२६	६–५८
मुसहर, श्री किराई	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
मुसाफिर, श्री गुरमुख सिंह	४	०–४५	–	–	१	०–२०	५	१–२३	–	–	१०	२–४२
मुहम्मद अकबर, श्री सूफी	–	–	–	–	–	–	३	०–३०	–	–	३	०–३०

मूर्ति, श्री वी० एस०	२६	३–१६	६	१–२३	७	१–०५	१६	३–०६	—	—	५५	८–५६
मेनन, श्री के० ए० दामोदर	३८	५–५४	३	०–४०	५	०–३०	१५	२–३०	१	०–०६	६१	९–४०
मेनन, श्री वी० के०	—	—	—	—	१	०–३४	—	—	—	—	१	०–३४
मेहता, श्री अशोक	३०	११–१७	५	२–३५	५	२–१६	८	३–०६	२	०–३८	५०	१६–५२
मेहता, श्री बलवन्त राय गोपालजी	१	०–०५	१	०–३५	—	—	—	—	—	—	२	०–४०
मेहता, श्री जसवन्त राज	३	०–३४	३	४–४५	—	—	७	१–३१	—	—	१३	२–५०
मैस्करीन, कुमारी एनी	२६	६–३०	६	१–२१	६	१–०६	१०	२–४५	—	—	५१	११–४२
मैत्र, श्री मोहित कुमार	१२	१–४८	१	०–०६	—	—	१	०–०४	—	—	१४	१–५८
मैथ्यू, श्री	६	१–२६	१	०–१४	७	१–०२	७	१–१६	—	—	२४	४–०१
मोरे, श्री शंकर शान्ताराम	११७	२७–५२	५	१–३७	७	१–५०	१३	३–०४	१	०–१०	१४३	३३–३३
मोरे, श्री कृ० ल०	७	१–०४	—	—	—	—	५	०–५४	१	०–०३	१३	२–०१
र												
रघुरामैया, श्री कोता	३३	५–३२	११	२–३०	७	१–३७	६	१–२४	२	०–२१	५६	११–२४
रघुनाथ सिंह, श्री	१७	२–३४	२	०–२५	३	०–२४	८	१–४५	—	—	३०	५–०८
रघुवीर सिंह, चौधरी	१	०–१४	—	—	—	—	—	—	—	—	१	०–१४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
रज़मी, श्री सैयदुल्ला खां	–	–	–	–	–	–	१	०–१६	–	–	१	०–१६
रणजीत सिंह, श्री	२	०–१६	१	०–१२	२	०–२३	२	०–२२	–	–	७	१–१३
रणवीर सिंह, चौधरी	११	१–०६	२	०–३६	१	०–१५	४	१–०३	–	–	१८	३–००
रणदमन सिंह, श्री	२	०–२	३	०–३३	–	–	२	०–२४	–	–	७	१–१७
राउत, श्री भोला	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
राघवाचारी, श्री	८६	१५–२८	६	०–५२	६	१–०७	११	३–०८	१	०–०६	११३	२०–४४
राघवैय्या, श्री पशुपति वेंकट	१७	३–४५	–	–	–	–	४	१–०६	–	–	२१	४–५१
राचय्या, श्री न०	२८	४–०४	३	०–४२	१	०–२१	६	१–५०	–	–	४१	६–५७
राज बहादुर, श्री	६	०–५६	–	–	१	०–२५	६	१–५४	–	–	१६	३–१८
राजभोज, श्री पा० ना०	२२	२–४१	६	१–३०	७	१–०७	१३	२–५४	–	–	५१	८–१२
राधा रमण, श्री	२२	४–५१	३	०–३८	२	०–१३	१०	२–२६	१	०–०६	३८	८–१७
राने, श्री शिवराम रांगो	८	०–४८	–	–	१	०–०६	–	–	–	–	६	०–५४
राम कृष्ण, श्री	–	–	–	–	–	–	२	०–१७	–	–	२	०–१७
रामचन्द्र, डा० दो०	२	०–१७	–	–	१	०–११	१	०–०६	–	–	४	०–०७

रामनारायण सिंह, बाबू	..	५—०२	—	—	·	०—०५	८	१—५१	—	—	३२	६—५८
रामदास, श्री	५	०—२२	२	०—३६	१	०—०६	५	१—०१	—		११	२—१३
रामसरण, श्री	-	—	—	—	—	—	३	०—४२	—		३	०—४०
रामशेषय्या, श्री	-	—	—	—	१	१	१	०—०२	—	-	१	०—०७
राम सुभग सिंह, डा०	६	१—०३	३	०—४२	६	१—१४	१२	२—१८	२	०—२५	२२	५—३२
रामस्वामी, श्री म० दो०	१	०—०२	—	—	—	—	२६	०—४१	—	-	२	०—५१
रामस्वामी, श्री सं० वें०	४८	१०—४३	१	०—०८	३	०—४३	८	१—५८	१	०—०५	६१	१३—३२
रामस्वामी, श्री पु०	१	०—१०	—	—	—	—	१	०—११	-	—	२	०—२१
राय, श्री विश्वनाथ	—	—	—	—		—	३	०—३२	-	—	३	०—३२
रायजी, श्रीमती जयश्री	४४	७—०८	१	०—०८	२—०	०—०८	६	१—२५	१	०—०७	५७	८—५६
राव, श्री कादियाला गोपाल	७	२—२७	२	०—३१	—	—	५	१—१४	—	—	१४	४—१२
राव, श्री कोंड् सुब्बा	२	०—२७	—	—	—	—	—	—	—	—	२	०—२७
राव, दीवान राघवेन्द्र राव श्रीनिवास	२	०—२०	२	०—२८	१	०—०४	४	०—४६	—	—	६	१—३६
राव, श्री पेंड्याल राघव	२	०—१८	—	—	—	—	२	०—२४	—	—	३	०—४२
राव, श्री पो० सुब्बा	४	०—४७	—	—	१	०—०६	६	१—०१	—	—	११	१—५४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
राव, श्री रॅ० शिवा	४	१–०३	२	०–२८	–	–	४	१–२०	–	–	१०	२–५१
राव, श्री कैनेटी मोहन	२	०–१२	–	–	–	–	–	–	–	–	२	०–१२
राव, श्री राजगोपाल	२	०–३०	–	–	–	–	२	०–२४	–	–	४	०–५४
राव, डा० रामा	२४	४–१६	१	०–१७	६	१–१६	१०	२–२६	१	०–११	४५	८–३५
राव, श्री त० व० विट्ठल	३२	६–०३	३	०–३१	३	०–३१	२५	५–१०	–	–	६३	१२–१५
राव, श्री रायसम शेषगिरि	१६	१–११	१	०–०६	–	–	४	०–४३	–	–	२१	२–००
रिचर्डसन, राइट रेवरेंड जान	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
रिशांग किशिंग, श्री	७	०–५६	३	१–०३	–	–	७	१–४३	–	–	१७	३–४५
रूपनारायण, श्री	–	–	–	–	–	–	२	०–३१	१	०–०५	३	०–३६
रे, श्री वीर किशोर	७	३–१३	१	०–४६	–	–	–	–	–	–	८	४–०२
रेड्डी, श्री रवि नारायण	१	०–१६	–	–	१	०–१८	–	–	–	–	२	०–२४
रेड्डी, श्री रामनारायण	–	–	१	०–२६	–	–	–	–	–	–	१	०–२६
रेड्डी, श्री वाई० ईश्वर	२	०–२५	१०	०–१२	–	–	३	०–४५	–	–	६	१–२२
रेड्डी, श्री के० जनार्दन	२	०–२३	–	–	–	–	१	०–१५	–	–	३	०–३८

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
व												
वर्मा, श्री बूलाकी राम	२	०–१७	–	–	–	–	१	०–०८	–	–	३	०–२५
वर्मा, श्री वी० वी०	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
वर्मा, श्री माणिक्य लाल	–	–	१	०–१७	–	–	–	–	–	–	१	०–१७
यर्मा, श्रीराम जी	१	०–०८	१	०–०७	–	–	८	१–२८	–	–	१०	०–४३
पल्लाथरास, श्री के० एम०	३२	९–४२	१	०–१५	१	०–१०	६	१–३१	–	–	४०	११–३८
याघमारे, श्री नारायण राव	–	–	१	०–१०	–	–	३	०–२९	–	–	४	०–३९
विद्यालंकार, श्री ए० एन०	१०	१–५८	४	१–०४	३	०–३५	१४	३–२०	–	–	३१	६–५७
विल्सन, श्री जे० एन०	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
विश्वनाथ प्रसाद, श्री	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
विश्वनाथ, श्री सी० सी०	२२	५–३०	–	–	–	–	२	०–२०	२	०–३८	२	०–२२
वीरस्वामी, श्री वी०	१४	२–३६	१	०–१७	२	०–१९	८	१–४३	१	०–०४	२६	४–५९
वेंकटरामन, श्री	६९	१२–३९	२	०–४८	५	१–१७	१२	३–१९	२	०–२७	९०	१८–३०
वेलायुधन, श्री	३१	५–४१	६	१–१६	४	०–४७	१६	२–५२	२	०–१४	५९	१०–५०
वैश्य, श्री मूलदास भूधरदास	४	०–४४	२	०–२८	१	०–०६	१	०–१६	–	–	८	१–३९

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
शाह, श्रीमती कमलेन्दुमति	२०	१–५१	५	०–२९	१	०–१०	१४	१–४०	–	–	४०	४–१०
शाह, श्री चिमनलाल चाकूभाई	५७	१३–०३	१	१–०९	३	०–२८	१	०–१२	–	–	६२	१४–५२
शाहनवाज खां, श्री	–	–	–	–	–	–	३	१–३३	–	–	३	१–३३
शिवनंजप्पा, श्री एम० के०	२	०–२३	१	०–१४	–	–	–	–	–	–	३	०–३७
शिव, डा० एम० वी० गंगाधर	४	०–३५	१	०–११	२	०–०९	१	०–१५	–	–	८	१–१०
शुक्ल, पंडित भगवती चरण	–	–	–	–	–	–	१	०–१०	–	–	१	०–१०
शोभाराम, श्री	२	०–२४	–	–	–	–	३	०–५३	–	–	५	१–१७
सक्सेना, श्री मोहन लाल	१४	२–३५	१	०–२४	–	–	१०	३–२०	१	०–१०	२६	६–१९
सक्सेना, श्री शिव्वन लाल	१४	२–००	२	०–२२	४	०–४६	१०	१–१०	–	–	३०	४–१८
सत्यवादी, डा० वीरेन्द्र कुमार	५	०–३१	३	०–३८	–	–	५	१–०२	–	–	१३	२–११
सतीश चन्द्र, श्री	–	–	–	–	३	१–१६	८	२–००	–	–	११	३–१६
सर्मा, श्री देवेन्द्र नाथ	९	१–२४	१	०–१७	–	–	२	०–४०	१	०–०८	१३	२–२९
सर्मा, श्री देवेश्वर	२	०–२८	१	०–४०	५	१–२१	९	१–४६	–	–	१७	४–१५
सहगल, सरदार अमरसिंह	२५	२–४०	१	०–२२	४	०–२७	१५	२–३९	२	०–१६	४७	६–२४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
सिंह, श्री त्रिभूवन नारायण	२०	४-१२	४	१-३४	१	०-०६	१५	२-३२	३	०-५४	४३	९-४९
सिंह, ठाकुर युगल किशोर	१०	१-१७	१	०-१०	२	०-३७	२	०-२३	१	०-१०	१६	२-३७
सिंह, श्री बाबूनाथ	—	—	१	०—०७	—	—	—	—	—	—	१	०—०७
सिंह, श्री बनारसी प्रसाद	१२	१—४४	—	—	—	—	३	०—५७	—	—	१५	२—४१
सिंह, श्री सत्य नारायण	९	१—०६	—	—	२	०—२३	१	०—२७	—	—	१२	१—५६
सिंह, श्री सत्येन्द्र नारायण	४	०—२६	—	—	१	०—१७	३	०—५२	—	—	८	१—३५
सिंहासन सिंह, श्री	३३	५—४७	१	०—०९	३	०—५१	७	१—३८	—	—	४४	८—२५
सिद्धनंजप्पा, श्री	३	०—२९	—	—	—	—	१	०—१९	—	—	४	०—४८
सिंहा, श्री अवधेश्वर प्रसाद	—	—	१	०—१५	—	—	३	०—२०	—	—	४	०—३५
सिन्हा, श्री नागेश्वर प्रसाद	२	०—१२	—	—	—	—	७	१—३३	—	—	९	१—४५
सिन्हा, श्री सा०	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
सिन्हा, श्री कैलाश पति	३	०—२७	—	—	१	०—१०	१	०—०७	—	—	५	०—४४
सिन्हा, श्री गजेन्द्र प्रसाद	१	०—१४	—	—	—	—	२	०—२०	—	—	३	०—३४
सिन्हा, श्रीमती तारकेश्वरी	१२	३-२४	१	०—१३	४	१—०५	११	३—१३	१	०—१५	२९	८—१०

सुन्दर लाल, श्री .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
सुब्रह्मण्यम्, श्री कन्दाला .	३	०—४४	—	—	—	—	१	०—१३	—	—	४	०—५७
सुब्रह्मण्यम्, श्री टेकूर .	११	२—०२	३	०—४३	—	—	७	१—१३	—	—	२१	३—५८
सुरेश चन्द्र, डा० .	२२	२—४६	१	०—०७	६	०—५६	११	१—४०	१	०—१०	४१	५—३९
सूर्य प्रसाद, श्री .	१	०—०७	—	—	१	०—०८	३	०—२१	—	—	५	०—३६
सेन, श्री राज चन्द्र .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
सेन, श्री फणि गोपाल .	—	—	१	०—११	—	—	१	०—१३	—	—	२	०—२४
सेन, श्रीमती सुषमा .	२६	२—४०	२	०—०७	१	०—०३	११	१—४०	—	—	४०	४—३०
सेवल, श्री अ० रा० .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
सैयद महमूद, डा० .	१	०—०४	१	०—१४	—	—	३	०—५५	—	—	५	१—१३
सोधिया, श्री खूब चन्द .	३४	४—३३	—	—	४	०—४७	२	०—३२	१	०—०७	४१	५—५९
सोमना, श्री न० .	१८	२—१६	—	—	१	०—०७	७	१—१९	—	—	२६	३—४२
सोमानी, श्री ग० ध० .	३१	७—१८	२	०—२७	८	२—४२	२०	५—२३	१	०—१८	६२	१६—०८
संगण्णा, श्री . .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
स्नातक, श्री नरदेव .	—	—	—	—	—	—	२	०—२१	—	—	२	०—२१

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
स्वामी, श्री शिवमूर्ति .	१२	१–५३	३	०–४७	५	१–२०	६	१–४३	—	—	२६	५–४३
स्वामीनाथन, श्रीमती अम्मू	४	०–२८	१	०–०५	—	—	५	०–४६	—	—	१०	१–१६
ह												
हंसदा, श्री बैंजमिन .	—	—	—	—	—	—	१	०–१२	—	—	१	०–१२
हजारिका, श्री जोगेन्द्र नाथ	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
हरि मोहन, डा० .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
हासदा, श्री सुबोध .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
हिफजर रहमान, श्री एम०	५	०–४६	३	०–३४	—	—	१	०–१५	—	—	६	१–३५
हुक्म सिंह, सरदार .	४२	६–४६	३	१–५०	६	२–२३	२४	६–३०	४	१–०३	७६	२१–३५
हेडा, श्री एच० सी० .	१४	४–२६	३	१–०१	२	०–१६	५	०–५८	—	—	२४	६–४४
हेमब्रोम, श्री लाल .	४	०–४२	१	०–०८	—	—	२	०–३१	—	—	७	१–२१
हेमराज, श्री .	५	१–०२	१	०–२२	—	—	७	१–१५	—	—	१३	२–२६
हैदर हुसैन, चौधरी .	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—

तेरह

राज्य-सभा के सत्रों के आरम्भ तथा समाप्ति की तिथियों का विवरण

[पंद्रहवें सत्र तक]

सत्र	प्रारम्भ की तिथि	समाप्ति की तिथि	जितने दिन सत्र रहा	कार्य के कुल दिन	वर्ष में कुल जितने दिन सभा की बैठक हुई
प्रथम	१३- ५-१९५२	१४- ८-१९५२	५१	३९	१९५२—६१ दिन
द्वितीय	२४-११-१९५२	२२-१२-१९५२	२८	२२	
तृतीय	११- २-१९५३	१६- ५-१९५३	७५	५१	
चतुर्थ	२४- ८-१९५३	२३- ९-१९५३	३२	२४	१९५३—१०० दिन
पंचम	२३-११-१९५३	२४-१२-१९५३	३१	२५	
षष्ट	१५- २-१९५४	१९- ५-१९५४	६३	५०	
सप्तम	२३- ८-१९५४	३०- ९-१९५४	३९	२९	१९५४—१०३ दिन
अष्टम	२५-११-१९५४	२४-१२-१९५४	३०	२४	
नवम	२१- २-१९५५	४- ५-१९५५	७३	५१	
दशम	१६- ८-१९५५	१-१०-१९५५	४७	३५	१९५५-११२ दिन
ग्यारहवां	२१-११-१९५५	२४-१२-१९५५	३४	२६	
बारहवां	१५- २-१९५६	१६- ३-१९५६	३१	२३	
तेरहवां	२३- ४-१९५६	३१- ५-१९५६	३९	२९	१९५६—११४ दिन
चौदहवां	३०- ७-१९५६	१३- ९-१९५६	४६	३५	
पंद्रहवां	१९-११-१९५६	२२-१२-१९५६	३४	२७	

1057LS—29A

प्रथम संसद् की महत्वपूर्ण घटनाओं का तिथिक्रम

(राज्य-सभा)

प्रथम सत्र

१३ मई, १९५२	प्रथम सत्र आरम्भ हुआ। सभापति डा० राधाकृष्णन के अनुरोध पर, सदस्यगण राज्य-सभा के सदस्यों के रूप में अपनी पहली बैठक के पवित्र अवसर के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए दो मिनट तक प्रार्थनामय मौन धारण किये खड़े रहे।
१६ मई, १९५२	राष्ट्रपति ने संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में अभिभाषण दिया।
३१ मई, १९५२	श्री एस० वी० कृष्णमूर्त्ति राव उप-सभापति चुने गये।
२८ जुलाई, १९५२	विशेष विवाह विधेयक, १९५२ पुरःस्थापित किया गया।
७ अगस्त, १९५२	विशेष विवाह विधेयक १९५२ को राय जानने के लिये परिचालित करने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
१४ अगस्त, १९५२	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

द्वितीय सत्र

२४ नवम्बर, १९५२	द्वितीय सत्र आरम्भ हुआ।
११ दिसम्बर, १९५२	हिन्दू कोड बिल, जिस पर बहुत चर्चा और विवाद हुआ था, की पहली किस्त—हिन्दू विवाह तथा विवाह-विच्छेद विधेयक, १९५२ को पुरःस्थापित किया गया।
१२ दिसम्बर, १९५२	खाद्य-स्थिति पर चर्चा की गई और सरकार की सामान्य नियंत्रण सम्बन्धी नीति का अनुमोदन किया गया।
१८ दिसम्बर, १९५२	योजना आयोग द्वारा तैयार की गई प्रथम पंच वर्षीय योजना के सिद्धान्तों, उद्देश्यों और कार्यक्रम के सामान्य अनुमोदन का संकल्प स्वीकृत किया गया।
२० दिसम्बर, १९५२	राय जानने के लिए हिन्दू विवाह तथा विवाह विच्छेद विधेयक, १९५२ को परिचालित करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
२२ दिसम्बर, १९५२	लोक-सभा द्वारा पारित रूप में परीसीमन आयोग विधेयक, १९५२ को पारित किया गया।
२२ दिसम्बर, १९५२	सभा अनिश्चित तिथि के किए स्थगित हुई।

तृतीय सत्र

११ फरवरी, १९५३	राष्ट्रपति ने संसद् की दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक में अभिभाषण दिया।
२६ मार्च, १९५३	संविधान के अनुच्छेद ३५६ के अधीन, राष्ट्रपति द्वारा ४ मार्च १९५६ को जारी की गयी उद्घोषणा का अनुमोदन किया गया, जिसके अधीन राष्ट्रपति ने पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य संघ सरकार के सभी कृत्यों को अपने हाथ में लिया था।

६ अप्रैल, १६५३	हिन्दू कोड बिल का दूसरा भाग, अर्थात् हिन्दू अवयस्‍ पुरःस्थापित किया गया।
२० अप्रैल, १६५३	राय जानने के लिए हिंदू अवयस्कता तथा संरक्षकता विधे करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
१ मई, १६५३	लोक–सभा की ३०–४–५३ की बैठक में पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वा भाषण के सम्बन्ध में उठाई गई बातों पर श्री बी० सी० घोष ने प्रश्न उठाना चाहा। यह प्रश्न उठाने की अनुमति नहीं दी गई। ए किया गया जिसमें सदन के नेता को निदेश दिया गया कि जब लोक-स बातों पर चर्चा हो उस समय उन्हें सभा में उपस्थित नहीं रहना चाहिये।
१४ मई, १६५३	देश में विमान सेवाओं का राष्ट्रीयकरण करने वाला विमान निगम विधेयक, १६५३ किया गया।
१६ मई, १६५३	सभाओं की संयुक्त समिति को विशेष विवाह विधेयक, १६५२ सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

चतुर्थ सत्र

२४ अगस्त, १६५३	चतुर्थ सत्र आरम्भ हुआ।
१२ सितम्बर, १६५३	लोक–सभा द्वारा पारित रूप में, आंध्र राज्य विधेयक १६५३ पारित किया गया।
१५ सितम्बर, १६५३	पेप्सू के संबंध में, राष्ट्रपति द्वारा संविधान के अनुच्छेद ३५६ के अधीन जारी की गयी उद्घोषणा पारित की गयी।
१६ सितम्बर, १६५३	सभाओं की संयुक्त समिति को, विशेष विवाह विधेयक, १६५२ सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
२२ सितम्बर, १६५३	लोक–सभा द्वारा पारित रूप में, सम्पदा शुल्क विधेयक, १६५३ पारित किया गया।
२३ सितम्बर, १६५३	अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के संबंध में प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया और पारित हुआ।
२३ सितम्बर, १६५३	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

पंचम सत्र

२३ नवम्बर, १६५३	पंचम सत्र आरम्भ हुआ।
२२ दिसम्बर, १६५३	डा० काटजू ने भारत में राज्यों के पुनर्गठन के लिए एक आयोग स्थापित करने के सम्बन्ध में वक्तव्य दिया।
२३ दिसम्बर, १६५३	सभा ने निवारक निरोध अधिनियम, १६५० पर विचार किया और इस निश्चय पर पहुंची कि इस अधिनियम को शेष उसकी कालावधि के लिए जारी रखना पूर्णतः उचित है।
२४ दिसम्बर, १६५३	अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर विचार किया गया, और उस सम्बन्ध में भारत सरकार की नीति का अनुमोदन किया गया।
	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

..रवरी, १९५४	षष्ठ सत्र आरम्भ हुआ। राष्ट्रपति ने संसद् की दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक में अभिभाषण दिया।
	सभापति ने सभा के वर्तमान सदस्य श्री पूरणमल लोहारी के निधन का उल्लेख किया। सभापति और प्रधान मंत्री ने ३ फरवरी, १९५४ को कुम्भ मेला में हुई दुःखद घटना का भी उल्लेख किया।
१६ फरवरी, १९५४	औषधि तथा जादुई चिकित्सा (आपत्तिजनक विज्ञापन) विधेयक, १९५३ पारित किया गया।
१९ फरवरी, १९५४	आय-व्ययक (रेलवे) १९५४-५५ सभा-पटल पर रखा गया। राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
२३ फरवरी, १९५४	आय-व्ययक (रेलवे) पर चर्चा आरम्भ की गई।
१ मार्च, १९५४	आय-व्ययक (रलवे) पर चर्चा समाप्त हुई।
२ मार्च, १९५४	आय-व्ययक (सामान्य) १९५४-५५ पर चर्चा आरम्भ की गई।
८ मार्च, १९५४	आय-व्ययक (सामान्य) १९५४-५५ पर चर्चा समाप्त हुई।
१६ मार्च. १९५४	हिन्दू विवाह तथा विवाह-विच्छेद विधेयक, १९५२ को सभाओं की संयुक्त बैठक को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
१८ मार्च, १९५४	लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, प्रेस (आपत्तिजनक विषय) संशोधन विधेयक, १९५३ पारित किया गया।
२३ अप्रैल, १९५४	लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, एक गैर-सरकारी सदस्य के विधेयक—मुस्लिम वक्फ विधेयक, १९५२ को पारित किया गया।
२८ अप्रैल, १९५४	बाल विधेयक, १९५३ पारित किया गया।
८ मई, १९५४	विशेष विवाह विधेयक, १९५२ पारित किया गया।
१५ मई, १९५४	सभापति ने राज्य-सभा को विशेषाधिकार समिति से अनुरोध किया कि वह लोक-सभा की विशेषाधिकार समिति से परामर्श करके परस्पर सहमति द्वारा ऐसी प्रक्रिया का निर्माण करे जिस का पालन उस समय किया जाए जब अन्य सभा के सदस्य के विरुद्ध विशेषाधिकार के उल्लंघन के सम्बन्ध में कोई शिकायत मिले।
१८ मई, १९५४	वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के सम्बन्ध में सरकार की नीति का अनुमोदन किया गया।
१९ मई, १९५४	लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, संसद्-सदस्यों के वेतन तथा भत्ते विधेयक, १९५४ पारित किया गया।
	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

सप्तम सत्र

२३ अगस्त, १९५४	सप्तम सत्र आरम्भ हुआ।
	सभापति ने राज्य-सभा के सदस्य श्री सुरेश चन्द्र मजुमदार के निधन का उल्लेख किया।
	सभापति ने घोषणा की कि राज्य-परिषद् को "राज्य-सभा" कहा जाएगा और उसके सचिवालय को "राज्य-सभा सचिवालय" कहा जाएगा।
	लोक-सभा और राज्य-सभा की विशेषाधिकार समितियों की संयुक्त बैठक का प्रतिवेदन सभा में प्रस्तुत किया गया।

हिन्दू अवयस्कता और संरक्षकता विधेयक, १९५३ को सभाओं की संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया।

२७ अगस्त, १९५४ सभा ने अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के सम्बन्ध में सरकार की नीति का अनुमोदन किया।

२ सितम्बर, १९५४ श्री पी० सुन्दरय्या द्वारा किये गये प्रस्ताव पर, सभा ने बैंक विवाद के श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण के निर्णय में रूपभेद करने वाले सरकारी आदेश पर चर्चा की।

७ सितम्बर, १९५४ सभा ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त के प्रतिवेदन पर वाद-विवाद समाप्त किया।

१४ सितम्बर, १९५४ लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, खाद्य अपमिश्रण निवारण विधेयक, १९५४ को पारित किया गया।

२० सितम्बर, १९५४ बाढ़ की स्थिति के सम्बन्ध में, सरकार के कार्यक्रम और कार्यों का अनुमोदन किया गया।

२३ सितम्बर, १९५४ लोक-सभा द्वारा विशेष विवाद विधेयक, १९५४ में किये गये, संशोधन से सहमति प्रकट की गई।

लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, चंद्रनगर (विलय) विधेयक, १९५४ को पारित किया गया।

२५ सितम्बर, १९५४ लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर तथा पुनर्वास) विधेयक, १९५४ को पारित किया गया।

२८ सितम्बर, १९५४ लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, संविधान (तृतीय संशोधन) विधेयक, १९५४ पारित किया गया।

२९ सितम्बर, १९५४ श्री अलगेशन ने हैदराबाद-काजीपेट में हुई रेल-दुर्घटना के बारे में वक्तव्य दिया।

३० सितम्बर, १९५४ हैदराबाद-काजीपेट सेक्टर में हुई रेल-दुर्घटना के बारे में श्री ति० त० कृष्णमाचारी ने वक्तव्य दिया।

सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

अष्टम सत्र

२५ नवम्बर, १९५४ अष्टम सत्र आरम्भ हुआ।

प्रधान मंत्री ने दिवंगत श्री रफी अहमद किदवई को श्रद्धांजलि भेंट की।

शेष दिन के लिए सभा स्थगित हुई।

२६ नवम्बर, १९५४ श्रीमती लीलावती मुंशी ने संकल्प प्रस्तुत किया कि अश्लील चलचित्रों के प्रदर्शन का निषेध किया जाए चाहे वे विदेशी हों अथवा भारतीय।

३० नवम्बर, १९५४ राष्ट्रपति के उस उद्घोषणा सम्बन्धी प्रस्ताव को स्वीकृत किया गया, जिसके अधीन उन्होंने आंध्र सरकार के सब कृत्यों को अपने हाथ में ले लिया।

१५ दिसम्बर, १९५४ सभा ने श्री जे० पी० श्रीवास्तव की याद में एक मिनट तक सम्मान-सूचक मौन धारण किया।

२२ दिसम्बर, १९५४ उत्तराधिकार विधेयक, १९५४ पुरःस्थापित किया गया।

संघ लोक सेवा आयोग के प्रतिवेदनों पर चर्चा करने के लिए श्री आर० पी० सिन्हा का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया।

२३ दिसम्बर, १९५४ श्रीमती लक्ष्मी एन० मेनन ने भारत के प्रधान मंत्री और युगोस्लाविया के राष्ट्रपति का संयुक्त वक्तव्य सभा को पढ़ कर सुनाया।

१९५३-५४ की पंचवर्षीय योजना की प्रगति पर चर्चा के लिए, श्री नंदा के प्रस्ताव पर विचार आरम्भ किया गया।

सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

1057 LS—30

नवम सत्र

२१ फरवरी, १९५५	नवम सत्र आरम्भ हुआ।
२८ फरवरी, १९५५	रेलवे आय-व्ययक पर चर्चा।
२ मार्च, १९५५	श्रम जीवी पत्रकार (औद्योगिक विवाद) विधेयक, १९५५ पारित किया गया।
४ मार्च, १९५५	श्री गोपी कृष्ण विजयवर्गीय ने महाकवि कालिदास की जयंती मनाने के लिए संकल्प प्रस्तुत किया।
११ मार्च, १९५५	सामान्य आय-व्ययक पर चर्चा समाप्त हुई।
१४ मार्च, १९५५	सभा ने नेपाल के स्वर्गीय राजा की स्मृति में एक मिनट मौन रखा।
२२ मार्च, १९५५	हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक, १९५४ को सभाओं की संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया—चर्चा ४ दिन होती रही।
३० मार्च, १९५५	हिन्दू अवयस्कता तथा संरक्षकता विधेयक, १९५३ पर विचार आरम्भ किया गया।
३ मई, १९५५	नदी-बोर्ड विधेयक और अन्तर्राज्यिक जल-विवाद विधेयक, १९५५ पुरःस्थापित किये गये।
४ मई, १९५५	प्रधान मंत्री ने गोआ सत्याग्रहियों के अभिकथित देश-निकाले के बारे में वक्तव्य दिया। कशाघात उन्मूलन विधेयक, १९५५ पुरःस्थापित किया गया।
१९ मई, १९५५	सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

दशम सत्र

१६ अगस्त, १९५५	दशम सत्र आरम्भ हुआ।
	सभा के नेता श्री गोविन्द वल्लभ पंत और राज्य सभा के सभापति ने, १५ अगस्त १९५५ को गोआ की सीमा पर पुर्तगाली सिपाहियों द्वारा निहत्थे सत्याग्रहियों को गोली से मार गिराने की घटना का उल्लेख किया। सभा शोक प्रकट करने के लिए दो मिनट मौन खड़ी रही और तत्पश्चात् आध घंटे के लिए स्थगित हुई।
	विश्वविद्यालय अनुदान आयोग विधेयक, १९५४ पर सभाओं की समिति का प्रतिवेदन सभा-पटल पर रखा गया।
२५ अगस्त, १९५५	कशाघात उन्मूलन विधेयक, १९५५ पारित किया गया।
५ सितम्बर, १९५५	अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त के वर्ष १९५४ के प्रतवेदन पर चर्चा की गई।
६ सितम्बर, १९५५	अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
१२ सितम्बर, १९५५	अन्तर्राज्यिक जल-विवाद विधेयक, १९५५ को सभाओं की संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।
१४ सितम्बर, १९५५	प्रेस आयोग के प्रतिवेदन सम्बन्धी प्रस्ताव को संशोधित रूप में स्वीकार किया गया (७ अप्रैल, १९५५ को प्रस्तुत किया गया प्रस्ताव)।
१५ सितम्बर, १९५५	नदी-बोर्ड विधेयक, १९५५ को सभाओं की संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
१५ सितम्बर, १९५५	लोक-सभा द्वारा पारित विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर तथा पुनर्वास) नियम, १९५५ में संशोधन के प्रस्तावों पर राज्य-सभा द्वारा सहमति का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

२८ सितम्बर, १९५५ लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, समवाय विधेयक, १९५५ को राज्य सभा द्वारा और आगे संशोधित रूप में स्वीकार किया गया।

३० सितम्बर, १९५५ अखिल भारतीय सेवा (अनुशासन तथा अपील), नियम, १९५५ में श्री एच० सी० माथुर और श्री गोपी कृष्ण विजयवर्गीय के संशोधक प्रस्तुत किये गये और अस्वीकृत हुए।

१ अक्तूबर, १९५५ प्रतिलिप्यधिकार विधेयक, १९५५ पुरःस्थापित किया गया।

हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक, १९५४ पर दोनों सदनों की संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विचार आरम्भ किया गया।

सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

ग्यारहवां सत्र

२१ नवम्बर, १९५५ ग्यारहवां सत्र आरम्भ हुआ।

३० नवम्बर, १९५५ हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक, १९५५ स्वीकृत हुआ।

१ दिसम्बर, १९५५ श्रम-जीवी पत्रकार (सेवा की शर्तें) और विधि उपबंध विधेयक, १९५५ स्वीकृत हुआ।

७ दिसम्बर, १९५५ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग विधेयक, १९५५ को लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, राज्य सभा द्वारा और आगे संशोधित रूप में पारित किया गया।

९ दिसम्बर, १९५५ नदी-बोर्ड विधेयक, १९५५ को दोनों सदनों की संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में, पारित किया गया।

१२ दिसम्बर, १९५५ अन्तर्राज्यिक जल-विवाद विधेयक, १९५५ को, दोनों सदनों की संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में, पारित किया गया।

१४ दिसम्बर, १९५५ नागरिकता विधेयक, १९५५ को लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, पारित किया गया।

१५ दिसम्बर, १९५५ संविधान (पांचवां संशोधन) विधेयक, १९५५ को, लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, पारित किया गया।

१९ दिसम्बर, १९५५
२० दिसम्बर, १९५५
२१ दिसम्बर, १९५५
२२ दिसम्बर, १९५५
२३ दिसम्बर, १९५५
२४ दिसम्बर, १९५५ } राज्य-पुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन सम्बन्धी प्रस्ताव पर चर्चा की गई।

२४ दिसम्बर, १९५५ सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

बारहवां सत्र

१५ फरवरी, १९५६ बारहवां सत्र आरम्भ हुआ।

राष्ट्रपति ने दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में अभिभाषण दिया।

१६ फरवरी, १९५६ प्रतिलिप्यधिकार विधेयक, १९५५ को दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

२३ फरवरी, १९५६ आय-व्ययक (रेलवे) १९५६-५७ सभा-पटल पर रखा गया।

२९ फरवरी, १९५६ आय-व्ययक (सामान्य) १९५६-५७ सभा पटल पर रखा गया।

१६ मार्च, १९५६ १ अप्रैल .१९५३ से ३१ मार्च, १९५४ और १ अप्रैल, १९५४ से ३१ मार्च, १९५५ के बीच की अवधि के सम्बन्ध में संघ लोक सेवा आयोग के प्रतिवेदनों पर चर्चा की गई।

सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

तेरहवां सत्र

२३ अप्रैल, १९५६	तेरहवां सत्र आरम्भ हुआ।
	संविधान के अनुच्छेद ३५६ के अधीन, त्रावनकोर–कोचीन के वारें में राष्ट्रपति द्वारा निकाली गयी उद्घोषणा पर चर्चा की गयी।
२५ अप्रैल, १९५६	उप-सभापति का निर्वाचन–श्री एस० वी० कृष्णमूर्त्ति राव—पुनः निर्वाचित हुये।
२ मई, १९५६	राज्य-पुनर्गठन विधेयक, १९५६ को दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
१५ मई, १९५६	हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक, १९५५ में लोक-सभा द्वारा किये गये संशोधन से सहमति प्रकट की गई।
	द्वितीय पंच वर्षीय योजना पेश की गई।
१६ मई, १९५६	संविधान (दसवां संशोधन) विधेयक, १९५६ को दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
१६ मई, १९५६ १७ मई, १९५६	त्रावनकोर–कोचीन आय-व्ययक, १९५६ पर सामान्य चर्चा।
२६ मई, १९५६	द्वितीय पंचवर्षीय योजना संबंधी संकल्प पर चर्चा की गयी। चर्चा समाप्त नहीं हुई और अगले सत्र के लिए स्थगित कर दी गयी।
३० मई, १९५६	जीवन बीमा निगम विधेयक, १९५६, लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, स्वीकृत हुआ।
३१ मई, १९५६	३० सितम्बर, १९५४ से ३१ मार्च, १९५६ तक की अवधि के लिए, निवारक निरोध अधिनियम, १९५० के संचालन संबंधी सांख्यिकीय जानकारी के वारे में प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।
३१ मई, १९५६	संविधान (छठा संशोधन) विधेयक, १९५६, लोक-सभा द्वारा पारित रूप में, स्वीकृत हुआ। सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

चौदहवां सत्र

३० जुलाई, १९५६	चौदहवां सत्र आरम्भ हुआ।
३१ जुलाई, १९५६	बिहार तथा पश्चिमी बंगाल (राज्य–क्षेत्रों का हस्तान्तरण) विधेयक एक संयुक्त समिति को सौंपा गया।
२ अगस्त, १९५६	चिकित्सा परिषद् विधेयक पारित किया गया।
८ अगस्त, १९५६	सभा के सदस्य, पश्चिमी बंगाल के राज्यपाल श्री एस० सी० मुकर्जी की याद में दो मिनट तक खड़े रहे।
१० अगस्त, १९५६	दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, १९५६—लोक–सभा द्वारा पारित एक गैर–सरकारी सदस्य का विधेयक—पारित किया गया।
११ अगस्त, १९५६	समाचार पत्र (मूल्य तथा पृष्ठ) विधेयक पारित किया गया।
१६ अगस्त, १९५६	राज्य–पुनर्गठन आयोग विधेयक, १९५६ विचार के लिए रखा गया।
२३ अगस्त, १९५६	हिन्दू दत्तक–ग्रहण तथा भरण–पोषण विधेयक, १९५६ पुरःस्थापित किया गया।
२४ अगस्त, १९५६	गैर-सरकारी सदस्य का विधेयक—डा० रघुवीर सिंह की प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व संबंधी स्थान व अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) द्वितीय संशोधन विधेयक, १९५६—पारित किया गया।

२७ अगस्त, १६५६ — बिहार तथा पश्चिमी बंगाल राज्य क्षेत्रों का हस्तान्तरण विधेयक पर चर्चा आरंभ हुई।

४ सितम्बर, १६५६ — त्रावनकोर-कोचीन के बारे में राष्ट्रपति की उद्घोषणा पर चर्चा की गयी।

५ सितम्बर, १६५६ — पंच वर्षीय योजना पर चर्चा।

११ सितम्बर, १६५६ — संविधान (सप्तम संशोधन) विधेयक, १६५६ पारित किया गया।

१२ सितम्बर, १६५६ — डा० एपिलबी के प्रतिवेदन पर चर्चा की गई।

१३ सितम्बर, १६५६ — श्री कृष्ण मेनन ने स्वेज नहर की समस्या सम्बन्धी सब से हाल की घटनाओं के बारे में प्रधान मंत्री का वक्तव्य पढ़ कर सुनाया।

१३ सितम्बर, १६५६ — सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

पंद्रहवां सत्र

६ नवम्बर, १६५६ — पंद्रहवां सत्र आरम्भ हुआ।

२३ नवम्बर, १६५६ — श्रीमती सावित्री देवी निगम ने जेल प्रशासन और भूतपूर्व बन्दियों के पुनर्वास सम्बन्धी समस्याओं की जांच के लिए एक समिति नियुक्त करने के हेतु संकल्प प्रस्तुत किया।

२६ नवम्बर, १६५६ — सभा के नेता ने राज्य-सभा के सभापति की पत्नी श्रीमती शिवकामम्मा राधाकृष्णन के निधन का उल्लेख किया।

सभा सम्मान प्रकट करने के हेतु एक मिनट मौन खड़ी रही।

२८ नवम्बर, १६५६ — हिन्दू दत्तक-ग्रहण तथा संधारण विधेयक, १६५६ पर, प्रवर समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में, चर्चा आरम्भ की गई (हिन्दू विधि सुधार सम्बन्धी विधान के इस अन्तिम खण्ड में बहुत रूचि दिखाई गई और काफी वाद-विवाद हुआ)।

३० नवम्बर, १६५६ — डा० श्रीमती सीता परमानन्द का हिन्दू विवाह (संशोधन) विधेयक, १६५६ पारित किया गया। अनाथालय तथा विधुर निकेतन विधेयक, १६५६ को जनता की राय जानने के लिये परिचालित करने का श्री कैलाश विहारी लाल का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

आरियालूर रेल दुर्घटना पर चर्चा की गई।

३ दिसम्बर, १६५६ — अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर चर्चा के लिए गैर-सरकारी सदस्य का प्रस्ताव।

४ दिसम्बर, १६५६ — अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

६ दिसम्बर, १६५६ — डा० अम्बेदकर का निधन। सभा शेष दिन के लिए स्थगित हुई।

७ दिसम्बर, १६५६ — राष्ट्रमंडल और भारत के उसके सदस्य बने रहने के बारे में, श्री एस० एन० मजुमदार के संकल्प पर चर्चा आरम्भ की गई।

११ दिसम्बर, १६५६ — प्रेस परिषद् विधेयक पारित किया गया। (यह भारत के प्रेस के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है)।

१४ दिसम्बर, १६५६ — लोक-सभा द्वारा एक गैर-सरकारी सदस्य का विधेयक पारित—स्त्री तथा बाल संस्था विधेयक, १६५६।

१५ दिसम्बर, १६५६ — गंदी बस्तियों के क्षेत्र (सुधार तथा हटाना) विधेयक, १६५६ पारित किया गया।

२२ दिसम्बर, १६५६ — सभा अनिश्चित तिथि के लिए स्थगित हुई।

सोलह

मई १९५२ से १९५६ तक की अवधि में प्रस्तुत हुए गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों का विवरण

(राज्य सभा)

क्रमांक	नाम	प्रभारी सदस्य का नाम	वाद-विवाद की तिथियां	टिप्पण
१	कारखाना (संशोधन) विधेयक, १९५२	श्री स० गुरुस्वामी	८-१२-५२ और ४-९-५३	वापिस लिया गया
२	संविधान (तृतीय संशोधन) विधेयक, १९५३	श्री सत्य प्रिय बैनर्जी	१०-४-५३, ४-९-५३ और ४-१२-५३	अस्वीकृत हुआ
३	पशु अत्याचार निवारक विधेयक, १९५३	श्रीमती रुकमणी देवी अरुणडेल	१०-४-५३	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।
४	बाटों तथा मापों के प्रमाप विधेयक, १९५६	श्री किशन चन्द	४-९-५३ और ४-१२-५३	अस्वीकृत हुआ
५	भारतीय सिक्का (संशोधन) विधेयक, १९५३	श्री किशन चन्द	४-९-५३, ४-१२-५३ और ५-३-५४	अस्वीकृत हुआ
६	निःसन्तान हिन्दू विधवा का सम्पत्ति पर अधिकार ।	डा० राधा कुमद मुकर्जी	४-९-५३ और ५-३-५४	वापिस लिया गया

१	२	३	४	५
७	उच्च शिक्षा का स्तर समन्वय विधेयक, १९५३ ।	श्री किशन चन्द .	४-९-५३ और ४-१२-५३	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।
८	भारतीय अनैतिक पण्य तथा वेश्यागृह दमन विधेयक ।	डा० श्रीमती सीता परमानन्द	४-९-५३	—तदेव—
९	महिला तथा बाल संस्था लाइसेंस विधेयक .	डा० श्रीमती सीता परमानन्द	४-९-५३ और ४-१२-५३	संसद् के विधानमंडलीय अधिकारों के अन्तर्गत न होने के कारण अनियमित घोषित हुआ ।
१०	भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, १९५३ ।	श्री के० रामा राव	४-१२-५३ और ५-३-५४	वापिस लिया गया
११	पशु अत्याचार निवारक विधेयक, १९५३ .	श्रीमती रुकमणी देवी अरुणडेल	४-१२-५३ और ५-३-५४	—तदेव—
१२	बेरोजगारी सहायता विधेयक, १९५३	श्री पी० सुन्दरैया	४-१२-५३	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।
१३	महिला तथा बाल संस्था लाइसस विधेयक .	डा० श्रीमती सीता परमानन्द	२३-४-५४ और २-९-५४	वापिस लिया गया
१४	अनाथालय और विधवा आश्रम विधेयक, १९५४ ।	श्री कैलाश विहारी लाल	३-१२-५४	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।

१५	लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) विधेयक, १९५४।	श्री पी० स० राजगोपाल नायडू .	[illegible]-१२-५४ और १५-३-५५	[illegible] न लिया गया
१६	संविधान (चतुर्थ संशोधन) विधयक, १९५४	श्री सत्य प्रिय बैनर्जी . .	३-१२-५४ और १७-१२-५४	विधेयक पर राय जानने का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ ।
१७	प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान व अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) द्वितीय संशोधन ।	डा० रघुवीर सिन्हा .	३-१२-५४, १७-१२-५४ और २४-८-५६	पारित हुआ । नाम बदल कर प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारक तथा पुरातत्व सम्बन्धी स्थान व अवशेष (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) संशोधन विधेयक, १९५६ रखा गया ।
१८	भारतीय श्रमिक संघ (संशोधन) विधेयक .	श्री टी० बी० कमलास्वामी	१७-१२-५४ और ११-३-५५	अस्वीकृत हुआ
१९	अनाथालय और विधवा आश्रम विधेयक, १९५६।	श्री कैलाश बिहारी लाल .	११-३-५५ और २५-३-५५	वापिस लिया गया
२०	बीदा (संशोधन) विधेयक, १९५५ .	श्री बी० सी० घोष .	२५-३-५५ और २६-८-५५	वापिस लिया गया
२१	संविधान (पंचम संशोधन) विधेयक, १९५५	श्री सत्य प्रिय बैनर्जी .	२६-८-५५ और ९-१२-५५	अस्वीकृत हुआ
२२	अधिकृत लेखापाल (द्वितीय संशोधन) विधेयक, १९५५ ।	श्री वी० के० भागे . .	९-१२-५५	प्रभारी सदस्य की राज्य-सभा से सदस्यता समाप्त होने पर व्यपगत हुआ ।
२३	ऐतिहासिक स्मारक (राष्ट्रीय महत्व की घोषणा) विधेयक, १९५५ ।	डा० रघुवीर सिन्हा .	९-१२-५५	लम्बित

1057 LS—31

१	२	३	४	५
२४	राष्ट्रीय महत्व के ऐतिहासिक स्मारक (रक्षण) विधेयक १९५५ ।	डा० रघुवीर सिंहा	८-१२-५५	लम्बित
२५	मोटर गाड़ी (संशोधन) विधयक १९५६ .	श्री ऐस० एन० मजूमदार .	९-३-५६	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।
२६	कर्मचारी भविष्य निधि (संशोधन) विधेयक १९५६ ।	—तदेव—	९-३-५६ और २४-८-५६	अस्वीकृत
२७	कारखाना (संशोधन) विधेयक १९५६	—तदेव—	११-५-५६	संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की ।
२८	अनाथालय और विधवा आश्रम विधेयक १९५६	श्री कैलाश विहारी लाल .	११-५-५६ और १५-१२-५६	राय जानने के लिये परिचालित
२९	अधिकृत लेखा पाल (संशोधन) विधेयक १९५६ ।	श्री वी० के० धागे	१० ८-५६	लम्बित
३०	विशेष विवाह (संशोधन) विधेयक १९५६	डा० श्रीमती सीता परमानन्द	२४-८-५६	—तदेव—
३१	हिन्दू विवाह (संशोधन) विधेयक १९५६ .	—तदेव—	२४-८-५६ और ३०-११-५६	पारित
३२	दंड विधि (संशोधन) विधेयक, १९५६ .	जनाव एम० मुहम्मद इस्माईल साहिव	१४-१२-५६	लम्बित

सत्रह

चौदहवें सत्र के अन्त तक राज्य सभा में मंत्रियों द्वारा दिये गये महत्वपूर्ण वक्तव्य

(मंत्रालय वार)

वक्तव्य देने वाले मंत्री का पद	सत्र का नाम	जिस तिथि को वक्तव्य दिया गया	वक्तव्य का विषय
१	२		४
	वैदेशिक कार्य मंत्रालय		
१. प्रधान मंत्री	तीसरा	१५-५-१९५३	विदेशी मामले
२. प्रधान मंत्री	छठा	१९-५-१९५४	विन नियंत्रण का पुनर्गठन
३. प्रधान मंत्री . . .	छठा	१६-३-१९५४	[illegible] की स्थिति
४. संसदीय सचिव .	छठा	८-५-१९५४	चन्द्रनगर जांच की सिफारिश
५. प्रधान मंत्री	नवम्	४-५-१९५५	गोआ सत्याग्रहियों का निर्वासन
६. बिना विभाग के मंत्री	चौदहवां	८-८-१९५६	स्वेज नहर का मामला
७. प्रधान मंत्री	—तदेव—	११-९-१९५६	नेताजी जांच समिति की रिपोर्ट
८. बिना विभाग के मंत्री	—तदेव—	१३-९-१९५६	स्वेज नहर का मामला
९. प्रधान मंत्री	पन्द्रहवां	१३-१२-१९५६	हंगरी की स्थिति

१	२	३	४
	वित्त मंत्रालय		
१०. वित्त उपमंत्री	छटा	१८-२-१९५४	सिडनी में हुआ जनवरी १९५४ में राष्ट्रमंडलीय वित्त मंत्रियों का सम्मेलन ।
११. वित्त उपमंत्री	छटा	२१-२-१९५४	भारतीय विकास तथा वित्त निगम
१२. प्रधान मंत्री	छटा	१९-५-१९५४	वित्त नियंत्रण का पुनरीक्षण
१३. राजस्व तथा सैनिक व्यय मंत्री	आठवां	२०-१२-१९५४	भारत के राज्य बैंक की स्थापना
१४. —तदेव—	—तदेव—	२१-१२-१९५४	लन्दन को दिये गये जीपों के आर्डर सम्बन्धी लोक लेखा समिति के अपनी नवम रिपोर्ट में प्रकट किये गये विचार ।
१५. —तदेव—	नवम	३-५-१९५५	रूई के कपड़े पर आयात शुल्क में कमी ।
१६. —तदेव—	—तदेव—	२४-२-१९५५	भारत का औद्योगिक ऋण विनियोजन निगम
१७. सदन के नेता	बारहवां	१२-३-१९५६	बजट का समय से पूर्व ज्ञात हो जाना ।
१८. वित्त उपमंत्री	चौदहवां	३०-८-१९५६	जीवन बीमा निगम ।
१९. राजस्व तथा सैनिक व्यय मंत्री	पन्द्रहवां	१८-१२-१९५६	आसाम तेल कम्पनी और भारत सरकार के बीच समझौता ।

	खाद्य तथा कृषि मंत्रालय		
२०. कृषि मंत्री	छठा	८-३-१९५४	बर्मा से चावल व्यापार
२१. खाद्य और कृषि मंत्री	चौदहवां	१४-८-१९५६	अनाज की बढ़ती हुई कीमतों को रोकने के उपाय ।
	गृह-कार्य मंत्रालय		
२२. प्रधान मंत्री	द्वितीय	९-१२-१९५२	आंध्र राज्य का निर्माण
२३. गृह-कार्य मंत्री	तीसरा	१५-१-१९५३	—तदेव—
२४. राज्य-सभा के नेता	पांचवां	१५-१२-१९५३	पेप्सू और त्रावणकोर-कोचीन के आम चुनाव
२५. गृह-कार्य मंत्री	पांचवां	२२-१२-१९५३	राज्य पुनर्गठन के लिये आयोग की स्थापना
२६. गृह-कार्य उपमंत्री . . .	पांचवां	२२-१२-१९५४	मनीपुर सत्याग्रह सम्बन्धी स्थिति
२७. —तदेव—	नवम	२२-२-१९५५	आंध्र के चुनाव
२८. गृह-कार्य मंत्री	दसवां	१७-८-१९५५	गोआ सत्याग्रह सम्बन्धी जानकारी ।
	श्रम मंत्रालय		
२९. श्रम उपमंत्री	सातवां	१७-९-१९५४	बैंक अपील सम्बन्धी अपीलीय न्यायाधिकरण के निर्णय का सरकार द्वारा परिवर्तन ।
३०. श्रम उपमंत्री	नवम	४-५-१९५५	सूती कपड़ा उद्योग का वैज्ञानिकन ।
३१. —तदेव— . .	दसवां	२२-८-१९५५	बैंक पंचाट आयोग की सिफारिशों पर सरकार का निर्णय ।

१	२	३	४
३२. उत्पादन मंत्री	उत्पादन मंत्रालय		
३३. —तदेव—	. चौथा	२५-८-१९५३	नई इस्पात परियोजना की स्थापना
	. छटा	१६-२-१९५४	नये इस्पात कारखाने को लगाने का स्थान
३४. पुनर्वास मंत्री	पुनर्वास मंत्रालय		
	. छटा	१५-५-१९५४	पूर्वी बंगाल के विस्थापितों का पुनर्वास
३५. विधि तथा अल्पसंख्यक कार्य मंत्री . .	विधि तथा अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय		
	. तेरहवां	२३-५-१९५६	पूर्वी पाकिस्तान से हिन्दुओं का निष्कासन।

संकल्प (सरकारी तथा गैर सरकारी) जिन पर मई १९५२ से १९५६ तक राज्य-सभा में चर्चा हुई

(क) सरकारी संकल्प

क्रम संख्या	चर्चा वाले दिन की तिथि	संकल्प का विषय	प्रस्तुत करने वाले मंत्री का नाम	विवाद में लगा समय	स्वीकृत हुआ या अस्वीकृत
१	२	३	४	५	६
				घंटे मिनट	
१	१८-७-५२ और २२-७-५२	अस्थाई संसद द्वारा १२ अगस्त १९५० को (राज्य सूची अर्थात् (१) वस्तुओं का व्यापार तथा वाणिज्य और (२) उत्पादन संभरण तथा वितरण में गिनाये गये विषयों के बारे में संविधान के अनुच्छेद २४९(१) के अन्तर्गत संसद की विधियां बनाने की शक्ति के बारे में) पारित संशोधन के प्रवर्तन को १५ अगस्त १९५२ से आगे एक और वर्ष तक जारी रखने का अनुमोदन ।	वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री श्री ति० त० कृष्णमाचारी	२—१५	स्वीकृत
२	७-८-५२	२८ जून १९४८ को ब्रसल्स में अन्तिम रूप में संशोधित साहित्यिक और कला संबंधी कार्यों के संरक्षण के लिये बने कॉवेन्शन का अनुमोदन ।	विधि मंत्री श्री चा० चं० विश्वास	२—३०	स्वीकृत
३	४-१२-५२	प्रति ७५ पौंड पारे पर ३००/- निर्यात शुल्क लगाने वाली सरकारी अधिसूचना का अनुमोदन ।	व्यापार मंत्री श्री करमरकर	१—१५	स्वीकृत
४	१६-१२-५२ और १८-१२-५२	(प्रथम) पंचवर्षीय योजना के सिद्धान्तों, लक्ष्यों और विकास कार्यक्रमों का अनुमोदन ।	प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू	८—३५	स्वीकृत

१	२	३	४	५	६
				घंटे मिनट	
५	२३-३-५३ और २६-३-५३	पैप्सू के सम्बन्ध में राष्ट्रपति की घोषणा का अनुमोदन	राज्यों के मंत्री डा० कैलाशनाथ काटजू	५—३६	स्वीकृत
६	१४-९-५३	पैप्सू के सम्बन्ध में राष्ट्रपति की घोषणा को चालू रखने का अनुमोदन ।	—तदेव—	८—००	स्वीकृत
७	२६-११-५३	कौफी पर ६२-८-० प्रति हंडरवेट निर्यात शुल्क लगाने वाली सरकारी अधिसूचना का अनुमोदन	व्यापार मंत्री श्री करमरकर	१—३५	स्वीकृत
८	८-९-५४	चावल पर २ आने ६ पाई के स्थान पर २० प्रतिशत यथा मूल्य निर्यात शुल्क की वृद्धि करने वाली सरकारी अधिसूचना का अनुमोदन ।	—तदेव—	२—३४	स्वीकृत
९	८-९-५४	मूंगफली के तेल पर ३५०/- प्रति टन निर्यात शुल्क लगाने वाली सरकारी अधिसूचना का अनुमोदन ।	—तदेव—	१—१८	स्वीकृत
१०	२९-११-५४ और ३०-११-५४	राष्ट्रपति की आन्ध्र सम्बन्धी उद्घोषणा का अनुमोदन	गृह-कार्य मंत्री डा० कैलाश नाथ काटजू	६—००	स्वीकृत
११	३-१२-५४ और ६-१२-५४	चाय पर निर्यात शुल्क को ४ आने प्रति पौंड से बढ़ा कर ७ आने प्रति पौंड कर देने वाली सरकारी अधिसूचना का अनुमोदन ।	वाणिज्य मंत्री श्री डी० पी० करमरकर	३—५८	स्वीकृत
१२	२०-१२-५४ और २१-१२-५४	रेलवे उपक्रम द्वारा सामान्य राजस्व को देय लाभांश की दर तथा रेलवे वित्त को सामान्य वित्त से पृथक करने से सम्बन्ध रखने वाले अन्य सहायक मामलों	रेलवे मंत्री श्री लाल बहादुर	४—५०	स्वीकृत

१	२	३	४	५	६
१९	४-९-५६ और ७-९-५६	राष्ट्रपति की त्रावनकोर-कोचीन राज्य सम्बन्वी उद्-घोषणा के प्रवर्तन को जारी रखने का अनुमोदन ।	श्री बी० एन० दातार, गृह-कार्य मंत्रालय में मंत्री	१—४०	स्वीकृति
२०	५-१२-५६	राष्ट्रपति की केरल सम्बन्वी उद्घोषणा का अनुमोदन ।	—तदेव—	१—५६	—तदेव—

ख—[गैर सरकारी सदस्यों के संकल्प]

क्रम संख्या	किस तिथि को संकल्प पर चर्चा की गई	संकल्प का विषय	प्रभारी सदस्य का नाम	वाद-विवाद में कितना समय लगा	सभा द्वारा स्वीकृत हुआ या अस्वीकृत	टिप्पणी
१	२	३	४	५	६	७
				घंटे मिनट		
१	१६-७-५२ और २१-७-५२	आन्ध्र राज्य का निर्माण ।	श्री प्यादा वैंकट नारायण	८—३०	अस्वीकृत	
२	२५-११-५२	भारत के आयात-निर्यात व्यापार का विकर्पण और दीर्घ कालीन व्यापार करार करने के लिये कुछ विदेशी देशों से वार्ता प्रा[illegible] करना ।	श्री पी० सुन्दरय्या	३—		
	२५-११-५२ [illegible]					

४	१५-१२-५२	आज़ाद हिन्द फ़ौज के सदस्यों को भारतीय सेना में खपाना ।	श्री सुरेन्द्र नाथ द्विवेदी	१—१५	—	चर्चा असमाप्त रही । सभा के सत्रावसान पर संकल्प व्यपगत हो गया ।
५	२६-२-५३ और २४-४-५३	विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यों की दशा के सम्बन्ध में जांच करने के लिये एक आयोग की नियुक्ति ।	श्री के० रामा राव	४—३०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
६	२४-४-५३	"लूशाई हिल्स डिस्ट्रिक्ट" का नाम बदल कर "मिज़ोराम" रखना ।	श्री आर० थन्हलिरा	२—३०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
७	२४-४-५३	अखिल भारतीय कृषि वित्त निगम का संघटन ।	श्री एन० जी० रंगा	१—१५	—	चर्चा असमाप्त रही । सभा के सत्रावसान पर संकल्प व्यपगत हो गया ।
८	२८-८-५३ और ११-९-५३	असाध्य रोगों अथवा पागलपन से पीड़ित वयस्कों का बन्ध्यीकरण लागू करना ।	श्रीमती लीलावती मुंशी	५—३०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
९	११-९-५३ और २२-९-५३	बेकारी, अकाल तथा खाद्य न्यूनता के कारण उत्पन्न होने वाली स्थिति का निराकरण ।	श्री पी० सुन्दरय्या	५—३०	अस्वीकृत	
१०	२७-११-५३	दंड प्रक्रिया संहिता तथा भारतीय दंड संहिता के उपबन्धों पर विचार करने और फौजदारी के मामलों के शीघ्र निबटारे को सुनिश्चित बनाने के संशोधनों के सुझाव देने के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	श्री एम० पी० एन० सिन्हा	३—२०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।

१	२	३	४	५	६	७
				घंटे मिनट		
२२	१८-३-५५	हिन्दी टाईप की मशीनों में प्रयुक्त करने के लिये देवनागरी लिपि में एक प्रामाणिक की-बोर्ड तैयार करने और उसे अभिस्वीकार करने के सम्बन्ध में शीघ्र ही कार्यवाही करना ।	डा० रघुवीर सिंह	१—३०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
२३	४-३-५५	जनवरी, १९५० के बाद पाकिस्तान से भारत में प्रव्रजन करने वाले विस्थापित व्यक्तियों को मताधिकार देना ।	श्री विमल कुमार घोष	०—४०	स्वीकृत	
२४	१५-४-५५	मैंगानीज़ उद्योग का राष्ट्रीयकरण	श्री आर० के० मालवीय	२—००	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
२५	१८-३-५५ और १५-४-५५	कोयले की खानों के कार्य में सुरक्षा संबंधी उपायों को सुनिश्चित बनाने के लिये कार्यवाही करना ।	श्री सत्य प्रिय बनर्जी	२—००	अस्वीकृत	
२६	१९-८-५५	देश के सभी औद्योगिक उपक्रमों में लाभ पर एक उच्चतम सीमा निर्धारित करना, जिस की दर बैंक की दर से २ या ३ प्रतिशत से अधिक न हो ।	श्री एस० एन० मजूमदार	३—३०	अस्वीकृत	
२७	१९-८-५५ और २-९-५५	देश में दी जाने वाली प्राथमिक शिक्षा के प्रकार की जांच करने और स्कूल जाने योग्य आयु के सभी विद्यार्थियों को वह शिक्षा उपलब्ध कराने के उपायों की सिफ़ारिशें देने के हेतु एक आयोग की नियुक्ति ।	श्री कन्हैया लाल डी० वैद्य	३—००	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।

१	२	३	४	५	६	७
				घंटे मिनट		
३४	४-५-५६ और १८-५-५६	प्रत्येक व्यक्ति की आय की उच्चतम सीमा २५,००० रुपये प्रति वर्ष निर्धारित करना और केन्द्रीय सरकार के अधीन काम करने वाले किसी भी असैनिक कर्मचारी के लिये उपलब्धियों की उच्चतम सीमा १,८०० रुपये प्रति मास निर्धारित करना ।	श्री बी० के० बनर्जी .	४—१४	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
३५	१८-५-५६	देश के शिक्षा-पाठ्य क्रम में संस्कृत के अध्ययन को उपयुक्त स्थान देना ।	डा० आर० के० मुकर्जी	३—२५	—	—तदेव—
३६	३-८-५६	राष्ट्रीय महत्व के अभिलेखों के परिरक्षण तथा संधारण के प्रश्न की जांच करने के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	डा० रघुबीर सिंह .	२—२०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
३७	३-८-५६ और ३१-८-५६	देश में औद्योगिक तथा कृषि कार्य श्रमिकों की मजूरियों के नये ढांचे की जांच करने के लिये एक मजूरी आयोग की नियुक्ति ।	श्री सत्यप्रिय बनर्जी .	२—१०	अस्वीकृत	
३८	३१-८-५६	द्वितीय पंचवर्षीय योजना की सफल कार्यान्विति में जनता से अधिकतम सहयोग प्राप्त करने के लिये कुछ कार्यवाहियां करना ।	डा० श्रीमती सीता परमानन्द	३—०८	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
३९	७-१२-५६	राष्ट्र-मण्डल से सम्बन्ध विच्छेद .	श्री एस० एन० मजूमदार ।	३—१७	अस्वीकृत	

४०	२३-११-५६	देश में जेल-प्रशासन की समस्या पर विचार करने के लिये एक समिति की नियुक्ति ।	श्रीमती सावित्री देवी निगम ।	४—३०	—	सभा की अनुमति से वापिस लिया गया ।
४१	७-१२-५६	कलकत्ता पत्तन के कार्यों को सुधारने और देश के अयस्क निर्यात को बढ़ाने में सहायता देने के लिये, लोअर हुगली के पश्चिमी किनारे पर एक पूर्णतः यंत्र-चालित कोयला तथा अयस्क पत्तन स्थापित करने की व्यावहारिकता पर विचार करना ।	प्रोफेसर हुमायूं कबीर	१—६०	स्वीकृत	